

अङ्क ७५



सों। सक्पर्व १

महाभारत

भाषा भाष्य-समेत संपादक श्रीपाद दामोदर सातवक्रेकर, स्त्राच्याय मंडल, श्रीध जि. सातास

छपकर तेष्यार है।

- १ आदिपर्व । पृष्ठ संख्या ११२५ मृत्य में आ से ६) क
- २ सभापने । पृष्ठ संख्या ३५६. मूल्य म. आ. सेर) ह
- ३ वनपर्व । पृष्ठ संख्या १५३८ मूल्य मः आ. से ८) है.
- ४ विराटपर्व । पृष्ठ बेख्या २०६ मृत्या मा आ से १॥) ह.
- ५ उच्चोगपर्व । पृष्ठ संख्या ९५३ मृत्या मः सा. से. ६) ह
- द्व भीषमपूर्व । पृष्ठ संस्था ८०० मन्य मा आ से ४) ६
- ्रे द्विणापूर्व विषय (३६६ मुद्य में आ) के
- ८ क्यापूर्व । पृष्ठ संख्या ६३७ मू. में आ० से ३॥) हे

[९] महाभारतको समालाचना

मंत्री - स्वाध्याय मंडल, ओध, (जि. सातारा)



श्री - महर्षि -च्यास-प्रणीत

महाभारत।

(१०) सौप्तिक पर्व।

(भाषाभाष्य समेत)

सम्पादक और प्रकाशक श्रीपाद दामोदर सातवळेकर स्वाध्यायमण्डल, औंध (जि० सातारा)

> संवत् १९८६, शकः १८५१, सनः १९५९,

दक्षतासे सुखपाप्ति।

शक्नोति जीवितुं दक्षो नालसः सुलमेधते । दृश्यन्ते जीवलोकेऽस्मिन्द्क्षाः प्रायो हितैषिणः ॥ सीप्तिकपर्व अ०२।१५ दश्त " दक्ष और उद्योगी पुरुष इस जगत् में सुखसे जीवित रहता है, और आलसी मनु-प्यको कदापि सुख नहीं होता; क्यों कि इस जगत् में प्राय: दक्ष और उद्योगी पुरुपही हित साधन करते हुए दीखते हैं।"

सुदक तथा प्रकाश क -श्रीपाद दामोदर सातवळेकर, स्वाध्याय मंद्रकः; भारतभुद्रणाङ्गय श्रीध (जि. सातारा)



6965.D.

श्री महर्षिच्यासप्रणीतम् ।

महाभारतम्।

सौप्तिक पर्व।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
॥ श्रीवेद्व्यासाय नमः ॥
नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयसुदीरयेत् ॥ १ ॥
सञ्जय उवाच— ततस्ते सहिता वीराः प्रयाता दक्षिणासुत्वाः ।
उपास्तमनवेलायां शिविराभ्याशमागताः ॥ १ ॥
विसुच्य वाहांस्त्वारिता भीताः समभवंस्तदा ।
गहनं देशमासास प्रच्छन्ना न्यविश्वान्त ते ॥ २ ॥
सेनानिवेशमभितो नातिदूरमवस्थिताः ।
निकृत्ता निशितैः शस्त्रैः समन्तात्श्वतविश्वताः ॥ ३ ॥
दीर्धसुद्धं च निःश्वस्य पाण्डवानेव चिन्तयन्।

सान्तिक पर्वमें प्रथम अध्याय। नारायण, नरोत्तम नर और देवी सरस्वतिको नमस्कार कर पश्चात जय इतिहास कहना चाहिये।।

सञ्जय बोले, हे राजा घतराष्ट्र ! तब वे तीनों वीर दुर्योधनके पाससे दक्षिण-की ओरको चले, फिर सन्ध्याके समय देरोंके पास आकर भयसे व्याकल होग- ये, फिर रथोंसे घोडे छोडकर छिपकर हेरोंके पास वैठे, उस समय ये तीनों नीर वाणोंके घानोंसे न्याकुल थे, घोडे थक गये, प्यासके मारे मुख दाल रहे थे, राजाके मरनेसे कोध और ज्ञोकसे न्याकुल थे, तब थोडे समय तक वहां वैठे। (२-३)

පස්සේ එහෙස සමස්ථාපයේ පිළිබෙස සමසේ සහස සහස සහසේ සහසේ සහසේ සහසේ සහස් සහසේ සමසේ සහසේ සහසේ සහසේ සහස් සහස් සහසේ සහස

अनन्तर पाण्डवीकी सेनाका भयानक

866666666666666666666666666666

श्रुत्वा च निनदं घोरं पाण्डवानां जयैविणाम् ॥ ४॥ अनुसारभयाद्गीताः प्राङ्मुखाः प्राद्रवन्धुनः। ते मुहूर्त्तात्ततो गत्वा आन्तवाहाः पिपासिताः ॥५॥ नामृष्यन्त महेष्वासाः क्रोधामर्पवशं गताः। राज्ञो वधेन सन्तशा सुहुर्त्तं समवस्थिताः 11 € 11 धृतराष्ट्र उवाच-अश्रद्धेयमिदं कर्म कृतं भीमेन सञ्जय । यत्सनागायुतप्राणः पुत्रो मम निपातितः 11011 अवध्यः सर्वभूतानां चल्रसंहननो युवा । पाण्डवैः समरे पुत्रो निहतो मम सञ्जय 11611 न दिष्टमभ्यतिकान्तं शक्यं गावल्गणे नरैः। यत्समेख रणे पार्थैः पुत्रो मम निपातितः। 11911 अद्रिसारमयं नूनं हृद्यं मम सञ्जय। हतं पुत्रज्ञतं श्रुत्वा यन्न दीर्णं सहस्रधा 11 80 11 कथं हि वृद्धमिथुनं हतपुत्रं भविष्यति । न ह्यहं पाण्डवेयस्य विषये वस्तुमुत्सहे 11 88 11 कर्ष राज्ञः पिता भृत्वा स्तर्य राजा च सञ्जय ।

शब्द सुनकर उन्होंने जाना कि ये सब हमें मारनेको इधर ही चले आते हैं। तब भयसे व्याकुल होकर ऊंचे और गर्म सांस लेते हुये, पाण्डवोंका विचार करते हुये पूर्वकी ओर मागे। (४-६)

घृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! भीमसेन-ने युद्धमें हमारे पुत्रको मारडाला यह बात सुनकर हमें विश्वास नहीं होता. क्यों कि दश सहस्र हाथियोंके समान बरुवाला तरुण दुर्योधन सीमसेनके हाथसे मारा गया, यह सुनकर हमें निश्रय नहीं होता,क्यों कि उसका शरीर वजने समान था और उसे कोई भी

नहीं मार सकता था। (७-८) हे गालवगण पुत्र! पाण्डवींने दुर्यी-धनको मारडाला यह सुनकर हमें निश्चय होता है कि कोई मनुष्य प्रारब्धको नहीं

नांघ सक्ता।(९)

हे सञ्जय ! सौ प्रत्रोंको भीमसे परा सुन करके मेरा हृदय फट नहीं गया। इससे जानता हूं कि यह पत्थरसे भी अधिक कठोर है, अब हम दोनों बूढों-की क्या दशा होगी ? मैं कदापि ग्रधि-ष्टिरके राज्यमें न रह सर्वृता, हाय ! आप ही राजा और राजाका पिता हो।

शेष्णाय १] १० सेतिस्कर्य ।

प्रेच्ना अञ्चान प्राप्त प्राप्त । १९ ॥

श्रांचाय प्रिर्मि सर्वो स्थित्वा सूर्वित सख्य !

येन प्रज्ञातं प्रिर्मिकेन निहतं मम ॥१३ ॥

कृतं सखं वचस्तस्य विदुरस्य महात्मनः ।

अकुर्वता वचस्तेन मम पुत्रेण सख्य ॥१४ ॥

कथमस्य भविष्यामि प्रेष्यमूनो दुरन्तकृत् ।

कथं भीमस्य वाक्याति श्रोतुं दास्थामि संजय ॥१५॥

अधमण हते तात पुजे दुर्योघने मम ।

कृतवर्मा कृपो द्रोणिः किमकुर्वत सख्य ॥१६ ॥

सख्य उवाच— गत्वा तु नावका राजज्ञातिद्रमबस्थिताः ।

अपद्यन्त चनं घोरं नानाहुमलताइतम् ॥१७ ॥

ते सहूर्त्तं तु विश्रम्य लन्धतोष्ट्रयोच्तमेः ।

स्यास्तमनवेलायां समासेतुं महद्वनम् ॥१८ ॥

नानान्यगणेर्जुष्टं नानापक्षिगणाष्ट्रतम् ॥१८ ॥

नानान्यगणेर्जुष्टं नानापक्षिगणाष्ट्रतम् ॥१८ ॥

नानातोषेः समाक्षीणं नानापुष्पोपशोभितम् ।

पद्मिनीद्यातसंग्रं निलेत्यलसमायुतम् ॥१० ॥

केसे रह्ना १ हे सख्य ! सव पृथ्वीको

अपनी आखामें चलकर राजोंके विरुत्त वचन सत्य हुआ,

दुर्योधनने विदुरको वात कुल न मानी

हसीसे यह आपति आहे ! हे सख्य !

जिसने मेरे सौ पुत्रोको मारा उस

भामसेनके वचनांको में कैसे सह सक्तः

गा १ हे सख्य । जन भीमसेनने हमारे

युत्र दुर्योधनको अपभीसे मारहाला वव

कृपाचार्य, अस्त्रस्यामा और कृतवमीने

अनन्तर चारों ओर देखते हुए

वनमें सुत्रे । (१७—१९)

अनन्तर चारों ओर देखते हुए

प्रविक्य तद्वनं घोरं वीक्षमाणाः समंततः। शाखासहस्रसंछन्नं न्यग्रोधं दहशुस्ततः 11 38 11 उपेख तु तदा राजन् न्यग्रोधं ते महारथाः। दह्यार्द्धिपदां श्रेष्ठाः श्रेष्ठं तं वै वनस्पतिम् ॥ २२ ॥ तेऽवतीर्थे रथेभ्यश्च विप्रमुच्य च वाजिनः। उपस्पृश्य यथान्यायं संध्यामन्वासत प्रभो 11 23 1 ततोऽस्तं पर्वतश्रेष्टमनुप्राप्ते दिवाकरे । सर्वस्य जगतो धात्री शर्वरी समपद्यत ॥ ४४ ॥ ग्रहनक्षत्रताराभिः संपूर्णाभिरलंकतम् । नभोंशुकामिवाभाति प्रेक्षणीयं समंततः 11 74 11 इच्छया ते प्रवल्गंति ये सत्वा रात्रिचारिणाः। दिवाचराश्च ये सत्वास्ते निद्रावशमागताः रात्रिंचराणां सत्वानां निर्घोषोऽभूतसुदारुणः। क्रव्यादाश्च प्रमुदिता घोरा प्राप्ता च कार्वरी तिसन्रात्रिमुखे घोरे दुःखशोकसमन्विताः। कुतवर्मा कृपो द्रौणिरूपोपविविद्युःसमम् तत्रोपविष्टाः शोचन्तो न्यग्रोधस्य समीपतः । तमेवार्थमतिकान्तं क्ररुपाण्डवयोः क्षयम् निद्रया च परीताङ्गा निषेदुर्धरणीतले ।

चलते वीरोंने उस वनमें एक उत्तम जल मरे, उत्तम नीले कमल और सहस्रों सफेद कमल आदि फूलोंसे मरा, एक तालाव देखा और उसीके तटपर अनेक शाखावाला एक वरगदका बृक्ष था, तब वे रथोंसे उत्तर घोडोंको रथसे खोलकर जलर्पर्श करके विधि पूर्वक सन्ध्या करने लगे। तब मगवान सूर्य मी अस्ताचलके शिखरपर पहुंच गए और सब जगतकी माता रात्रि आगई। इस

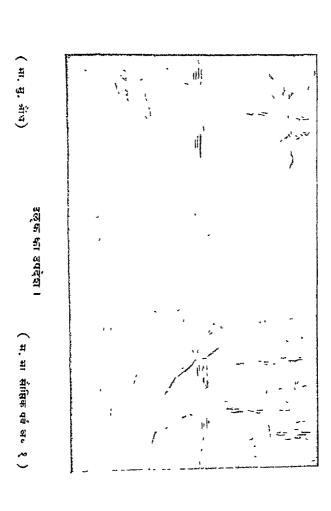
समय नक्षत्र और तारोंसे मरा आकाश ऐसा सुन्दर दीखने लगा, जैसे सफेद विन्दु सहित नीलावस; रात्रिमें घूमनेवाले जन्तु घूमने लगे। और मयानक शब्द करने लगे, मांस खानेवाले जन्तु प्रसन्न होने लगे, दिनमें घूमनेवाले सब सो गये, उस भयानक घोर रात्रिके प्रथम पहरमें शोकसे व्याकुल तीनों वीर एक खानमें वैठकर विचार करने लगे, और उस ही करकर वास्ते को लेने

व्याकुल होगये। (२०-२९)

निद्रासे व्याकुल थे, इसलिय पृथ्वीमें लोट गये, तब सदासे सुख मोगनेवाले, दुःख भोगनेमें असमधै, शोकसे च्याक्रल, उत्तम शय्यामें सोने योग्य महारथ कुपाचार्य और कृतवर्मा, अनाथके समा-न पृथ्वीहीमें सोगये; परन्तु क्रोध भरे अञ्चल्यामाको निद्रा न आई और सां-

प्राचनाय [१० संगिष्ठकाव [१० संगिष्ठकाव विद्या क्षेत्र काट दिया और कार्या प्रस्क कार्य हिस्से केर्य केर्य केर्य कर्य कार्य प्रस्क कार्य हिस्से कर्य हिस्से सेर काट दिये अर्थात निक्रीक प्रसंक कर्य हिस्से सेर कार्य । त्रव्य प्रसंक कर्य हिस्से सेर कर्य हिस्से सेर कार्य । त्रव्य सेर कर्य हिस्से सेर कर्य हिस्से सेर कार्य हिस्से केर्य कर्य हिस्से सेर कार्य हिस्से सेर कार्य हिस्से सेर कार हिस्से सेर कार्य हिस्से सेर कार हिस्से सेर कार्य हिस्से सेर कार हिस्से सेर कार्य हिस्से सेर हिस्से सेर कार हिस्से सेर हिस्से सेर कार हिस्से सेर हिस्से सेर कार कर्य हिस्से सेर कार हिस्से सेर कार हिस्से सेर कार कर्य हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर सेर हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर कार कार हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर कार कार कार हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर कार कार कार हिस्से सेर कार हिस्से सेर कार कर कर हिस्से सेर कार कार हिस्से सेर कार कार हिस्

\ \ \ \ \



छद्मना च भवोत्सिद्धिः शत्रुणां च क्षयो महान्। ततः संशयितादर्थायोऽर्थो निःसंशयो भवेत् ॥ ४९ ॥ तं जना वह मन्यंते ये च शास्त्रविशारदाः। यचाप्यत्र भवेद्वाक्यं गहिंतं लोकनिन्दितम् ॥ ५० ॥ कर्तव्यं तन्मनुष्येण क्षत्रधर्मेण वर्तता। निन्दितानि च सर्वाणि क्रत्सितानि पदे पदे ॥ ५१ ॥ सोपधानि कतान्येव पाण्डवैरकतात्मभिः। अस्मिन्नर्थे पुरा गीताः श्र्यंते धर्मचिन्तकैः श्लोका न्यायमवेक्षाद्भिस्तत्त्वार्थोस्तत्त्वदार्शीभिः। परिश्रान्ते विदीर्णे वा भुञ्जाने वाऽपि श्रृञ्जभिः ॥५३॥ श्रस्थाने वा प्रवेशे वा प्रहर्तेच्यं रिपोर्वेलम्। निदार्तमधेराश्रे च तथा नष्टप्रणायकम 11 88 11 भिन्नयोधं वलं यच द्विधायुक्तं च यद्भवेत्। इत्येवं निश्चयं चक्रे सुप्तानां निश्चि मारणे पाण्ड्रनां सहपाञ्चालैद्रीणपुत्रः प्रतापवान् । स ऋरां मतिमास्थाय विनिश्चित्य सहर्मेहः सप्ती प्रायोधयत्ती तु मातुलं भोजमेव च ।

मा में का में म मेरा काम सिद्ध हो सक्ता है, यद्यपि यह नियम है कि संशयवाले कामोंसे निःस-न्देहं काम करना अच्छा है, महात्माओं-ने यह भी कहा है, कि जगत्में नीच काम करनेसे निन्दा होती है. परन्त क्षत्रियधर्म करनेवालेको चरण चरणपर निन्दित और दुष्ट कर्म करने होते हैं, पाण्डवोंने भी इस युद्धमें अनेक अधर्म करे हैं, महात्माओंने भी ऐसा कहा है कि चाहे शत्र थका हो, चाहे भागता हो, चाहे भोजन करता हो, चाहे चला जाता हो, और चाहे वैठा हो, उसे अवश्य

मारना चाहिये। जिस सेनाका खामी मर गया हो, जिसके दो दुकड़े होगये हो, जो सेना सोती हो उसे रातमें मारना चाहिये । यही तप जान-महात्माओंका सिद्धान्त है। (४५--५५)

ऐसा विचारकर प्रतापवान अश्वतथाः माने पाश्चाल और पाण्डवोंके मारनेके लिये दृष्ट बुद्धि करी, फिर सोते दुए अपने मामा कृपाचार्य और कृतवर्माको जगाया, तब महाबलवान् कृपाचार्य

ती प्रवृद्धी महात्मानी कृप भोजी महावली ॥ ५० ॥
नोत्तरं प्रतिपचेतां तत्र युक्तं हिपाषृती ।
सुम्रहृत्तीसव प्यात्वा वाष्पविह्नसम्प्रविद्धाः ॥ ५० ॥
हता दुर्योधनो राजा एकवीरो महावला ॥ ५० ॥
हता दुर्योधनो राजा एकवीरो महावला ॥ ५० ॥
हता दुर्योधनो राजा एकवीरो महावला ॥ ५० ॥
एकाकी वहिमः क्षुद्रेराहवे शुद्धविकसः ।
पातिनो भीमसेनेन एकाहराचमूपतिः ॥ ६० ॥
एकाकी वहिमः क्षुद्रेराहवे शुद्धविकसः ।
पातिनो भीमसेनेन एकाहराचमूपतिः ॥ ६० ॥
इकोदरेण क्षुद्रेण सुर्द्धशंसीमंदं कृतम् ।
मूर्धाभिषिक्तस्य शिरा पादेन परिस्तृता ॥ ६१ ॥
विनर्द्देति च पाञ्चालाः ध्वेलिति च हसंति च ॥
वमंति शंखान् शत्तरो हृष्टा प्रयतीव ह ॥ ६२ ॥
वादित्रशोधरतुमुलो विमिश्रः शंकानिःस्वनैः ।
वनिल्नेनिरतो योरो दिशः प्रयतीव ह ॥ ६२ ॥
विद्र्शं प्राचीं समाशिख हृष्टानां गच्छतां भृश्वम् ।
रथनेमिस्वनाश्चेव श्रूपने लोमहर्षणाः ॥ ६५ ॥
पांडवैर्धात्तराष्ट्राणां यदिदं कदनं कृतम् ।
वयमेव त्रयाः शिष्टा अस्तिन्महति वैशसे ॥ ६२ ॥
वस्त्रमा वस्त्रमक विवास्कर आंखोंमं आह्र सस्कर अस्वत्यामा कहने लगे, महाचलवान् एक वीर राजा दुर्योधन तोर गये। इन्हींके लिये हम लोगोंसे और पाण्डवीकी वेराक्त शांकि हैं, हो हैं, ये देवो वार्डु से इनके रथोंककर मार हाला, पापी खुद्र भीमसेनने गयारह अक्षीहिणीके खाश्री महाराजके विपारत स्वार हुत ही अन्याय
किर्या उस सेनामेंसे केवल हम तीन किरान्य से सेनामेंसे केवल हम तीन

केचिन्नागदातपाणाः केचित्सर्वास्त्रकोविदाः। निहताः पाण्डवेयैस्ते मन्ये कालस्य पर्ययम् ॥ ६७ ॥ एवमेतेन भाव्यं हि नूनं कार्येण तत्वतः। यथा श्रस्येदशी निष्ठा कृतकार्येऽपि दुष्करे . भवतोऽस्तु यदि प्रज्ञा न मोहादपनीयते । व्यापनेऽस्मिन्महत्यर्थे यन्ना श्रेयस्तदुच्यताम् ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते शतसाहरूमां संहितायां वैयासिक्यां सौक्षिके वर्वणि हो।णिमंत्रवायां प्रथमोऽध्यायः॥ १॥

श्रुतं ते वचनं सर्वं यद्यदुक्तं त्वया विभो। ममापि तु वचः किंचिच्छ्रणुष्वाच महासुज आवद्धा मानुपाः सर्वे निषद्धाः कर्मणोर्द्वयोः । दैवे पुरुषकारे च परं ताभ्यां न विद्यते न हि दैवेन सिध्यंति कार्याण्येकेन सत्तम। न चापि कर्मणेकेन द्वाभ्यां सिद्धिस्तु योगतः ॥ ३॥ ताभ्यामुभाभ्यां सर्वार्था निबद्धा अपमोत्तमाः। प्रवृत्ताश्चैव दृश्यन्ते निवृत्ताश्चैव सर्वशः 11811

केलिंदि निहा एवमे यथा भवत उपाप हित श्रीमह कप उपाप मिला को है से हैं, जो वीर मों किसीको सो हाथीका कोई सर्व ग्रस्त विद्यां के कहा सारा करवा पार कहा कि ने ही जानता था; कि इस फल होगा, निश्चय ही बहुत कठिन है, आप समयमें क्या करना चाहि करनेसे हमारा करवा कि ही बचे हैं, जो वीर मारे गये उनमेंसे किसीको सौ हाथीका बल था, और कोई सब ग्रस्त विद्यांके जाननेवाले थे, देखो समय चडा कठिन है। कोई यह नहीं जानता था; कि इस कामका यह फल होगा, निश्रय ही कर्मीकी गति बहुत कठिन है, आप इस आपत्तिके समयमें क्या करना चाहिये, और क्या कल्याण होगा सो

साप्तिक पर्वमें पहिला अध्याय समास । सीक्षिक पर्वमें दूसरा अध्याय । कृपाचार्य बोलं, तुमने जो कहा सो

इमने सब सुना, अब कुछ इमारे भी वचन सुनो, हे महाबाहो ! सब मनुष्य प्रारब्ध और उद्योगमें बन्धे हैं, केवल प्रारब्धहीसे सब काम सिद्ध नहीं होते, और केवल उद्योगहीसे सब काम सिद्ध नहीं होते, अर्थात् प्रारब्ध और उद्योग इन दोनों ही से काम सिद्ध होते हैं: जगतुमें तीन प्रकारके काम होते हैं, एक उत्तम,दूसरा मध्यम, और तीसरा अधम और तीनों ही काम विना प्रारब्ध सिद्ध नहीं होते। कहीं जो एक काम यहासे सिद्ध होता है, और कहीं वहीं काम उस

पर्जन्यः पर्वते वर्षन्किन्नु साध्यते फलम्। कुछ क्षेत्रे तथा वर्षन्कित्र साधयते फलम 11 9 11 उत्थानं चापि दैवस्य हानुत्थानं च दैवतम्। हपर्थ भवति सर्वत्र पूर्वस्तत्र विनिश्रयः 1 8 11 सुबृष्टे च यथा देवे सम्यक् क्षेत्रे च कर्षिते। बीजं महागुणं भूयात्तथा सिद्धिर्हि मानुषी 11 0 11 तयोदेंवं विनिश्चिख स्वयं चैव पवर्तते। पाज्ञाः पुरुषकारे तु वर्तते दास्यमाश्रिताः 11611 ताभ्यां सर्वे हि कार्यार्थी मनुष्याणां नर्षभ। विचेष्टंतः सा दृश्यन्ते निवृत्तास्तु तथैव च 11 9 11 कृतः पुरुषकारश्च सोऽपि दैवेन सिध्यति । तथाऽस्य कर्मणः कर्त्तुरिभानिर्वर्तते फलम् 11 09 11 उत्थानं च मनुष्याणां दक्षाणां दैववर्जितम् । अफलं हर्यते लोके सम्यगप्युपपादितम् 11 88 11 तत्रालसा मनुष्याणां ये भवन्त्यमनस्विनः। उत्थानं ते विगईति प्राज्ञानां तक्र रोचते 11 82 11 प्रायशो हि कृतं कर्म नाफलं दर्यते सुवि। अकृत्वा च पुनद्गीखं कर्म पर्येन्महाफलम् 11 83 11

जब जित हुये खेतमें मेघ वर्षता है, तब कैसा उत्तम फल होता है, और वही मेघ जब एवंतपर वर्षता है, तो क्या फल होता है? परन्तु दो शित हैं कहीं प्रारच्य ज्योगकी सहायता करता है, और कहीं उद्योग प्रारच्यकी सहायता करता है, पिडतोंने पहिलेको सुख्य माना है; जैसे उत्तम जल वर्षनेसे बीजके गुण बढते हैं, ऐसे ही प्रारच्यकी सहायतासे कर्म करनेसे सिद्धी होती है। (१-७)

उद्योगमें प्रवृत्त होते हैं, महापुरुष होनेपर भी यदि प्रारम्भ छोडकर उद्योग
करना चाँह, तो वह न्पर्थ होजाता है।
अब पण्डित और मुखेंमें केवल इतना
ही भेद दीखता है, कि मुखे आलखके
परनत पण्डित उद्योग करते हैं और
प्रारम्बको मुख्य मानते हैं, जगतमें किये हुये कमका फल अवस्य ही मिलता
है, परनत उत्तम कमके विना किय प्रथान्याय उद्याग है यदि कोई विना वद्योग

चेष्टामक्तवेन लभते यदि किंचियहच्छया। यो वा न लभते कृत्वा दुर्दशौँ ताबुभावपि ॥ १४॥ शकोति जीवितुं दक्षो नालसः सुखमेघते । हर्यंते जीवलोकेऽस्मिन्दक्षाः प्रायो हितैषिणः ॥१५॥ यदि दक्षः समारंभात कर्मणो नाइनते फलम्। नास्य वाच्यं भवेत्किचिल्लब्धव्यं वाऽधिगच्छति ॥१६॥ अकृत्वा कर्म यो लोके फलं विंदति धिष्ठितः। स तु वक्तव्यतां याति द्वेष्यो भवति भूयशः॥१७॥ एवमेतदनाइख वर्तते यस्त्वतोऽन्यथा। स करोत्यात्मनोनधीनेप बुद्धिमतां नयः हीनं प्रस्पकारेण यदि दैवेन वा पुनः। कारणाभ्यामधैताभ्यामुत्थानमफ्लं भवेत् हीनं पुरुषकारेण कर्म त्विह न सिध्यति। दैवतेभ्यो नमस्क्रत्य यस्त्वर्थान्सम्यगीहते दक्षो दाक्षिण्यसंपन्नो न स मोघैर्विहन्यते।

किये प्रारब्धसे कुछ फल प्राप्त करे और जो परिश्रम करनेपर भी फल न पाये, तो इन दोनोंकी निन्दा करनी

विद्यान कर्मते का कारणाभ्यामधैत होनं पुरुषकारेण के कारणाभ्यामधित होनं पुरुषकारेण कारणाभ्यामधित होनं पुरुषकारेण कारणाभ्यामधित कर चाहिये। (८-१४) उद्योगी जगत्में सुखसे जीता और आलसीको सुख नहीं होता, कारणाभ्यामधित कारणाभ्य उद्योगी जगतमें सुखसे जीता है, और आलसीको सुख नहीं होता, क्यों कि जगत्में प्रायः, उद्योगी ही सुखी दीखते हैं, यदि परिश्रमी परिश्रम कर-नेपर भी कुछ फल न पावे, तो उसे पछताना नहीं पडता, अथवा परिश्रमका फल ही होजाता है, जो आलसी विना कर्म किये फल पाते हैं, लोग उसके वि-पयमें अनेक प्रकारकी बात कहते हैं, और बहुत मनुष्य उससे द्वेष भी करते

हैं।(१५-१७)

इसलिये बुद्धिमानोंने यह निश्रय कि-या है, कि इन दोनों विषयोंको छोडकर जो भिन्न प्रकार कार्य करता है,वह अपने लिये अनर्थ बनाता है। यदि मनुष्य केवल प्रारब्ध या कमेंहीको छोडकर कोई कर्मकी सिद्धि करना चाहे तो सि-द्धी नहीं होती, अर्थीत दोनोंहीसे कर्म करनेसे सिद्ध होता है, जो मनुष्य उद्योगको छोडकर सिद्धी चाहता है. उसका फल सिद्ध नहीं होता; जो उद्यो-गी मनुष्य देवतींको नमस्कार करके अत्यन्त विचार पूर्वक उद्योग करता है.

सम्यगीहा पुनीरयं यो बृद्धानुपसेवते 11 28 11 आप्रच्छति च यच्छ्रेय। करोति च हितं वचः। उत्थायोत्थाय हि सदा प्रष्टच्या वृद्धसंमताः ॥ २२ ॥ ते सम योगे परं मुलं तन्सुला सिद्धिरूच्यते। ब्रद्धानां वचनं श्रुत्वा योऽभ्युत्थानं प्रयोजयेत् ॥ २३ ॥ उत्थानस्य फलं सम्यक् तदा स लभतेऽचिरात् । रागात्क्रोधाद्भयास्त्रोभाचोऽर्थानीहति मानवः॥ २४॥ अनीश्रश्रावमानी च स शीघं भ्रश्यते श्रियः। सोऽयं दुर्योधनेनाथीं लुब्धेनादीर्घदर्शिना असमर्थः समारब्धो मूहत्वाद्विचितितः। हितबुद्धीननाहत्य संमंत्र्यासाधुभिः सह ॥ २६ ॥ वार्यमाणोऽकरोद्वैरं पाण्डवैर्गुणवत्तरैः। पूर्वमप्यातिद्वाशीलो न धेर्यं कर्तुमहीत । २७ । तपत्यर्थे विपने हि मित्राणां न कृतं वचः। अनुवर्तामहे यतु तं वयं पापपूरुपम् 11 26 11 असानप्यनयस्तस्मात्प्राप्तोऽघं दारुणो महान्। अनेन तु ममाचापि व्यसनेनोपतापिता 11 99 11

अर्थात् उसका कार्य अनेक विष्न होनेपर सिद्ध होता ही है, अत्यन्त विचारका अर्थ यह है कि बुढोंकी सेवा करना, उनकी सम्मति बुझनी और उनहीं के कहे हुए वचनोंको करना मनुष्यको उचित है, प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर ब्ढोंके पास जाय, क्यों कि ब्रढोंकी सम्मति सुखका मूल है; और उसी स-म्मतिसे कार्यसिद्धी भी होती है,जो मूल-ध्य ऐसा करता है उसकी कार्यसिद्धि अवस्य होती है। (१८-२४)

जो मुखं लोम, मोह, क्रोध और

भयके वश होकर कोई कार्य करना चा-हता है, उस मुर्खकी लक्ष्मी शीघ ही नष्ट होजाती है, सो अद्रदर्शी, लोभी और मूर्ख दुर्योधनने कल्याण करनेवा-लोंके वचनोंका निरादर करके मूर्खीकी सम्मतीसे मुर्खतामें भरकर अनेक वार रोकनेपर भी विना विचारे महात्मा पांण्डवोंसे वैर किया था, परन्तु वह इस कार्यके करनेमें समर्थ न था, यह पहि॰ लेहीसे दुष्टचित्त था, किसीके वच्न नहीं मानता था, अब हम भी उस ही पापी-

erce eau eur eur eur l'eur le construction de la co

वृद्धिश्चित्रयते किंचित् स्वं श्रेयो नाववुध्यते ।

मुद्यता तु मनुष्येण प्रष्टव्याः सुहृदो जनाः ॥ ३० ॥

तत्रास्य वृद्धिर्विनयस्तत्र श्रेयश्च पर्यति ।

तत्रास्य मूलं कार्याणां वृद्ध्या निश्चित्य चै वृधाः॥ ३१ ॥

तेऽत्र पृष्टा यथात्र्युस्तत्कर्तव्यं तथा भवेत् ।

ते वयं धृतराष्ट्रं च गान्धारीं च समेख ह ॥ ३२ ॥

उपष्टव्यामहे गत्वा विदुरं च महामितम् ।

ते पृष्टास्तु वद्युर्यव्ह्रेयो नः समनंतरम् ॥ ३३ ॥

तद्साभिः पुनः कार्यामिति मे नैष्ठिकी मितिः ।

अनारंभानु कार्याणां नार्थः संप्यते कचित् ॥ ३४ ॥

कृते पुरुषकारे तु येषां कार्य न सिद्ध्यति ।

दैवेनोपहतास्ते तु नात्र कार्या विचारणा ॥ ३५ ॥ [१०४]

इति श्रीब्रहाभारते शतसाहरूपां संहितायां धैयासिक्यां साक्षिक पर्वणि

दीणिकुपसंवादे दितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

संजय उनाच — कृपस्य वचनं श्रुत्वा घमीर्थसहितं श्रुभम् । अश्वत्थामा महाराज दुःखद्योकसमन्वितः ॥१॥

भी महाअधमीं और पापी होगये। मैं यही
विचार रहा हूं और इसीसे मेरी छुदी
इस समय नष्ट होगई है, क्या करना
चाहिये यह कुछ नहीं जान पडता
और यह भी नियम है कि जब मलुष्यकी खुद्धि नष्ट होजाय तब उसे अपने
मित्रोंसे सम्मति पूंछनी चाहिये, क्यों
कि ऐसे समयमें वे ही उसका कल्याण
कर सकते हैं, पण्डितों ने ऐसा कहा है,
कि उस समय यथार्थ मित्र जैसा कहै
वैसाही करना उचित है। इस लिये
हमारी खुद्धिमें ऐसा आता है, कि यहाँसे चलकर महाराज धतराष्ट्र, गान्धारी

और महातमा निदुरसे यह युचान्त कहैं, किर ने लोग जैसा कहेंगे, नैसाही करनेमें हमारा कल्याण होगा, क्यों कि निना उद्योग किये कहीं फल प्राप्त नहीं होता। यदि उद्योग करनेपर कार्य सि-दि न होय तो उसमें मनुष्यका कुछ दोप नहीं और उसे ही प्रारम्भ कहते हैं। (२५—३५) [१०४]

सादितक पर्वमें दूसरा अध्याय समाम । सादितक पर्वमें तीसरा अध्याय !

सञ्जय बोले, हे महाराज ! कृपान् चार्यके अर्थ और धर्मसे मरे उत्तम व-चन सुनकर जलती हुई अप्रिके समान

द्ह्यमानस्तु शोकेन प्रदीप्तेनाग्निना यथा। क्रं मनस्ततः कृत्वा तावुभी पत्यभाषत 1) ? 11 पुरुषे पुरुषे बुद्धियों या भवति शोभना। तुष्यंति च पृथक् सर्वे प्रज्ञया ते स्वया स्वया ॥ ३॥ सर्वो हि मन्यते लोक आत्मानं बुद्धिमत्तरम् । सर्वस्यात्मा बहुमतः सर्वोऽऽत्मानं प्रशंसति सर्वस्य हि स्वका प्रज्ञा साधुवादे प्रतिष्ठिता। परवृद्धिं च निन्दन्ति स्वां प्रशंसीति चासकृत् ॥ ५ ॥ कारणान्तरघोगेन योगे येषां समा गतिः। अन्योन्येन च तुष्यन्ति बहु मन्यंति चासकृत्॥ ६॥ तस्यैव तु मनुष्यस्य सा सा बुद्धिस्तदा तदा । कालयोगे विषयीसं प्राप्यान्योन्यं विषयते विवित्रत्वात् वित्तानां मनुष्याणां विशेषतः। चित्तवैक्कव्यमासाच सा सा बुद्धिः प्रजायते यथा हि वैद्यः क्रशलो ज्ञात्वा व्याधि यथाविधि । भैषड्यं कुरुते योगात्प्रश्रमार्थमिति प्रभो एवं कार्यस्य योगार्थं बुद्धिं कुर्वन्ति मानवाः।

क्रोधर्मे भरकर मनको द्षित करके अश्व-त्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मासे बोह्रे।(१—२)

हम यह जानते हैं, कि जगत्में सव मनुष्योंकी बुद्धि अलग अलग होती है, और सब लोग अपने अपनेको महाबु-द्धिमान जानकर अपनी अपनी प्रशंसा किया करते हैं। और अपने अपने को बढा समझते हैं सब लोग अपनी अप-नी बुद्धिको साधु कहते हैं, परन्तु जो कारण और समयके अनुरोधसे अनेक प्रकारकी बुद्धियोंमेंसे एक बुद्धिको स्थिर करता है, और जो द्सरोंकी सम्मित सुनकर प्रसन्न होता है, उसहीका कार्य सिद्ध होता है, भनुष्योंके चित्रकी दृष्टि अलग अलग होती है, इसी लिये समय समयपर व्याकुल होकर अनेक अनेक प्रकारकी सुद्धि उत्पन्न होती है। जो अपनी स्थिर करी हुई बुद्धिको छोड कर द्सरेकी सम्मित्योंको स्वीकार करता है। उसकी बुद्धि अनेक प्रकारकी बुद्धियोंसे नष्ट होजाती है, (ह—८)

जैसे वैद्य अत्यन्त सावधान होकर चिकित्सा करता है, और रोगको श्वान्त श्वाचाय ३ । १० वैशिक्ववं। १७ विश्वच्या प्रशासात्र निन्दिन मानवाः ॥१०॥ अन्यया योवने मत्यां वुष्या भवित मोहितः। मध्येऽन्यया जारायां तु सोऽन्यां रोचयते मतिम् ॥११॥ व्यस्तं वा महाघोरं समृद्धिं वापि ताहरोाम् । अवाण्य पुरुषो भोज कुरुते बुद्धिकृतम् ॥१२॥ एकसिन्नेव पुरुषे सा सा बुद्धिस्तदा तदा। भवत्यकृतधर्मत्वात्सा तस्यैव न रोचते ॥१३॥ तिश्वत्य तु यथाम्त्रं यां मितें साधु पर्यति । तया प्रकुरुते भावं सा तस्योवोगकारिका ॥१४॥ सर्वो हि पुरुषो भोज साध्वेतिदिति निश्चिताः। कर्तुमारभते भीतो मरणादिषु कर्मसु ॥१५॥ सर्वे हि बुद्धिमाञ्चाय प्रज्ञां वापि स्वकां नराः। चेष्टन्ते विविधां चेष्टां हितमित्येव जानते ॥१६॥ युवयोस्तां प्रवक्ष्यामि मम शोकविनाशिनीम् ॥१७॥ युवयोस्तां प्रवक्ष्यामि मम शोकविनाशिनीम् ॥१७॥ अञ्ज्ञी नहीं रुगते । व्यस्तरे हे । युवा अवस्थामें मम शोकविनाशिनीम् ॥१७॥ अञ्ज्ञी नहीं रुगते । व्यस्तरे हे कृतवर्भन् । वव स्वस्तरे हे । युवा अवस्थामें मन्या विविधां करती है, तय वदी बुद्धि निरुष्ते जला करती है, वे कृतवर्भन् । वव स्वस्तरे हे स्वस्तरे हे स्वस्तरे विविधां करती है, वर्षे विविधां करती है, वर्षे वर्

प्रजापतिः प्रजाः सृष्टा कर्म तासु विधाय च । वर्णे वर्णे समाधते होकैकं ग्रणभारगुणम् ब्राह्मणे वेदमञ्चं तु क्षत्रिये तेज उत्तमम् । दाक्ष्यं वैद्ये च द्राद्वे च सर्ववणीनुकूलताम् अदान्तो ब्राह्मणोऽसाधुर्निस्तेजाः क्षत्रियोऽधमः। अदक्षो निंचते वैद्यः शुद्ध प्रतिकृलवान् ॥ २०॥ सोऽसिं जातः क्रले श्रेष्ठे ब्राह्मणानां सुपूजिते । मन्द्रभाग्यतयाऽस्म्येतं क्षत्रधर्ममनुष्टितः क्षत्रधर्भे विदित्वाऽहं यदि ब्राह्मण्यमाश्रितः। प्रक्रयां सुमहत्कर्म न मे तत्साधुसंमतम् धारयंश्च धनुर्दिच्यं दिच्यान्यस्त्राणि चाहवे । पितरं निहतं दृष्ट्वा किं नु वश्यामि संसदि सोऽहमच यथाकामं क्षत्रधर्मसुपास्य तम् । गन्ताऽसि पदवीं राज्ञः पितुश्चापि महात्मनः ॥२४॥ अच स्वप्सानित पाञ्चाला विश्वस्ता जितकाशिनः। विमुक्तयुग्यकवचा हर्षेण च समन्विताः 11 24 11

सृष्टि बनाई थी तब ही उन्होंने सुब वर्णोंके कर्म भी अलग अलग बना दिये थे; और सबमें एक एक गुण भी दे दिया था। ब्राह्मणोंको वेद पढना, क्षत्रि-योंको तेज बढाना, वैश्योंको धन कमा-ना और शहोंको सबकी सेवा करनी। जो ब्राह्मण इन्द्री न जीत सके, जो क्षत्री तेजसी न हो, जो वैदय धन न वढा सके और जो शुद्र इनकी सेवा न करे, तो इन सबकी निन्दा करनी चाहि-ये। यदि आप मैं जगत्प्रित ब्राह्मण वंशमें उत्पन्न हुआ हूं, परन्तु अभाग्य

रहा हूं, सो आपित्तमें इस क्षत्रिय घर्मको धारण करके भी अब छोड दूं, और बाह्मणोंका धर्म करने छगूं तो अच्छा नहीं, यह दिच्य घतुप और इन दिच्य बाणोंको धारण करके भी यदि पिताके मारनेका बदला न छूं, तो महात्माओं में बैठकर क्या कहंगा ? (१७-२३)

अव में क्षत्रिय धर्मका आश्रय लेकर अपने पिता और महाराजके पास खर्म-में जाऊंगा, इस समय निजयी पाञ्चाल सेना थककर विजय पाकर कवच खो-लकर अत्यन्त विज्वासपूर्वक सो रही है, सो अमी में डेरोंमें घुसकर भृतके समान जयं मत्वाऽऽत्मनश्चेव श्रान्ता व्यायामकर्षिताः। तेषां निशि प्रसुप्तानां सुस्थानां शिषिरे स्वके ॥ २६ ॥ अवस्कन्दं करिष्यामि शिविरस्याच दुष्करम्। तानवस्कन्य शिविरे प्रेतभूतानचेतसः सुद्यिष्यामि विकम्य मधवानिव दानवान् । अच तान्सहितान्सर्वान् धृष्टद्युम्नपुरोगमान् ॥ २८॥ सुद्यिष्यामि विक्रम्य कक्षं दीप्त इवानलः। निहत्य चैव पाश्चालान् शान्ति लन्धाऽसि सत्तम ॥२९॥ पाश्चालेषु भविष्यामि सृद्यन्नय संयुगे। पिनाकपाणिः संकुद्धः स्वयं रुद्रः पञ्जाध्विव अद्याहं सर्वेषाञ्चालानिहत्य च निकृष्य च। अर्दियिष्यामि संहष्टो रणे पाण्डसुतांस्तथा अचाहं सर्वपञ्चालैः कृत्वा भूमिं शरीरिणीम् । प्रहृत्यैकैक शस्तेषु भविष्याम्यन्णः पितः ॥ ३२ ॥ दुर्योधनस्य कर्णस्य भीष्मसैन्धवयोरपि । गमयिष्यामि पाञ्चालान्पद्वीमय दुर्गमाम् ॥ ३३ ॥ अद्य पात्रालराजस्य घृष्टसुम्नस्य वै निशि । न चिरात्प्रमाथिष्यामि पशोरिव शिरो बलात् ॥ ३४॥ अद्य पाञ्चालपाण्ड्रमां शयितानात्मजान्निशि ।

उनका नाश कर द्ंगा आज में घृष्टद्यु-मादि सब क्षत्रियोंको इस प्रकार मारूंगा, जैसे इन्द्र दानवोंको मारता है। आज डेरोमें घुसकर इस प्रकार क्षत्रियोंको मारूंगा, जैसे बढी हुई अग्नि स्खे काठ-को जलाती है, आज पाश्चालींका नाश करके ही शान्त होऊंगा।(२४-२९) ं आज युद्धमें मैं पाञ्चालोंके लिये ऐ-सा भयानक बन्गा, जैसे प्रलयकालमें

पाञ्चाल और पाण्डवोंको मारकर प्रसन्न होकर ६घर उधर खींचता फिरूंगा, आज पाञ्चालोंके श्रीरमें पृथ्वीको पूर्ण करके पिता, राजा दुर्योधन, कर्ण, भीष्म और जयद्रथादिके ऋणसे छुट्टंगा, आज पाश्चालोंको दुर्लम स्थान दिखाऊंगा, आज पाञ्चालदेशीय महाराज पृष्टचुम्न-का शिर अपने वलसे ऐसा काट्रंगा जैसे काई पश्का काटता है।(३०-३४)

खड्डेन निशितेनाजौ प्रमधिष्यामि गौतम अय पाञ्चालसेनां तां निहत्य निशि सौप्तिके। कृतकूलः सुखी चैव भविष्यामि महामते ॥ ३६ ॥[१४०]

इति श्रीमहाभारते शतसःहरूपां संहितायां वैयासिक्यां साध्तिके पर्वणि द्रौणि-मंत्रणायाम् तृतीयोऽध्यायः॥ ३ ॥

कृप उवाच --

दिष्टया ते प्रतिकर्तव्ये मतिर्जातेयमच्यत । न त्वां वारियतं शक्तो वज्रपाणिरपि स्वयम् अनुयास्यावहे त्वां तु प्रभाते सहितावभौ। अय रात्रौ विश्रमस्व विमुक्तकवचध्वजः 11 ? 11 अहं त्वामनुयास्यामि कृतवर्मा च सात्वतः। परानभिमुखं यातं रथावास्थाय दंशितौ 11 \$ 11 आवाभ्यां सहितः शत्रून् श्वो निहन्ता समागमे । विक्रम्य रथिनां श्रेष्ठ पाञ्चालान्सपदानुगान् ॥ ४ ॥ शक्तस्त्वमसि विक्रम्य विश्रमस्य निशामिमाम्। चिरं ते जाग्रतस्तात स्वप तावन्निशामिमाम् विश्रान्तश्च विनिद्रश्च स्वस्थचित्तश्च मानद । समेख समरे राजून्वधिष्यसि न संश्वायः 11 6 11

ञ्चाल और पाण्डवॉके बालकोंके शिर मेरे तेज घारवाले खड्गसं कटेंगे। हे महाबुद्धिमन् ? आज समस्त सोते हुए पाञ्चालोंको रातमें मारकर में सुखी और कृतकृत्य हंगा। (३५-३६)

सादिक वर्षमें सीसरा अध्याय समाप्त ।

म प्राप्त के स्वाप्त साप्तिकपर्वमें चाथा अध्याय । कुपाचार्य बोले, हे बीर! आज प्रार-व्धहीसे तुम्हें ऐसी बुद्धि उत्पन्न हुई। तुम्हें साक्षात् बज्जधारी इन्द्र भी युद्धमें नहीं रोक सक्ता, परन्तु इमारी बुद्धिमें यह आता है कि इस समय तम कवच

खोलकर, रथसे ध्वजा उतारकर सो रही। प्रात:काल होते ही हम कृतवमी तुम्हारे सङ्ग चलेंगे और सब शत्रुओंका नाश करेंगे।(१--३)

हे महारथ ! तुम हमारी सहायतासे सेना सहित पाश्चालराजको मारियो, तुम सन कुछ करनेमें समर्थ हो, परन्तु कई दिनसे जाग रहे हो, इसलिये इस समय सो रहो। जब तुम्हारा परिश्रम दूर हो-जायमा और सोनेके कारण चित्त साव-धान हो जायगा। तब हम लोगोंकी सहायतासे तम निःसन्देह

न हि त्वां रथिनां श्रेष्ठं प्रगृहीतवरायुधम्। जेतुमुत्सहते शश्वद्पि देवेषु वासवः 11 9 11 कृपेण सहितं यान्तं ग्रुप्तं च कृतवर्मणा। को द्रौणि युधि संरब्धं घोषघेदपि देवराट् ते वयं निशि विश्रान्ता विनिद्रा विगतज्वराः। प्रभातायां रजन्यां वै निहनिष्याम शात्रवात ॥ ९॥ तव श्रुक्ताणि दिव्यानि मम चैव न संशयः। सात्वतोऽपि महेष्वासो निलं युद्धेषु कोविदः ॥ १०॥ ते वयं सहितास्तात सर्वीन् शत्रून्समागतान्। पसद्य समरे इत्वा पीतिं प्राप्स्याम पुष्कलाम् ॥११॥ विश्रमस्य त्वमव्यग्रा स्वप चेमां निशां सुखम्। अहं च कृतवर्मा च त्वां प्रयान्तं नरोत्तमम् ॥ १२ ॥ अनुयास्याव सहितौ धन्विनौ परतापनौ। रथिनं त्वरया यान्तं रथमास्थाय दंशितौ स गत्वा शिविरं तेषां नाम विश्राव्य चाहवे। ततः कर्ताऽसि राज्ञ्णां युध्यतां कदनं महत्॥ १४ ॥ कृत्वा च कद्नं तेषां प्रभाते विमलेऽहनि । विहरस्व यथा शकः सुद्यित्वा महासुरान् ॥ १५॥

नाश करोगे, जब तुम स्थपर बैठकर धनुप धारण करोगे, तब साक्षात् इन्द्र भी तुमको नहीं जीत सकेंगे, जब कृपाचार्य और कृतवमी तुम्हारी रक्षा करेंगे, तब साक्षात् इन्द्रकी क्या शक्ती है, जो तुमसे युद्ध कर सके ? (४–८)

इसिलिये अब हम लोग रात्रिभर सोवें और प्रातःकाल होते ही घोर युद्ध करें-गे, और इनको मारेंगे, इसनें सन्देह नहीं तुम्हारे पास सब दिन्य बाण हैं, और कृतवर्मी भी महाधतुपधारी और सब प्रकारकी युद्धविद्या जाननेवाले हैं, सो हम तीनों मिलकर प्राताकाल श्रञ्जोंसे युद्ध करेंगे, और युद्धमें श्रञ्जोंको भारकर अत्यन्त प्रसन्न होंगे। (९-११)

अब तुम सावधान होके इस समय
सो रहो, प्राताकाल होतेही हम और
कृतवमी दोनों धनुष धारण करके उत्तम
रथोंपर चढकर तुम्हारे सङ्ग चलेंगे, और
युद्ध करते हुए यञ्जओंको अपना नाम
सुनाकर मारेंगे, फिर उनको निर्मेल दिनमें मारकर तुम इस प्रकार सुख कीजि-

त्वं हि शक्तो रणे जेतुं पात्रालानां वरूथिनीम्। दैत्यसेनामिव कुद्धः सर्वदानवसूदनः 11 84 11 मया त्वां सहितं संख्ये गुरं च कृतवर्मणा । न सहेत विशुः साञ्चाद्वज्रपाणिरपि खयम् न चाहं समरे तात कृतवर्मा न चैव हि। अनिर्जित्य रणे पांडूज च यास्यामि कर्हिचित्॥ १८॥ हत्वा च समरे कुद्धान्पश्चालान्पांडुभिः सह। निवर्तिष्यामहे सर्वे हता वा स्वर्गेगा वयम् सर्वीपायैः सहायास्ते प्रभाते वयमाहवे। सत्यमेतन्महावाहो प्रज्ञवीमि तवानघ 11 90 11 एवमुक्तस्ततो द्रौणिर्मातुलेन हितं वचः। अव्रवीन्मातुलं राजन् क्रोघसंरक्तलोचनः 11 38 11 आतुरस्य कुतो निद्रा नरस्यामर्षितस्य च। अर्थार्श्चितयतश्चापि कामयानस्य वा पुनः। तदिदं समनुपारं पर्य मेऽय चतुष्ट्यम् 11 22 11 पइय भागचतुर्थों में स्वप्नमह्वाय नादायेत्। किं नाम दुःखं लोकेऽसिन्पितुर्वधमनुस्मरन् ॥ २३॥

ए जैसे दानवोंको मारकर इन्द्रः जैसे इन्द्र कोध करके दानवींके मारनेमें सम र्थ हैं, ऐसेही तुम सब पाञ्चालोंको मार-नेको समर्थ हो, हे वीर ! जब हम और कृतवर्मा तुम्हारी युद्धमें रक्षा करेंगे, तब साक्षात इन्द्र भी तुन्हें नहीं जीत सक्ते. हम तुमसे सत्य कहते हैं कि हम और कृतवर्मा शञ्जवोंको विना जीते युद्धसे न हटेंगे, अवस्य ही पाञ्चाल और पाण्डवों-को मारेंगे, अथवा उनके हाथसे मरकर स्वर्गको जांयगे। (१२--१९)

सव प्रकारसे प्रातःकाल तुम्हारी सहाय-ता करेंगे । अपने मामाके ऐसे कल्याण भरे वचन सुन अश्वत्थामाके नेत्र क्रोध से लाल होगए, और ऐसा वचन बोले, रोगी और क्रीधमरे मनुष्यको, अर्थ चिन्ता न करनेवालेको और कामीको निद्रा कहां ? आज हमको भी वही समय आगया है, अब इस युद्धमें केवल मेरा ही चौथा माग छेप है, इसीसे मेरी निद्रा नष्ट होगई। (२०-२३)

हाय ! द्रोणाचार्य मारे गये, मैंने प्रसम

हृद्यं निर्देहन्मेऽच रात्र्यहानि न शाम्यति। यथा च निहतः पापैः पिता मम विशेषतः प्रत्यक्षमपि ते सर्वं तन्मे मर्गाणि क्रन्तति ! कथं हि मारशो लोके मुहर्तमपि जीवति 11 24 11 द्रोणो हतेति यद्वाचः पश्चालानां श्रृणोम्यहम् । धृष्टगुम्नमहत्वा तु नाहं जीवितुमुत्सहे ॥ २६ ॥ स मे पितुर्वेधाद्वध्यः पात्राला ये च संगताः। विलापो भग्नसक्थस्य यस्तु राज्ञो मया श्रुतः॥ २७॥ स पुनर्हद्यं कस्य क्र्रस्यापि न निर्देहेत्। कस्य ह्यकरुणस्यापि नेत्राभ्यामश्रुना ब्रजेत् ॥ २८ ॥ नृवते भेग्नसक्थस्य श्रुत्वा ताद्यवचः पुनः। यश्चायं मित्रपक्षों में मिय जीवति निर्जितः ॥ २९॥ शोकं मे वर्धयसेष वारिवेग इवार्णवम् । एकाग्रमनसो मेऽच क्रतो निद्रा क्रतः सुखम् ॥ ३० ॥ वासुदेवार्जुनाभ्यां च तानहं परिरक्षितान्। अविषद्यतमानमन्ये महेन्द्रेणापि सत्तम न चापि शक्तः संयन्तं कोपमेतं सम्रुत्थितम् ।

इससे अधिक दुःख और जगतुमें क्या होगा ? आपके देखते देखते इन पापियोंने मेरे पिताको कैसे मारा? यह स्मरण करके मेरा हृदय रातदिन जला करता है, आ-पके देखते देखते हमारे पिताका जैसा निरादर हुआ, सो स्मरण करके मेरे शरी-रके मर्मस्थान फटे जाते हैं, मुझ ऐसे मनुष्यको एक महर्त्तभर भी जीना उचित नहीं, मैं विना धृष्टशुस्नके मारे जी नहीं सक्ता। (२३-२६)

ः इसने मेरे पिताको मारा है, इसलिये

. सङ्गियोंको भी मारूंगा देखो जङ्घा ट्रटे राजा हमारे आगे कैसे रोवे थे, जगतमें ऐसा कौन कठोर होगा, कि राजाके वचन सुनकर, जिसका हृदय न जलने लगे ? आंखोंसे आंस न आजाय ? मेरे जीते जी मित्रका नाश होगया, यह स्मरण करके मेरा शोक ऐसे बढता है, जैसे अधिक जल होनेसे सम्रद्रकी तरङ्ग। मेरा चित्त इस समय एकाग्र है, तब निद्रा और सख कहां १ (२७-३०)

उनकी कृष्ण और अर्जुन स्था करते

तं न पर्वामि लोकेऽस्मिन्यो मां कोपान्निवर्त्तयेत ॥३२॥ तथैव निश्चिता बुद्धिरेषा साधु मता मम। वार्तिकैः कथ्यमानस्तु मित्राणां मे पराभवः ॥ ३३ ॥ पाण्डवानां च विजयो हृद्यं दृहतीव मे । अहं तु कदनं कृत्वा रात्रूणामय सौधिके ॥ ततो विश्रभिता चैव स्वप्ता च विगतज्वरः ॥ ६४ ॥ [१७४]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरू-यां संहितायां वैयासिक्यां साक्षिके पर्वणि द्राणिप्रंत्रणायां चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

कृप उवाच-

शुश्रुषुरपि दुर्भेधाः पुरुषोऽनियनेन्द्रियः । नार्लं वेदियतुं कृत्स्नौ धर्मार्थाविति मे मितः ॥१॥ तथैव तावनमेषावी विनयं यो न शिक्षते। न च किञ्चन जानाति सोऽपि धर्मार्थनिश्चयम् ॥ २॥ चिरं हापि जडा शूरः पंडितं पर्यपास्य हि । न स धर्मान्विजानाति दवीं सूपरसानिव 11 \$ 11 सुहूर्त्तमिष् तं प्राज्ञः पंडितं पर्युपास्य हि । क्षिप्रं धर्मान्विजानाति जिह्ना सूपरसानिव 11811 शुश्रुषुस्त्वेव मेघावी पुरुषो नियतेन्द्रियः। जानीयादागमान्सर्वान् ग्राह्यं च न विरोधयेत्॥ ५॥

जीत सक्ता, मैं इससे अपने क्रीयकी रोक नहीं सकता और जगत्में किसीको ऐसा भी नहीं देखता जो इसे ज्ञान्त कर सके। मैंने उस समय मनुष्योंके मुखसे यह सुना है कि मेरे मित्र दुर्थों-धनका निरादर हुआ इसलिये मैंने आप से जो कुछ कहा वही निश्चय है, पाण्ड-चोंकी विजय ही सुनकर मेरा हृद्य जला जाता है, अब मैं चत्रओंका नाश करके ही सावधान होकर ख़खसे सोऊं-गा। (द्वा-३४)

सादितक पर्वमें ५ जम अध्याय ।

कृपाचार्य बोले, मूर्खको कितना है। समुझाओ तौ भी वह नहीं समझता, हमारी बुद्धिमें ऐसा आता है, कि जिस मनुष्यके वश्रमें इन्द्री नहीं होती, वह पूरी रीतिसे अर्थ और धर्मके जाननेमें समर्थ नहीं होता, इसी प्रकार महाबुद्धिः मान भी नम्रताके मारे, दूसरे प्रकारकी शिक्षा ही नहीं सुनता। इसी लिये यह मी पूर्ण रीतिसे धर्म और अर्थके विष-योंको नहीं जान सक्ता । यदि मूर्ख

ecanneccanagaseaseaseaga9933880999 अद्य खप्स्यान्ति पञ्चाला विमुक्तकवचा विभो । विश्वस्ता रजनीं सर्वे प्रेता इव विचेतसः 11 88 11 यरतेषां तदवस्थानां दुश्चेत पुरुषोऽनुजुः । व्यक्तं स नरके मज्जेदगाधे विपुलेऽप्रवे 11 88 11 सर्वास्त्रविद्वपां लोके श्रेष्ठस्त्वमसि विश्रुतः। न च ते जातु लोकेऽस्मिन्सुसूक्ष्ममपि किल्विपम् ॥१५॥ त्वं पुनः सूर्येसङ्कादाः श्वोभूत उदितं रवौ । प्रकाशे सर्वभूतानां विजेता युधि शात्रवान् ॥ १६ ॥ असम्भावितरूपं हि त्विय कर्म विगर्हितम् । शुक्ले रक्तमिव न्यस्तं भवेदिति मतिर्भम अश्वत्थामीवाच-एवमेव यथाऽऽत्थ त्वं मातुलेह न संशयः। तैस्त पूर्वमयं सेतः शतधा विद्लीकृतः प्रत्यक्षं भूमिपालानां भवतां चापि सन्निधी। न्यस्तशस्त्रो मम पिता धृष्टसुन्नेन पातितः कर्णश्च पतिते चक्रे रथस्य रथिनां वरः। उत्तमे व्यसने मग्नो हतो गाण्डीवधन्वना 11 20 11

ऐसे मतुष्योंको मारना धर्म नहीं। इस समय सब पाश्चाल विश्वास सहित कवच खोलकर प्रेतके समान अचेत सो रहे हैं, जो पापी मूर्ख इस समय उनसे द्रोह करेगा वह अवश्य ही अपार घोर नरकमें जायगा। (७-१४)

हमारी यह इच्छा है कि तुम सब शक्त जाननेवाले और प्रसिद्ध नीर हो, तुम्हे जगतमें थोडा भी कलङ्क न लगने पाने । प्रातःकाल होते ही तुम सूर्य के समान तेज धारण करके सब शञ्जओंको जीतियो, यदि तुम सेते पाश्चालोंको मारोगे तो तुम्हारे जीवनमें ऐसा कलङ्क लग जायगा, जैसे सफेद वस्त्रमें लाल रङ्गका धन्या। (१५---१७)

अक्ष्यत्थामा बोले, हे मामा ! आपने जो कहा वह सब वैसे ही है, इसमें कुछ सन्देह नहीं, परन्तु पाण्डवोंहीने पहिले इस धर्मरूपी पुलको काटकर सैकडों इकडे कर दिये हैं, अनेक राजा और आपके देखते देखते क्षत्रराहित हमारे पिताको धृष्टसुम्नने मार डाला। जिस समय महारथ कर्णका पहिया पृथ्वीमें घुस गया था और वे उसके निकालनेमें महापरिश्रम कर रहे थे उसी समय अर्जु-नने उन्हें मारडाला, शिखण्डीको आगे

तथा शांतनवो भीषमो न्यस्तशस्त्रो निरायुषः। शिखण्डिनं पुरस्कृत्य हतो गाण्डीवधन्वना ॥ २१ ॥ भूरिश्रवा महेच्वासस्तथाप्रायगतो र्णे। कोशतां भूमिपालानां युयुधानेन पातितः दुर्योधनश्च भीमेन समेख गद्या रणे ! पद्यतां भूमिपालानामधर्मेण निपातिनः 11 23 11 एकाकी बहुभिस्तत्र परिवार्य महारथै:। अधर्मेण नरव्याघो भीमसेनेन पातितः 11 88 11 विलापो भग्नसक्थस्य यो मे राज्ञः परिश्वतः। वार्तिकाणां कथयतां स मे मर्माणि कुन्तति ॥ २५ ॥ एवं चाधर्मिकाः पापाः पात्राला भिन्नसेतवः। तानेवं भिन्नमयौदानिक भवान्न विगर्हति पित्हन्तृनहं हत्वा पाञ्चालानिश्चि सौप्तिके। कामं कींटः पतङ्गो वा जन्म प्राप्य भवामि वै ॥ २७ ॥ त्वरे चाहमनेनाय यदिदं मे चिकीर्षितम्। तस्य मे त्वरमाणस्य कृतो निद्रा क्रुतः सुखम्॥ २८॥ न स जातः पुमाँछोके कश्चित्र स भविष्यति। यो मे व्यावर्त्तयेदेतां वधे तेषां कृतां मतिम् ॥ २९ ॥

सञ्जय उवाच — एवमुक्त्वा महाराज द्रोणपुत्रः प्रतापवात् ।

Seccession of the state of the करके अर्जुनने शस्त्रहित मीष्मको मारा, महाशस्रधारी भूरिश्रवाको वर्तेम पैठै देखकर भी अनेक राजांके रोकनेपर भी सात्यकीने मार डाला । भीमसेनने गदा-युद्धमें अधर्मसे राजाको मारा और उनके शिरपर पैर रक्खा, देखो अनेक महार-थाँने मिलकर प्ररुपसिंह महाराजको मरवा दिया, जांघ टूटे राजा मेरे आगे कैसे रोते थे, यह स्मरण करके मेरे शरीर जले जाते हैं: ऐसे पापी पाश्चाल

धर्मके छोडनेवालोंकी निन्दा करते नहीं और हमारी निन्दा करते हो । चाहे मैं अगले जन्ममें कीडा हूं, चाहे पतङ्गा वन्ं परन्तु अपने पिताके मारनेवाले पाश्चा-लोंको सोते ही मारुंगा, अब मैं अपने कर्मके लिये वडी ही श्रीघ्रता करता हूं, सो भ्रें सुख और निद्रा कहां? जगतमें कोई मनुष्य ऐक्षा नहीं है, न होगा, जो मुझे इनके मारनेसे रोके । (१८-२९)

प्रकानते योजयित्वाश्वान्प्रयायस्मिसुखः परान्। दि ॥ समय स्थन्य स्थन्दनो युक्तः किं च कार्ष चिकीर्षितम्॥६१॥ एकसार्थप्रयातौस्वस्त्वया सह नर्षभ । समयुःखसुखौ चापि नावां र्राङ्कितुमहिस ॥ ६२॥ अश्वत्थामा तु संकुदः पितुवधमनुस्परन । ताभ्यां तथ्यं तथाऽऽचख्यौ यदस्यात्मिचितिम्॥६१॥ इत्वा रातसहस्राणि योधानां निश्चितः शरैः । न्यस्तरास्त्रो मम पिता षृष्टचुम्नेन पातितः ॥ ३४॥ तं तथेव हनिष्यामि न्यस्तप्रमाणमय वै । पुत्रं पात्राठराजस्य पापं पापेन कर्मणा ॥ ६५॥ क्ष्यं च निहतः पापः पात्राल्या परन्तपो ॥ ६५॥ क्ष्यं च निहतः पापः पात्राल्या पर्याद्वित मे मितः ॥ ३६॥ क्ष्यं सम्वत्ता स्थमास्थाय प्रायादिति मे मितः ॥ ३६॥ क्ष्यं स्त्युक्तः परान्। इत्युक्तः स्त्युक्तः स्त्युक्तः स्त्रान्ति स्वयं प्रापः स्त्रान्ति स्वयं प्रापः स्वयः स

प्रभाग ६] १० कींग्रेकण्यं। १० श्रीम्वण्यं। १० ॥

तमन्वगात्कृपो राजन् कृतवर्मा च सात्वतः ॥ २८ ॥

ते प्रयाता व्यरोचन्त परानिमुख्वास्त्रयः।

ह्यमाना यथा यज्ञे समिद्धा हृव्यवाहनाः ॥ ३९ ॥

यगुश्च शिविरं तेषां संमसुप्तजनं विमो।

द्वारदेशं तु संपाण्य होणिसतस्यौ महारथः ॥ ४० ॥ [२१४]

इति श्रीमामागते वतस्राह्ण्यां वैवाशिष्य सीविक वर्षणि होणियाने वक्षांऽप्यायः ॥ ५ ॥

श्वराष्ट्र उवाच — द्वारदेशे ततो होणिमनस्थितमवेश्य तो ।

अञ्चर्वतां भोजकृपौ किं सख्य वदस्य मे ॥ १ ॥

सख्य उवाच — कृतवर्माणमामंत्र्य कृपं च स महारथः ।

हौणिमन्युपरीतात्मा शिविरद्वारमागमत् ॥ २ ॥

तत्र भृतं महाकायं चन्द्रार्कसद्वासुतिम् ।

सोऽपर्यद्वारमाश्रिख तिष्टन्तं लोमहर्षणम् ॥ ४ ॥

वसानं चर्म वैयाग्नं पहार्कारविस्त्रवम् ॥ ४ ॥

वसानं चर्म वैयाग्नं महार्कारविस्त्रवम् ॥ ४ ॥

वसानं चर्म वैयाग्नं महार्कारविस्त्रवम् ॥ ४ ॥

वसानं चर्म वैयाग्नं पहार्कारविस्त्रवम् ॥ ४ ॥

वसानं चर्म वैयाग्नं पहार्कारविस्त्रवम् ॥ ४ ॥

वसानं चर्म वेयाग्नं पहार्कारविस्त्रवम् ॥ ४ ॥

वसानं वर्णवे वित्रवे प्रते ।

वस्तु सम्रासर्प ज्वालामालाकुलानम् ॥ ५ ॥

वश्च ह्रांकाऔर शब्दुओकी ओरको चले।

देष्ट्राकराज्यवनं च्यादितास्यं भयानकम् ॥

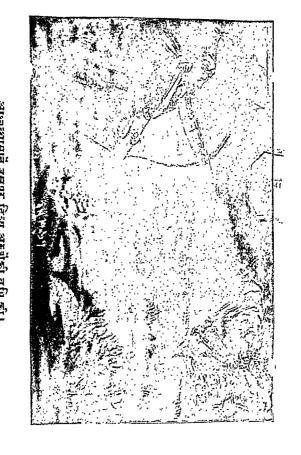
रथ हांकाऔर शब्दुओकी ओरको चले।

वले तीखता था, जेस यव्यं जलती

हुई अग्नि। चलते चलते ये तीनों वीरं स्वर्णा के स्वर्णा के स्वर्णा के स्वर्णा के स्वर्णा के स्वर्णा वित्रवा विर्णा कर्मा वेवस्त्रवा सार्णा वेत्र हे त्व क्षां विर्णा सम्पति करिता वार्णा वित्रविस्त्रवा वार्णा वित्रवा वार्णा वेत्रवा वेत्रवा

अक्तत्थामाके सब दिव्य बाण उसके शरीरमें जाकर गुप्त होगए। अञ्चत्थामा उस अद्भुत, कर्मको देखकर विचारने लगे। जैसे वडवापि समुद्रके जलका नाश कर देती है, ऐसे ही मेरे बाण इस भूतके शरीरमें गुप्त और निरर्थक

अनन्तर अञ्चत्थामाने जलती हुई अग्निके समान तेजमरी एक सांगी लेकर मारी, तब वह शक्ती उसके शरी-रमें लगकर इस प्रकार टूट गई, जैसे प्रख्यकालकी विजली सूर्यमें लगनेसे।



आध्वस्थामानं उसपर दिन्य अस्मेकी यूप्तिकी। भा. सु. भाष)



देखा कि आकाश विष्युवीसे मर रहा है। इस अद्भव बातको देखकर शस्त्ररहित अञ्चल्थामा दुःखी होकर कृपाचार्यका वचन सारण करके विचारने और मनमें कहने लगे कि जो अपने मित्रोंके कडवे वचन नहीं सुनता, वह हमारे समान आपितमें पडकर शोचता है। जो शास्त्र न पढा मुर्ख बृढोंके वचन न मानकर पाप करता है, उसे अवस्य आपत्तिमें

महात्मा गुरुवोंने ऐसा उपदेश किया है, कि गी, ब्राह्मण, राजा, मित्र, स्त्री,

महाभारत। [१ सीरिककार्य

कार्यान्य प्रतिकृति व शास्त्राणि च पातयेत् ॥ २२ ॥
इत्येवं ग्रुक्तिः पृष्वेष्ठपदिष्टं च्रुणां सदा ।
सोऽइसुत्करूप पन्धानं शास्त्रदृष्टं सनातनम् ॥ २३ ॥
अमार्गणेवमारम्प घोरामापदमागतः ।
तां चापदं घोरतरां प्रवद्गितं मनीपिणः ॥ २४ ॥
यदुचम्य महत्कृत्यं भयादिपि निवर्तते ।
अश्चर्तत्रेवं तत्रुर्तत्रेवं व मानुष्यं कर्म कर्यते ।
मानुष्यं कुर्वताः कर्म यदि देवान्न सिध्यति ॥ २६ ॥
न हि देवान्नरीयो व मानुष्यं कर्म कर्यते ।
मानुष्यं कुर्वताः कर्म यदि देवान्न सिध्यति ॥ २६ ॥
मतद्वां मानुष्यं क्रियां मानुष्यं निवर्तते ।
प्रतिज्ञानं प्रवद्गितं मनीषिणः ॥ २० ॥
यदारम्य क्रियां काश्चिद्ग्यादिहं निवर्तते ।
तदिदं दुष्पणीतेन भयं मां समुपास्थितम् ॥ २८ ॥
न हि द्रोणसुतः संख्ये निवर्ततः कथञ्चन ।
इदं च सुमहद्भूतं देवदंडमिवोद्यतम् ॥ २८ ॥
न वैतद्भिजानामि चिन्तयन्नपि सुर्वया ।
देवां सोकर उसी समय उठे तथा
पागल, मतवाले और प्रमत्त मनुष्यपर
यत्न न चलावे। परन्तु में सनावन शास्त्र
में लिखे धर्मको छोडकर अधर्म करना
चाहताथा। इसी लिवे इस वोर आपित्रमें
पद्मा महत्त्रपा वित्र स्वार आपित्रमें
कर सका, वैसदी उद्योगी मनुष्य जन
लौटताहै, तव क्ष मा किमा
करे लौट आवे। बैसे असमर्थं कर्म नहीं
कर सका, वैसदी चलता परन्तु यद्दि
समान खडा है में अल्यन्त विचारने पर

श्वाय ७] १० संसिक्ष्य वं ।

श्वाय स्वाय से से प्रवृत्ता कलुषा सितः ॥ २० ॥
तस्याः फलिस्तं घोरं प्रतिघाताय कल्पते ।
तिद्वं दैवविहितं सम संख्ये निवर्त्तम् ॥ ११ ॥
नान्यत्र दैवविहितं सम संख्ये निवर्त्तम् ॥ ११ ॥
नान्यत्र दैवविहितं सम संख्ये निवर्त्तम् ॥ ११ ॥
सेऽह्मय महादेवं प्रपचे चारणं विश्वस् ॥ ११ ॥
देवदंडिममं घोरं स हि मे नाज्ञायिष्यति ।
कपितं नं वेवदेवसुमापितमनामयम् ॥ ११ ॥
कपालमालिनं कृतं भगनेत्रहरं हरस् ।
स हि देवेऽस्त्रमादेवांस्तपसा विक्रमेण च ।
तस्माच्छरणमभ्येमि गिरिज्ञं इल्लाणिनम् ॥ १४ ॥
हित श्रीतहाभातं ज्ञवसहत्यां विश्वायां वेवास्वित्यां श्रीतिके पर्वाण
द्वीणिवित्रायां पछोऽप्यायः॥ १॥
सञ्जय उवाच — एवं सिश्चन्तियत्वा तु द्वोणपुत्रो विज्ञामपते ।
अवतीर्य रथोपस्थादेवंद्रां प्रणतः 'श्वितः ॥ १ ॥
सञ्जय उवाच — एवं सिश्चन्तियत्वा तु द्वोणपुत्रो विज्ञामपते ।
अवतीर्य रथोपस्थादेवंद्रां प्रणतः 'श्वितः ॥ १ ॥
सञ्जय उवाच — एवं सिश्चन्तियत्वा तु द्वोणपुत्रो विज्ञामपते ।
अवतीर्य रथोपस्थादेवंद्रां प्रणतः 'श्वितः ॥ १ ॥
सञ्जय उवाच — एवं सिश्चन्तियत्वा तु द्वोणपुत्रो विज्ञामपते ।
श्वातिकण्यमणं चिर्त्रां च्वात्वानित्रम्य ॥ १ ॥
सञ्चय वित्रां चार कर्त्वाणे चार हे, वित्रमे वित्रमे स्वात्वा च्वात्वा चार स्वात्वा चार तसाच्छरणमभ्येमि गिरिशं शूलपाणिनम् ॥ ३४ ॥ [२४८]

दुःखको दूर करेंगे। वे तप और बलके कारण सब देवतांसे अधिक हैं, इसलिये मैं उन शूलधारी शिवको शरण जाता

सञ्जय बोले, हे राजन्! ऐसे कहकर अञ्चत्थामा पृथ्वीमें खडे होकर प्रणाम .करके शिवकी स्तुति करने लगे।(१)

अक्वत्थामा बोले, हम महातेजस्वी, . स्थिर, कल्याणरूप, रुद्र, सर्वे जगत्के

99999999999

39739999999999 9999998666666666666666666666	6666699999	•
विश्वरूपं विरूपाक्षं वहुरूपमुमापतिम्	॥३॥	
इमञानवासिनं द्वां महागणपतिं विश्वम् ।		
लट्वाङ्गधारिणं रुद्रं जटिलं ब्रह्मचारिणम्	ii 8 II	
मनसा सुविञ्जुद्धेन दुष्करेणाल्पचेतसा ।		
सोऽहमात्मोपहारेण यक्ष्ये त्रिपुरघातिनम्	11 4 11	
स्तुतं स्तुत्यं स्तूयमानममोघं कृत्तिवाससम्।		
विलोहितं नीलकण्ठमसद्यं दुर्निवारणम्	11 8 11	
शकं ब्रह्मसुजं ब्रह्म ब्रह्मचारिणमेव च।		
व्रतवन्तं तपोनिष्ठमनन्तं तपतां गतिम्	11 19 11	
बहुरूपं गणाध्यक्षं त्र्यक्षं पारिषद्भियम् ।		
धनाध्यक्षं क्षितिमुखं गौरीहृद्यवस्रभम्	11 2 11	
कुमारिपतरं पिङ्गं गोवृषोत्तमवाहनम्।		
ततुवाससमत्युग्रमुमाभूषणतत्परम्	11 8 11	
परं परेभ्यः परमं परं यसान्न विद्यते ।		
इष्वस्रोत्तमभत्तारं दिगन्तं देशरक्षिणम्	॥ १० ॥	
हिर्ण्यकवचं देवं चंद्रमौलिविभूषणम् ।		
प्रपचे चारणं देवं परमेण समाधिना	॥ ११ ॥	

देनेवाले, विहार और प्रकाश करनेवाले, जगत्मावन ईश्वर, नीलकण्ठ, सनातन, ज्यापक, दक्षयज्ञविनाशक, भक्तदुःखना, शक, जगद्र्प, विरूपाक्ष, अनेक रूपवारी, पावेतीपति, साशानवासी, महावलवान गणोंके स्वामी, सर्व व्यापक, नरपञ्जर घारी, रुद्र, जटाघारी, झक्षचारी, त्रिपु-रासुरनाशक, स्तुतिकरने योग्य, स्तुति किये हुपे देवरोंसे स्तुतियोग्य, अनन्त, कृत्विवासा, विलोहित, नीलकण्ठ, न सहनेयोग्य, दुग्ल निवारण करने योग्य, इन्द्र, झक्काको बनानेवाले, झक्का, झक्का-

चारी, व्रत्यारी, तपस्वी, अपार, तपस्वियोंको फल देनेवाले, अनेक रूपधारी, त्रिनेत्रगणोंके प्यारे, घनके स्वामी
जगत्के मुख, पार्वतीके हृदयके प्यारे,
कार्चिकेयके पिता,उत्तम नैलपर चढनेवाले, सहम वस्रधारी, पार्वतीको भूषण
पहिरानेवाले, उत्तमसे उत्तम, अल्यन्त
उत्तम, सबसे उत्तम, उत्तम श्रद्धधारी,
सब जगत्के स्वामी, सब दिशा और
देशोंके रक्षक, सुवर्ण कलश्रधारी, और
चन्द्रमाको माथेम धारण करनेवाले
भगवान शिवको मैं अल्यन्त श्रद्धायुक्त

.

इमां चेदापदं घोरां तराम्यच सुदुष्कराम् । सर्वभूतोपहारेण यक्ष्येऽहं श्रुचिना श्रुचिम् इति तस्य व्यवासितं ज्ञात्वा योगात्सुकर्मणः। पुरस्तात्काश्चनी वेदी पादुरासीन्महात्मनः तस्यां वेद्यां तदा राजश्चित्रभानुरजायत। स दिशो विदिशः खं च ज्वालाभिरिव पूर्यन्॥१४॥ दीप्तास्यनयनाश्चात्र नैकपादशिरोभुजाः। रत्नचित्राङ्गद्धराः समुचतकरास्तथा 11 89 11 द्वीपरैालप्रतीकाशाः पादुरासन्महागणाः। श्वतराहोष्ट्ररूपाश्च हयगोमायुगोमुखाः 11 25 11 ऋक्षमाजीरवदना व्याघद्वीपिमुखास्तथा। काकवक्त्राः प्रवमुखाः शुक्रवक्त्रास्तयैव च ॥ १७॥ महाजगरवक्त्राश्च हंसवक्त्राः शितप्रभाः। दार्वाघाटमुखाश्चापि चाषवक्त्राश्च भारत 11 38 11 कूर्मनकमुखाश्चेव शिशुमारमुखास्तथा । महामकरवक्त्राश्च तिमिवक्त्रास्तथैव च 11 88 11 हरिवक्त्राः क्रौत्रमुखाः क्रपोतेभमुखास्तथा ।

और शुद्ध मनसे प्रणाम करता हूं।यदि में इस घोर आपत्तिसे पार होजाऊं तो पवित्र होकर सब प्रकारकी सामग्रियोंसे पवित्र शिवकी पूजा करूंगा। (२-१२)

हमां चेद सर्वभूतो हति तस्य पुरस्तात्क तस्यां वेद स दिशो दीप्रास्यक रत्नचित्र द्वीपशैला श्वनराहो। श्वन्यराव्याय स्वायाय महात्मा सकर्मी अञ्चत्थामाका अभि-प्राय जानकर योगके बलसे उनके आगे एक सुवर्णकी वेदी बनगई, और उसमें आपसे आप आग जलने लगी, उसकी ज्वालांसे सब आकाश पृथ्वी पूरित होगई, तब उस वेदीसे अनेक हाथ पैर शिरवाले, रत्नोंके विचित्र आभूषण पहिरे, द्वीप और पर्वतोंके समान

शरीरवाले अनेक गण उत्पन्न होग-ये। (१३---१६)

किसी का मुख कुत्ते का, किसी का ऊंट का, किसी का गधे का, किसी का मुख घोडे का, किसी का गाय का, किसी का सार का,किसी का रीछका,किसी का मुख विलाव का, किसी का चीते का,किसी का कौवे का, किसी का बन्दर का,किसी का तोते का, किसी का हंस का, किसीका हाथी का,किसी का दार्वाघाट पक्षी का,किसी का गृद्ध का, किसी का, कछवे का, नाका,और

क्लास्तरीय च ॥ २०॥
तथैय च महोदराः।
चिमयक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्छानक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्छानक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्छानक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्छानक्त्राश्च भारत ॥ २२॥
च्छानक्त्राश्च च ॥ २२॥
च्छानक्त्राश्च च ॥ २३॥
च्छानक्त्रां च ॥ २४॥
च छात्रां क्रिशिटनः ॥ २५॥
च छात्रां क्रिशिटनः ॥ ३५॥
च छात्रां क्रिशिताः।
च छात्रां क्रिशिताः ॥ ३६॥
च छात्रां क्रिशिताः ॥ ३६॥
च छात्रां क्रिशिताः ॥ ३६॥
च छात्रां क्रिशिताः च छात्रां विक्षां विशेषाः विक्षां विष्ठेषाः विष्ठेषाः विक्षां विष्ठेषाः विक्षां विष्ठेषाः विष्ठेषाः विष्ठेषाः विक्षां विष्ठेषाः विक्षां विष्ठेषाः विष्ठेषाः विक्षां विष्ठेषाः पारावतमुखाश्चेव मद्गवक्त्रास्तयैव च पाणिकणीः सहस्राक्षास्तथैव च महोद्राः। निर्मासाः काकवक्त्राश्च इयेनवक्त्राश्च भारत ॥२१॥ तथैवाशिरसो राजन् ऋक्षवक्त्राश्च भारत। पदीप्तनेत्रजिह्वाश्च ज्वालावणीस्तथैव च ज्वालाकेशाश्च राजेन्द्र ज्वलहोमचतुर्भुजाः । मेषवक्त्रास्तथैवान्ये तथा छागमुखा नृप शङ्खाभाः शङ्खवन्त्राश्च शङ्खवर्णास्तथैव च। शङ्घमालापरिकराः शङ्घध्वनिसमस्वनाः जटाधराः पञ्चशिखास्तथा मुण्डाः कृशोद्राः। चतुर्देष्ट्राश्चतुर्जिह्याः शंकुकर्णाः किरीटिनः मौजीधराश्च राजेन्द्र तथाऽऽक्कश्चितमूर्धजाः। उष्णीषिणो मुजुदिनश्चारुवक्त्राः स्वलंकृताः पद्मोत्पलापीडघरास्तथा मुकुटघारिणः।

मगर, मछली, कछवे, कबृतरं, परेवा, समान मुख

पारावतः
पाणिकण
निर्मासाः
तथैवाकि
पदीप्रनेष्ठ
पदीप्रनेष्ठ
पदीप्रनेष्ठ
प्राक्षिक्ष
पदीप्रनेष्ठ
प्राक्षिक्ष
पदीप्रनेष्ठ
प्राक्ष्णाक्ष
पदीप्रनेष्ठ
प्राक्ष्णाक्ष
पदीप्रनेष्ठ
प्राक्ष्णाक्ष
पदीप्रनेष्ठ
प्राक्ष्णाक्ष
पदीप्रनेष्ठ
पदीप्रिक्ष
पदीर्पर
प्रात्पर
प्रात किसीके द्दार्थमें कान था, किसीके हजारों नेत्र थे, किसीके गडामारी पेट था, किसीके शरीरमें मांसही नहीं था, किसीके कौनेका, किसीका गृद्धका मुख था, किसीके शिर ही नहीं था, किसीके रीछका ऐसा मुख था, किसीके नेत्र अग्निके समान थे, किसीकी वडी मारी जिह्वा थी, किसीका आप्रके समान रङ्ग था, किसीके नेत्र और बाल अग्निके समान थे, सनके चार चार हाथ थे, किसीका बकरेके समान मुख था, कि-सीका मेडेके समान मुख था, किसीका

म।हात्म्येन च संयुक्ताः शतशोऽथ सहस्रशः॥ २७ ॥ श्रतद्वीवज्रहस्ताश्च तथा मुसलपाणयः। सुशुण्डीपाशहस्ताश्च दण्डहस्ताश्च भारत प्रष्ठेषु वद्धेषुषयश्चित्रवाणीत्कदास्तथा । सध्वजाः सपताकाश्च सघण्टाः सपरश्वधाः महापाशोद्यतकरास्तथा लगुडपाणयः। स्थूणाहस्ताः खद्गहस्ताः सर्पोच्छित्रतिरीटिनः॥ ३०॥ महासर्पाङ्गद्वधराश्चित्राभरणधारिणः। रजोध्वजाः पङ्कदिग्धा सर्वे शुक्काम्बरस्रजः नीलाङ्गाः पिङ्गलाङ्गाश्च मुण्डवक्त्रास्तथेव च । भेरीशङ्घरङ्गांश्च झर्झरानकगोसुखान् अवादयन्पारिषदाः प्रहृष्टाः कनकप्रभाः। गायमानास्तधैवान्ये नृत्यमानास्तथाऽपरे लङ्घयन्तः प्रवन्तश्च वल्गन्तश्च महारथाः। धावन्तो जवना मुण्डाः पवनोद्धतमूर्धेजाः मत्ता इव महानागा विनद्नतो मुहुर्बुहुः। सभीमा घोररूपाश्च शुलपहिशपाणयः नानाविरागवंसनाश्चित्रमाल्यानुलेपनाः।

तम्यसे भरे थे, ऐसे सहस्रों गण अश्व-त्थामाको दिखाई दिथे, किसीके हाथमें शत्रा, किसीके हाथमें लाठी, किसीके हाथमें डण्डा, किसीके हाथमें मुशुण्डी, किसीके हाथमें परिघ, किसीके हातमें वाण, किसीके घण्टा, किसीके परव्यध, किसी के बरछी और किसीके सांप था, हाथ में सबके पास ध्वजा और पताका थीं, कोई सांपका बाज्यन्द पहरे थां, और कोई उत्तम विचित्र आभृषण पहिरे था। त्णीर बंधा

11 88 11 रत्नचित्राङ्गद्धराः समुद्यतकरास्तथा हन्तारो द्विषतां शूराः प्रसद्यासद्यविक्रमाः । पातारोऽस्रग्वसौघानां मांसांत्रकृतभोजनाः ॥ ३७ ॥ चुडालाः कर्णिकाराश्च प्रहृष्टाः पिठरोदराः । अतिह्सातिद्वीर्घाश्च प्रसम्बाश्चातिभैरवाः 11 36 11 विकटाः काललम्बोष्ठा वृहच्छेफाण्डपिण्डिकाः।। महाईनानाविकटा मुण्डाश्च जटिलाः परे 11 36 11 सार्केन्द्रयहनक्षत्रां चां कुर्युस्ते महीतले । उत्सहेरंश्च ये हन्तुं भूतग्रामं चतुर्विधम् 11 80 11 ये च वीतभया नित्यं हरस्य भुकुटीसहाः। कामकारकरा नित्यं जैलोक्यस्येश्वरेश्वराः 11 88 11 निल्यानन्द्रप्रसुद्तिता वागीशा वीतमत्सराः। प्राप्याष्ट्रगुणमैश्वर्षं येन यास्यन्ति वै सायम् ॥ ४२॥ येषां विसायते नित्यं भगवान्कर्मभिईरः। मनोवाक्समिर्युक्तैर्नित्यमाराधितश्च यैः मनोवाक्सभिर्भक्तान्पाति पुत्रानिवौरसान्। पिबन्तोऽस्रग्वसाश्चान्ये कुद्धा ब्रह्मद्विषां सदा ॥ ४४॥

कोई अनेक प्रकारके रङ्गे बस्त, अनेक प्रकारकी माला, कोई अनेक प्रकारकी गन्धि और रहोंके आभूषण किये था, वे सब शत्रनाशन महापराक्रमी भक्तों-की रक्षा करनेवाले और मांस तथा आन्तका मोजन करनेवाले थे, कोई चुडेल, कोई कर्णिकार और पिठरोदर नामक भूत थे, किसीके बडे बडे लिङ्ग थे और किसीके वहे वहे अण्डकोश थे. किसीके वडे वडे दांत और किसीकी भयानक जटा थीं, उस समय उन्होंने नक्षत्र तारा, ग्रह, स्थं, चन्द्रमाके समान

पृथ्वी कर दई। (२८-३९)

येही सब गण चारों प्रकारके जग-त्का नाश कर सकते हैं, इन्हें कहीं भय नहीं होता, यही शिवकी मौहको देख सकते हैं। येही जगत्के खामी और सब काम करनेमें समर्थ हैं, सब विद्या-ओंको जाननेवाले हैं, किसीका द्वेप नहीं करते। आठों प्रकारकी ऋदी प्राप्त होने पर भी अभिमान नहीं करते, इनका कर्म देखकर शिव भी आश्चर्य करते हैं, यह भी शिवकी सदा आराधना करते हैं, ब्राह्मणोंके वैरियोंका रुधिर पीते हैं।

<u>N</u> W

१० साक्षिकपर्व ।

चतुर्विधात्मकं सोमं ये पिबन्ति च सर्वदा। श्रुतेन ब्रह्मचर्येण तपसा च दमेन च 11 88 11 ये समाराध्य ज्ञ्लाङ्कं भवसायुज्यमागताः । यैरात्मभृतैभीगवान्पार्वत्या च महेश्वरः 11 88 11 सहाभूतगणैर्भुङ्क्ते भूतभव्यभवत्त्रभुः। नानावादित्रहसितक्ष्वेडितोत्कुष्टगार्जितैः ॥ ४७॥ संत्रासयन्तस्ते विश्वमश्वत्थामानमभ्ययुः। संस्तुवन्तो महादेवं भाः क्षवीणाः सुवर्वसः ॥ ४८॥ विवर्धयिषवो द्रौणेर्महिमानं महात्मनः। जिज्ञासमानास्तत्तेजः सौप्तिकं च दिदक्षवः भीमोग्रपरिघालातश्रूलपहिशापाणयः। घोररूपाः समाजग्सुर्भृतसङ्घाः समन्ततः जनयेयुर्भयं ये सम जैलोक्यस्यापि दर्शनात् । तान्त्रेक्षमाणोऽपि व्यथां न चकार महावलः ॥ ५१ ॥ अथ द्रौणिर्धनुष्पाणिर्वद्धगोधाङ्गुलिञ्जवात् । स्वयमेवात्मनात्मानसुपहारसुपाहरत् धर्नुषि समिधस्तत्र पवित्राणि सिताः शराः। इविरात्मवतश्चात्मा तिसान् भारत कर्मणि

मगवान् शिव भी मन, वचन और कर्म से अपना भक्त जानकर इन्हें पुत्रके समान मानते हैं, यही सदा चारों प्रकारके सोम पीते हैं। इन्होंने विद्या, ब्रह्मचर्य, तप और योगसे शिवको प्रसन्न किया है, और शिवकी सायुज्य मोक्ष पाई है, समवान सब जगत्के खामी शिव पार्वेलीके सहित इनके हदयमें निवास करते हैं। (४०-४६)

तव ये सब गण अनेक प्रकारके बाजे बजाते, हंसते, कूदते, उछछते, जगत्को डराते, अपने तेजसे सब ओर प्रकाश करते, अश्वत्थामाकी ओर दौडे, और महात्मा अश्वत्थामाको सोते हुये वीरोंको और तेजको दिखाने लगे और मयानक परिघ, खूल और पड्डिश लेकर अश्वत्थामाको डराने लगे, उनको देखकर तीनों लोक डर सकते हैं, परन्तु अश्व-त्थामा न डरे, तब धनुषधारी तलहत्थी। पहिने बीर अश्वत्थामाने पवित्र धनुष और तेज बाणोंको समिध बनाकर अपने श्रीरको आहुति करना चाहा, अश्वत्था- शुः महामाता। [१ संगिक्ष्यं
स्वान्ध्यान संत्रेण प्रोणपुञ्चा प्रतापवान् ।
उपहारं महामन्युरथात्मानग्रुपाइरत् ॥ ५४ ॥
तं इतं रोद्रक्ताणं रोद्रैः कर्मित्रच्युतम् ।
अभिष्ठत्य महात्मानित्युवाच कृताङ्गिलः ॥ ५५ ॥
अभिष्ठत्य महात्मानित्युवाच कृताङ्गिलः ॥ ५५ ॥
अभ्रद्वरा महात्वेच परमेण समाधिना ।
अस्यामापित् विश्वात्मन्नुरण्जुष्मि तवाद्यतः ॥ ५७ ॥
त्विय सर्वाणि भृतानि सर्वभृतेषु वासि वै ॥
गुणानां हि प्रधानावामेकत्वं त्विय तिष्ठति ॥ ५८ ॥
सर्वभृताअय विभो ह्विभृतमबस्थितम् ।
प्रतिग्र्णणा मां देव यचशक्याः परे मया ॥ ५९ ॥
इत्युक्त्वा द्वौणिरास्थाय तां वेद्वौ दीप्तपावकाम् ॥
सन्त्रव्यात्मानमाक्ष्य कृत्णवर्त्मन्युपाविशत् ॥ ६० ॥
तम्ध्वां विश्वता सहात्मानसहात्महादेवो हसन्नित्व ॥ ६१ ॥
सन्त्रव्यात्मानमाक्ष्या कृत्णवर्त्मन्युपाविशत् ॥ ६० ॥
तम्ध्वां विश्वता ।
सन्त्रवां कृत्यां स्वान्धा नियमेन च ॥
सान्त्रा भक्त्या च धृत्या च वचसा तथा॥६२॥
यथावदहमाराद्वः कृत्योनान्धिष्ठकर्मणा ।
तस्माविष्ठतमः कृत्यात्रयो मम न विग्यते ॥ ६३ ॥
माने सगवान श्विकी उत्तम स्तुतिकरके
ऐसा कहा । (४७–५५)
अञ्चत्यामा वोले, है सगवन् शिव ।
सव नात्र् आपमें स्वित है, सव जात्के
गुण आपमें विध्यता है, से बात्रावेको
तरमा कुता, मात्रण है, सो अत्र आपक्षे
मक्ति और योगसे अपने शरीरको
सित केता, तो आप इस वर्णको
नहीं जीत सकता, तो आप इस वर्णको

कुर्वता तात सम्मानं त्वां च जिज्ञासता मया। पाञ्चालाः सहसा गुप्ता मायाश्च बहुशः कृताः॥ ६४॥ कृतस्तस्येव सम्मानः पात्रालान् रक्षता मया । अभिभृतास्त्र कालेन नैषामचास्ति जीवितम्॥ ६५॥ एवसुक्त्वा महात्यानं भगवानात्मनस्तनुम्। आविवेश ददौ चासौ विमलं खडुमुत्तमम् अथाविष्टो भगवता भूयो जन्वाल तेजसा। वेगवांश्राभवयुद्धे देवसृष्टेन तेजसा ॥ ६७॥ तमहरूयानि भूनानि रक्षांसि च समाद्रवन् । अभितः ज्ञान्तिविरं यान्तं साक्षादिवेश्वरम्॥ ६८ ॥ [३१६]

इति श्रीमहासारते शतसाहरूयां संहितायां दैयासिक्यां सौक्षिके पर्वणि

होणिकृतशिवार्चने सप्तमोऽध्यायः॥ ७ ॥

धृतराष्ट्र उवाच —तथा प्रयाते शिविरं द्रोणपुत्रे महारथे। कचित्कपश्च भोजश्च भयातौं न व्यवर्त्तताम् काचित्र वारितौ श्चद्रैरक्षिभिनींपलक्षितौ। असद्यमिति मन्वानी न निष्टती महारथी कचिद्रन्मथ्य शिविरं हत्वा सोमकपाण्डवात्।

कोई जगत्में प्यारा नहीं है, उन्होंने मुझसे कहा था, कि तुम पाञ्चालोंकी रक्षा करो, इसी लिये में उनकी रक्षा कर रहा था, परन्त अब उनका काल आगया इसलिये अब वे नहीं जी सक-ते। (६१-६५)

ऐसा कहकर भगवान शिवने उनके शरीरमें प्रवेश किया, और एक तेज खड़ दिया, तब अञ्चत्थामा तेजसे अत्यन्त प्रकाशित होने लगे, और अत्यन्त बल-वान होगये। अनन्तर ये सब भूत भी हेरेमें जाते हुये अस्वत्थामाके सङ्ग इस

प्रकार चले, जैसे शिवके सङ्ग चलते थे। (६६-६८)

सैं। तिक पवंमें सात अध्याय समाप्त । सौतिक पर्वमें आठ अध्याय ।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! जब महा-रथ अञ्चत्थामाने इस प्रकार डेरेमें प्रवे-श किया तब कृपाचार्य और कृतवर्मा डरसे भाग तो नहीं गये १ परन्तु अञ्च-त्थामाको डेरोंमें घुसते हुए देख पहरे दारोंने क्यों न रोका ? क्या उन्हें कि-सीने देखा ही नहीं ? हमें जान पडता

11 3 11

11 8 11

11 9 11

11 9 11

11 0 11

11 6 11

11 80 11

दुर्योधनस्य पदवीं गतौ परिमकां रणे पत्रालैनिंहतौ बीरा कविनु स्वपतां क्षितौ । कवित्ताभ्यां कृतं कर्म तन्ममाचक्ष्य सञ्जय सञ्जय उवाच— तस्मिन्प्रयाते शिविरं द्रोणपुत्रे महात्मनि । कृपश्च कृतवर्मा च शिविरद्वार्यतिष्ठताम् अश्वत्थामा तु तौ हट्टा यत्नवन्तौ महारथौ । प्रहृष्टः शनकै राजन्निदं वचनमत्रवीत् यत्तौ भवन्तौ पर्याप्तौ सर्वक्षत्रस्य नाशने । किं प्रनर्योधशेषस्य प्रसुप्तस्य विशेषतः अहं प्रवेक्ष्ये शिविरं चरिष्यामि च कालवत्। यथा न कश्चिद्पि वां जीवन्मुच्येत मानवः तथा भवद्भवां कार्य स्वादिति मे निश्चिता मतिः। इत्युक्तवा प्राविशद्रौणिः पार्थानां शिविरं महत् ॥९॥ अद्वारेणाभ्यवस्कन्च विहाय भयमात्मनः। स प्रविद्य महावाहुरुद्देशज्ञश्च तस्य ह घृष्टशुन्नस्य निलयं शनकैरभ्युपागमत्।

कर य दोनों महारथ नहीं छोटे ? प्रार-व्यहीसे सोमक और पाण्डवांको मारनेपर भी ये होग जीते बच गए और दुर्योध-नके शक्त खर्गको न गये ? प्रारव्धहीसे ये दोनों वीर पाञ्चालोंके हाथसे वच गये। कहो उस युद्धमें इन्होंने क्या क्या किया १ (१-४)

सञ्जय बोले, हे महाराज ! जिस समय महात्मा अश्वत्यामा हेरोंके भीतर घुड गय, तब कृपाचार्य और कृतवमी द्वारपर खंड रहे, उनको अन्त्यत साव-धानतासे द्वारपर खडे देख अद्यत्थामा धीरेसे बोले, आप लोग अत्यन्त

धान होकर खडे रहिये: हमें निश्चय है कि आप सब क्षत्रियोंको मार सक्ते हैं और यह तो घोडेसे बचे मनुष्य हैं, तिसमें भी सोरहे हैं. में डेरेमें जाकर कालके समान घूमुंगा, आप लोग ऐसा यत कीजिय कि कोई मनुष्य जीता हुआ न भागने पावे । (५-८)

ऐसा कहकर अञ्चत्थामा द्वारकी ओरसे चल दिये और एक विना द्वारके मार्गको देखकर घीरेसे कृदकर पण्डवोंके भयान-के डेरेमें घुसे, फिर अपने जीनेकी आशा और भय छोडकर घृष्टशुम्नके चिन्ह

श्वाय ८] १० सीविक्यवं।

त तु कृत्वा महत्कर्म आन्ताश्च वलवद्रणे ॥ ११ प्रस्नाश्चेव विघ्वस्ताः समेख परिषाविताः।

अध प्रविद्य तद्वेदम घृष्ट्युझस्प भारत ॥ १२ पाञ्चाल्यं श्वायने द्रौणिरपद्यपसुप्रमन्तिकातः।

श्रीमावदाते महत्ति स्पद्ध्यास्तरणसंग्रुते ॥ १३ माल्यप्रवरसंगुक्ते पृपैश्वणाञ्च वासिते।

तं श्वानं महत्त्मानं विक्रव्यमञ्जामण्य ॥ १४ पाञ्चाप्यत्य पादेन श्वायनस्यं महीयते।

सम्बुध्य चरणस्पर्शाद्धुस्याय रणदुर्भदः ॥ १५ भावाप्यत्य पापेष्मयाः द्रोणपुत्रं महारथम्।

तस्रुत्पतन्तं श्वायाद्भ्यत्याम महावलः ॥ १६ भावतः विष्कुप्य पाणिम्यां निष्क्षिप्य सहीतले।

सवलं तेन निष्पृष्टः साध्वसेन च भारतः ॥ १७ निद्र्या चैव पाञ्चाल्या नाश्चकंष्ठितं तदा।

तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चौरसि चोभयोः॥ १८ निद्र्या चैव पाञ्चल्या नाश्चकंष्ठितं तदा।

तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चौरसि चोभयोः॥ १८ निद्र्या चैव पाञ्चल्या नाश्चकंष्ठितं तदा।

तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चौरसि चोभयोः॥ १८ निद्र्या चैव पाञ्चल्या नाश्चकंष्ठितं तदा।

स्राद्रि स क्षत्रिय, हमने युद्धमें घौर विश्वस्त है यह विचारकर विशेषकर 11 88 11 ॥ १३ ॥ 11 88 11 ॥ १५॥ 11 28 11 11 29 11 तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चोरसि चोभयोः॥ १८॥ II 28 II

घतासे महापराक्रमी महारथ महायोद्धा धृष्ट्युम्नके एक लात मारी। उसी समय वीर धृष्टद्मम् जागे और देखा कि महा-रथ अञ्चत्थामा आगे खडे हैं. तब उन्होंने शीघतासे उठना चाहा, परन्तु अक्वत्थामाने शीघ्रतासे उनके पकडकर पृथ्वीमें गिरा दिया और छातीपर पैर रख दिया, बीर भृष्टसुम्न निद्रासे अत्यन्त च्याकुल थे, इसलिये कुछ न कर सके। तब अक्वत्थामाने एक पैर उनके कण्ठपर और एक पैर छातीपर

आचार्यपुत्र शस्त्रण जहि मां मा चिरं कृथा।। त्वत्कृते सुकृताँ छोकान् गच्छेयं द्विपद्ांवर एवमुक्त्वा तु वचनं विरराम परंतपः। सुतः पञ्चालराजस्य आकान्तो बलिना भृदाम् ॥२१॥ तस्य ज्यक्तां तु तां वाचं संश्रुख द्रौणिरवचीत्। आचार्यघातिनां लोका न संति कुलपांसन तस्माच्छक्रेण निधनं न त्वमहीसे दुर्मते । एवं ब्रुवाणस्तं वीरं सिंहो मत्तमिव द्विपम् 11,73 ! मर्भसम्यवधीत् ऋद्धः पादाष्टीलैः सुद्राह्णैः। तस्य वीरस्य शब्देन मार्थमाणस्य वेइमनि अबुध्यन्त महाराज स्त्रियो चे चास्य रक्षिणः। ते दृष्ट्वा धर्षयन्तं तमितमानुषाविक्रमम् भूतमेवाध्यवस्यंतो न सम प्रव्याहरन् भयात्। तं तु तेनाभ्युपायेन गमधित्वा यमक्षयम् अध्यतिष्ठत तेजस्वी रथं प्राप्य सुद्रशनम्। स तस्य भवनाद्राजात्रिष्कम्यानाद्यन्दिशः

किया, तन पाञ्चालराजका शब्द भी बन्द होगया।(१४-१९)

अनन्तर उन्होंने अपने नख्नोंसे अध्यत्यासाको चौरना चाहा, परन्तु जब वह सी न कर सके तब कुछ तुत्तहाते घीरे घीरे बोले, हे गुरुपुत्र, आप यह क्या करते हैं ? हमे शक्से मारिये । हे नाक्षणश्रेष्ठ ! तब हम आपकी कृपासे वीरलोकको बायेंगे, उस समय शञ्जनाश्म घष्टशुझ इसके शिवाय और कुछ न कह सके, बीर पाश्चालराजपुत्र इतना ही कह कर खुप होगये, तब बलवान अक्वत्थामा बोले, और कुलाधम दुईदे ! जो लोग

गुरुको मारते हैं उन्हें वीर लोक नहीं मिलता, इसलिये तू ग्रह्मसे मारने योग्य नहीं, ऐसा कहकर ष्ट्रप्ट्युम्नके मर्भस्था-नोमें बलसे लात मारने लगे, मरते हुए बीर ष्ट्रप्ट्युम्नके शब्दसे उनके पास सोई द्वियां और उनकी रक्षा करनेवाले जागे। उन्होंने अपने खामीकी ऐसी दशा देख अक्वत्थामाको भूत जाना और मयके मारे कुछ न बोल सकी। इसी प्रकार ष्ट्रप्ट्युक्सको अक्वत्थामाने मार डाला। (२०—-२६)

अनन्तर उस डेरेसे निकल कर ते-जसी अञ्चत्थामा स्थपर बैठकर दसरे प्रथम शिविरं प्रायाज्ञियां सुर्हिषतो यली ।
अपकान्ते ततस्तिस्मिन्द्रोणपुत्रे महारथे ॥ २८ ॥
सहित रक्षिभिः सबैः प्राणेदुर्योषितस्तदा ।
राजानं निहतं हृष्ट्रो भूयां शोकपराधणाः ॥ २९ ॥
व्याकोशन् क्षत्रियाः सर्वे घृष्ट्रगुक्षस्य भारत ।
तासां तु तेन शब्देन समीपे क्षत्रियर्षभाः ॥ ३० ॥
क्षिपं च समनश्चन्त किमेतिदिति चानुवन् ।
क्षिपं च सामनश्चन्त किमेतिदिति चानुवन् ।। ३२ ॥
स्तानापततः सर्वात स्त्राक्षण व्यपोध्यत् ।
घृष्टगुक्षं च हत्वा स तांश्चेवास्य पदानुगान् ॥ ३४ ॥
स तानापततः सर्वात स्त्राक्षण व्यपोध्यत् ।
घृष्टगुक्षं च हत्वा स तांश्चेवास्य पदानुगान् ॥ ३४ ॥
अपरुयच्छयने सुर्ग्रसुत्तमौजसमन्तिके ।
तमप्याकम्य पादेन कण्ठे चोरसित्तक्सा ॥ ३५ ॥
सर्वात मारपामास विनर्दन्तमरिद्दमम् ।

इरांकी ओर ग्रज्जोंको मानेको दौढे ।
अत्रत्यामाके जानेके पीछे विगोने देखा
कि महाराज मरे पढे हैं, तव वे सव
हाहाकार करके और अल्यन्त ग्रोकसे
च्याकुळ होकर रोने लगीं। तव सव श्रेष्ट
स्तिर जां। तव द्वारपर जाकर देखा कि
कृपाचार्य खडे हैं, तव सव स्ति उनको
देखकर हरीं, तव सव क्षत्रिय उनसे
चुलेने लगे कि जिसने महाराज पाञाचुलेने लगे कि जिसने महाराज पाञा-

लराजको मारा है और जो रथपर चढ-कर मागा जाता है, वह क्या कोई राक्ष-

ऐसा कहते हुये वे सब वीर अञ्च त्थामाको मारने दौडे, परन्तु अञ्चत्था-माने रुद्रास्त्रेस उन सबको मार डाला। फिर यहांसे चलकर उत्तमीजाके डेरेमें फिर उनके भी कण्ठमें एक पैर और एक पेर छातीमें धरकर उन्हें भी वैसे ही मार डाला। शत्रुनाशन उत्तमीजाको

युधामन्युश्च संप्राप्तो मत्वा तं रक्षसा हतम् गदामुखस्य वेगेन हृदि द्रौणिमताडयत्। तमभिद्रस जग्राह क्षितौ चैनमपातयत् ॥ ३७॥ विस्फुरन्तं च पशुवत्तथैवैनमनारयत्। तथा स वीरो हत्वा तं ततोऽन्थान्ससुपाद्रवत्॥ ३८॥ संसप्तानेव राजेन्द्र तत्र तत्र महार्थान्। स्फ़रतो वेपमानांश्च शमितेव पशूनमखे ॥ ३९ ॥ ततो निस्त्रिशमादाय जघानान्यान् पृथक् पृथक्। भागशो विचरन्मार्गान्सियुद्धविशारदः तथैव गुरुमे संप्रेक्ष्य हायानानमध्यगीरिमकान । श्रान्तान् व्यस्तायुधन्सर्वीन् क्षणेनैव व्यपोथयत्॥४१॥ योघानश्वान् द्विपांश्चैच प्राच्छिनत्स वरासिना । रुधिरोक्षितसर्वागः कालसृष्ट इवान्तकः ॥ ४२ ॥ विस्फुरद्भिश्च तैद्रौंणिर्निस्त्रिशस्योयमेन च। आक्षेपणेन चैवासेस्त्रिधा रक्तोक्षितोऽभवत् 11 88 11 तस्य लोहितरक्तस्य दीप्तखड्गस्य युध्यतः। अमानुष इदाकारो बभौ परसभीषणः 11 88 11 ये त्वजाग्रन्त कौरव्य तेऽपि शब्देन मोहिताः।

न्य स्तर्भ महासारी है। जो प्रमाण से महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासारी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासी है। जो स्वर्ध महासी है। जो सारी है। जो है। जो सारी है। गदा लेकर उठे, और अक्वत्थामाको राक्षस जानकर एक गदा उसकी छ।ती-में मारी, तौभी अश्वत्थामाने उसके वाल पकडकर पृथ्वीमें गिरा दिया और पश्चके समान मार डाला। (३६-३८)

हे महाराज ! तब वहांसे दूसरे दूसरे महारथोंके डेरोंमें जाकर सबको सोते ही मारडाला। किसीको कांपते हुये मारा, और किसीको उठते हुये मार-डाला। (३९)

घूम घूमकर इस प्रकार शञ्जवोंको मारा जैसे कोई यज्ञमें पशुवोंको मोर। अनन्तर सब गुल्मांमें घुसकर केवल शस्त्ररहित सोते और थके ग्रहमपालकोंको मारा फिर हाथी और घोडोंके बन्धन खड़से काट दिये, उस समय रुधिरमें भीने अञ्बत्थामाका शरीर प्रलयकालके यम-राजके समान दीखता था, खड़्मधारी अभ्वत्थामा तीन गतियोंसे मींगे । खड़को घुमाते हुये महामयानक

निरीक्ष्यमाणा अन्योन्यं हट्टा हट्टा प्रविव्यथुः ॥ ४५॥ तद्र्पं तस्य ते दृष्ट्वा क्षत्रियाः दात्रुकार्षिणः। राक्षसं मन्यमानास्तं नयनानि न्यमीलयन् 11 84 11 स घोररूपो व्यचरत्कालवविद्यविरे ततः। अपर्यद्द्रीपदीपुत्रानवशिष्टांश्च सोमकान् 11 68 11 तेन शब्देन वित्रस्ता धनुईस्ता महारथाः। धृष्टसुम्नं हतं श्रुत्वा द्रौपदेया विज्ञाम्पते 11 88 11 अवाकिरत् शरवातैभीरद्वाजमभीतवत्। ततस्तेन निनादेन संप्रवुद्धाः प्रभद्रकाः 11 88 11 विालीमुखैः शिखण्डी च द्रोणपुत्रं समार्दयन्। भारद्वाजः स तान् दृष्ट्वा श्रारवर्षाणि वर्षतः ननाद् यलवन्नादं जिघांसुस्तान्महारथान्। ततः परमसंकुद्धः पितुर्वधमनुसारन् 11 48 11 अवरुद्या रथोपस्थान्वरमाणोऽभिदुद्ववे । सहस्रचन्द्रविमलं गृहीत्वा चर्मसंयुगे ॥ ५२॥ खडूगं च विमलं दिव्यं जातरूपपरिष्कृतम्।

निरीक्ष्यमाणा
तक्र्णं तस्य ते
राक्षसं मन्यम्
स घोररूपो च
अपर्यव्द्रीपः
तेन राज्देन वि
घृष्टसुन्नं हतं
अवाकिरन र
ततस्तेन निन
शिलीसुलैः वि
मारद्वाजः स
ननाद बलवः
ततः परमसंः
अवरुख रथे।
सहस्रचन्द्रवि
खड़्गं च वि
हे क्रुकुलश्रेष्ठ ! उस समय व
तिय डेरोंमें जागते थे, वेही अस्वतः
का सरूप देखकर, चुप होकर,
वन्दकर लेते थे, और उरके मोर होजाते थे, गृह्वनाशन अस्वत्थ कर देखकर सव लोग उसे राक्ष्य नते थे, उन्हें कालके समान
डेरोंमें घृमते देख वचे हुये प
और द्रौपदीकेपुत्र जागे और अस्व माने भी उन्हें देखा। तब अनेक धारी अस्वत्थामाको देखकर डरने इतनेमें द्रौपदीके पुत्रोंने सुना कि
मामा धृष्टसुम्न मारे गये, तब वे हे कुरुकुलश्रेष्ठ! उस समय जो क्ष-त्रिय हेरोंमें जागते थे, वेही अश्वत्थामा-का खरूप देखकर, चुप होकर, आंख बन्दकर लेते थे, और डरके मारे मुर्छित होजाते थे, शत्रुनाशन अश्वत्थामाका रूप देखकर सब लोग उसे राक्षस जा-नते थे, उन्हें कालके समान अपने हेरोंमें घूमते देख बचे हुये पाश्चास और द्रौपदीकेषुत्र जागे और अस्वत्था-माने भी उन्हें देखा। तब अनेक धरुष-धारी अञ्चत्थामाको देखकर डरने लगे। इतनेमें द्रौपदीके पुत्रोंने सुना कि हमारे

क्रोध करके हरोंके द्वारकी ओर चले, वहां जाकर देखा कृपाचार्य खहे हैं, तब उन्होंने कृपाचार्यके ऊपर बाण वर्षाना आरम्भ किया इतनेमें प्रभद्रक-वंशी श्वित्रयोंमें समाचार पहुंचा तब वे लोग भी पहुंचे। (४५-४९)

तन शिखण्डी कीय करके अञ्चत्थामाके ऊपर घोर बाण वरवाने लगे।
कृपाचार्य उनको देखकर सिंहके समान
गर्जे। उस समय उस शब्दके सुनते ही
अञ्चत्थामाको अपने पिताके मरनेका
सारण आभया। तब महाकोध करके
तेज खड़ा लेकर उन वीरोंके मारनेके

द्रौपदेयानभिद्रल खड्गेन न्यधमद्यली ા ધરા ततः स नरशार्द्छः प्रतिविन्ध्यं महाहवे ! कुक्षिदेशेऽवधीद्राजन् स हतो न्यपतद्भवि 11 48 11 प्रासेन विद्ध्वा द्रौणिं तु सुतसोमः प्रतापवान् । प्रनश्रासिं समुचम्य द्रोणपुत्रमुपाद्रवत् 11 44 11 स्रुतसोमस्य सासिं तं वाहुं छित्वा नरर्षभ । पुनर्प्याहनत्पार्थे स भिन्नहृद्योऽपतत् ॥ ५६ ॥ नाकुलिस्तु दातानीको रथचकेण वीर्येवान् । दोभ्योमुत्क्षिप्य वेगेन वक्षस्येनमताइयत् ॥ ५७ ॥ अताडयच्छतानीकं मुक्तचकं द्विजस्तु सः। स विह्नलो ययौ भूमिं ततोऽस्यापाहारच्छिरः॥ ५८॥ श्रुतकर्मा तु परिघं गृहीत्वा समताडयत्। अभिद्वत्य ययौ द्रौणिं सच्ये स फलके भृज्ञम् ॥५९॥ स तु तं श्रुतकर्माणमास्ये जन्ने वरासिना। स हतो न्यपतद्भूमौ विमुदो विकृताननः तेन शब्देन वीरस्तु श्रुतकीर्तिर्महारथः।

लिये अपने रथसे कूदे और अनेक चन्द्रमाके समान प्रकाशित अनेक विन्दुयुक्त
ढाल और सोनेकी मुठवाला चमकता
हुआ खड़ लेकर द्रौपदीके पुत्रोंकी
ओर दौढ़े, और प्रतिविन्ध्यके कोखमें
एक खड़ मारा, उसके लगतेही वह
कटकर पृथ्वीमें गिर गया, उसके गिरते
ही प्रतापवान श्रुतसोमने एक प्रास
अञ्बद्धामाको मारा, और फिर खड़
लेकर उनकी ओर दौढ़े, परन्तु अञ्बत्थामाने गींग्रताके सहित उनका हाथ
काट दिया, फिर शींग्रता सहित उनकी
पद्धलीमें एक खड़ मारा, उसके लगते

ही उसका हृदय फट गया, और मरकर प्रथ्वीमें गिरगया, तव नकुलपुत्र
बलवान शतानीकको कुछ शस्त्र न मिला, तब टूटे हुये रथका पहिया उठाकर अञ्चत्थामाकी छातीमें वेगसे मारा,
तब अञ्चत्थामाने वेगसे दौडकर उसे
पृथ्वीमें गिरा दिया, और फिर उसका
शिर काट लिया, तब श्चतकर्माने दौडकर एक परिघ अञ्चत्थामाकी छातीमें
मारा, वह परिघ अञ्चत्थामाके खद्गसहित दहिने हाथमें लगा। (५०-५९)
तब अञ्चत्थामाने झपटकर उसके

999999999999999999999999 अश्वत्थामानमासाच शरवपेरवाकिरत 11 58 11 तस्यापि शरवर्षाणि चर्मणा प्रतिवार्य सः। सकुण्डलं शिरः। कायात् भ्राजमानमुपाहरत् ॥ ६२ ॥ ततो भीष्मनिहन्तारं सहसर्वैः प्रभद्रकैः। आहनत्सर्वेतो वीरं नानाप्रहरणैर्वेली 11 57 11 शिलीमुखेन चान्येन भुवोर्मध्ये समार्पयत्। स तु कोधसमाविष्टो द्रोणपुत्रो महापत्रः शिखण्डिनं समासाद्य द्विषा चिच्छेद सोऽसिना। शिखण्डिनं ततो हत्वा कोघाविष्टः परन्तपः ॥ ६५ ॥ प्रभद्रकगणान्सर्वानभिदुद्राव वेगवान् । यच शिष्टं विराटस्य वलं तु भृशमाद्रवत् 11 88 11 द्रपदस्य च पुत्राणां पौत्राणां सुहृद्रामपि। चकार कद्नं घोरं हट्टा हट्टा महावलः 11 00 11 अन्पानन्यांश्च पुरुपानभिसृत्याभिसृत्य च। न्यकृन्तदसिना द्रौणिरसिमार्गविशारदः 11 36 11 कालीं रक्तास्यनयनां रक्तमाल्यानुलेपनाम् । रक्ताम्बरधरामेकां पाशहस्तां कुटुम्बिनीम् 11 66 11

पृथ्वीमें गिर गया, तव वीर महास्थ श्चतकीर्त्त, अक्वत्थामाकी और सहस्रों बाण वर्षाने लगे, परन्तु अदवत्थामाने ढालसे उन सब बाणोंको बचाकर चम-कते हुये कुण्डली सहित शुतकीर्विका शिर छेदन किया, तब मीष्मके मारने-वाले शिखण्डीको प्रमहकतंत्री क्षत्रियों-में खडा देख अश्वत्थामा उनकी ओर दीहे, बीर शिखण्डीने मी अनेक प्रका-रके बाण चलाये, परनतु क्रुछ सिद्धि न हुई, तब एक बाण दोनों मैंहिक बीचमें मारा. उसके लगनेसे द्रोणपत्रको महा-

क्रोध हुआ, और दौड कर शिखण्डी-को मध्य शरीरसे काट दिया। शञ्चना-शन अञ्बत्थामा क्रोधमें भरकर शिख-ण्डीको मारकर प्रभद्रक सेनाकी ओर वेगसे दौंडे। फिर राजा विराटके वंशमें जो बचे थे, जो राजा द्वपद्के बेटे, पोते और मित्र रह गये थे, उन सबको मारहाला। (६०—६७)

फिर और और भी प्रधान प्रधान क्षत्रियोंको खड़से काट दिया, उस समय सब वीरोंको यह दीखता था, कि लाल फांसी हाथमें

मानामविश्वताम् ।

ा घोरैः प्रतस्थुवीम् ॥ ७० ॥

शवद्धान्विमूर्धजान् ।

शवद्धान्विमूर्धजान् ॥ ७१ ॥

श्रेष्वन्यासु मारिष् ।

द्रौणिं च सर्वदा ॥ ७२ ॥

पाण्डवसेनयोः ।

द्रौणिं च सर्वदा ॥ ७३ ॥

द्रौणिं च प्रविताः ॥ ७४ ॥

द्रौणिं च त्रवान् ॥ ७४ ॥

द्रौणिं च त्रवान् ॥ ७४ ॥

श्रेष्वतालिकम् ।

पनिपीडिताः ॥ ७५ ॥

श्रूष्यन्त घन्वनः ॥ ७५ ॥

श्रूष्यन्त घन्वनः ॥ ७७ ॥

श्रूष्यन्तिकदैः ।

अञ्चत्थामाने उनका नाग्न किया, उस

समय अञ्चत्थामाके भयानक श्रूष्य प्रवातः ।

समय अञ्चत्थामाके भयानक समानक स्प्यातः ।

समसते थे । (०४–७६)

अनन्तर उस घोर श्रूष्य प्रवातः ।

करके प्रमराजके समान रूप धारण करके किसीका प्रम, किसी का हाथ, किसीकी कोष्य और किसीकी जङ्खा काट दह्याः कालरात्रिं ते गायमानामवस्थिताम । नराश्वकुञ्जरान्पार्शेर्वदृध्वा घोरैः प्रतस्थुषीम् ॥ ७० ॥ वहन्तीं विविधान्त्रेतान्पाश्चबद्धान्विसूर्धजान् । तथैव च सदा राजन्न्यस्तशस्त्रान्महारथान् ॥ ७१ ॥ खप्ने सुप्तान्नयन्तीं तां राजिष्वन्यासु मारिष । दरशुर्योधमुख्यास्ते घन्तं द्रौणि च सर्वदा यतः प्रभृति संग्रामः कुरुपाण्डवसेनयोः। ततः प्रभृति तां कन्यामपद्यन् द्रौणिमेव च ॥ ७३ ॥ तांस्तु दैवहतान्वर्वं पश्चादद्रीणिन्येपातयत् । त्रासयन्सर्वभूतानि विनदन् भैरवान् रवान् ॥ ७४ ॥ तदनुस्मृत्य ते वीरा दर्शनं पूर्वकालिकम् । इदं तदिखमन्यन्त दैवेनोपनिपीडिताः ततस्तेन निनादेन प्रखबुद्ध्यन्त धन्विनः। शिबिरे पाण्डवेयानां शतशोऽथ सहस्रशः सोऽच्छिनत्कस्यचित्पादौ जघनं चैव कस्यचित् । कांश्चिद्धिभेद पार्श्वेषु कालसृष्ट इवान्तकः अत्युत्रप्रतिपिष्टैश्च नदङ्किश्च भृशोत्कटैः।

मुख और लाल नेत्रवाली, काली लाल माला और लाल चन्दन धारण किये काली युद्धमें घूम रही है, और फांसीसे अनेक मनुष्य और हाथियोंको मार रही है, किसीने यह देखा कि सोते हुए शस्त्रहत महारथोंको वही काली फां-सीसे खींच रही है। किसीको यह दीख-ने लगा कि यही काली और यही अञ्बत्थामा युद्धके आरम्भसे हमारा नाश कर रहे हैं। (६८---७३)

हे राजन् ! उन सब पाञ्चालोंको प्रारब्धने पहले हैं। मारहाला था, वीछे

गजाश्वमधितैश्वान्यैभेही कीर्णाऽभवत्यभो कोशतां किमिदं कोऽयं का शब्दः किं तु किं कृतम्। एवं तेषां तथा द्रौणिरन्तकः समपद्यन 11 90 11 अपेतशस्त्रसन्नाहान्सन्नद्धान्पाण्डसञ्जयान् । पाहिणोन्मृत्युलोकाय द्रौणिः प्रहरतां वरः ततस्तच्छस्त्रवित्रस्ता उत्पतन्तो भयातुराः। निद्रान्धा नष्टसंज्ञाश्च तत्र तत्र निलिलियरे **अरुस्तम्भगृहीताश्च करमलाभिहतीजसः** । विनदन्तो भुशं ऋताः समासीदन्परस्परम् ॥ ८२ ॥ ततो रधं पुनद्रौणिरास्थितो भीमनिःखनम्। धनुष्पाणिः शरैरन्यान्प्रेषयद्वै यमक्षयम् 11 63 11 पुनरुत्पततश्चापि दुराद्यपि नरोत्तमान्। शूरान्स∓पततश्चान्यान्कालराश्यै न्यवेदयत 11 82 11 तथैव स्यन्दनाग्रेण प्रमथन्स विधावति । ज्ञारवर्षेश्च विविधैरवर्षच्छात्रवांस्ततः 11 64 11 पुनश्च सुविचित्रेण शतचन्द्रेण चर्मणा। तेन चाकादावर्णन तथाऽचरत सोऽसिना 11 65 11

दी, कोई हाथी घोडोंकी मूटमें आकर मरगया, कोई कहने लगा, यह क्या है ? यह कीन है ? क्यों एक बारगी इतना दला हो रहा है ? डेरोंमें क्या

इस प्रकार अक्वत्थामा उन वीरोंके लिये कालस्प होगये शख चलानेवालों में श्रेष्ठ अञ्चत्थामाने कवच और ग्रस्टर-हित अनेक बीरोंको उठते उठते मार डाला। तव निद्रासे व्याक्कल अश्वतथा-माके शस्त्रेस पीडित अनेक क्षत्रिय इधर वधर हरसे भागने लगे। किसीका

न चला कोई भयसे व्याकुल होगया, इस प्रकार ये सब बीर हाहाकार करने लगे। तब अक्वत्थामा फिर शीव्रतास घोर शब्दवाले रथपर चढे और बार्णोसे सहस्रों वीरोंको मारने लगे और जिसकी अपनी ओर आते देखा उसकी मार-हाला । (८०-८२)

कोई रथके पहियमें आकर मर गया और किसीको अभ्यत्थामाने प्रकारके बाणोंसे मार डाला. फिर थोडी दर जाकर रथसे उतरे और आकाशके समान चमकते हुए खड्गसे फिर वीरी

तथा स शिचिरं तेषां द्रौणिराहवदुर्भदः। व्यक्षोभयत राजेन्द्र महाहद्मिव द्विपः 11 60 11 उत्पेतुस्तेन शब्देन योधा राजन्विचेतसः। निद्वात्तीश्च भयात्तीश्च व्यधावन्त ततस्ततः विखरं चुकुशुश्चान्ये बह्दबद्धं तथाऽवदन् । न च स्म प्रत्यपद्यन्त शस्त्राणि वसनानि च विमुक्तकेशाश्चाप्यन्ये नाभ्यजानन्परस्परम् । उत्पतन्तोऽपतन् आन्ताः केचित्तत्राभ्रमंस्तदा॥ ९०॥ पुरीपमसुजन्केचित्केचित्सूत्रं प्रसुसुबुः। बन्धनानि च राजेन्द्र संब्रिय तुर्गा द्विपाः समं पर्यपतंश्चान्ये क्वर्वन्तो महदाक्कलम् । तत्र केचिन्नरा भीता व्यलीयन्त महीतले 11 99 11 तथैव तान्निपतितानपिषनगजवाजिनः। तिसंस्तथा वर्त्तमाने रक्षांसि पुरुषर्षभ 11 88 11 हृष्टानि व्यनद्ञुचैर्भुदा भरतसत्तम । स शब्दः पूरितो राजन्मृतसङ्घेर्भुदायुतैः 11 88 11 अपूरयदिशः सर्वा दिवं चातिमहान्खनः। तेषामार्त्तरवं श्रुत्वा वित्रस्ता गजवाजिनः 11 64 11

को मारने लगे। महावीर अञ्चत्थामाने उस डेरेको ऐसा न्याक्कल कर दिया जैसे मतवाला हाथी तालावको व्याक्कल कर देता है। हे राजन् ! उस घोर शब्दसे सहस्रों योद्धा उठते थे, परन्तु मय और निद्रासे न्याकुल होकर इधर उधर दौडने लगते थे, कोई पृथा नकता था और कोई हाहाकार करता था। कोई शस्त्र और वस्न हूंढता था, किसीके वाल खुले थे, कोई इंघर उधर घूमता था और बैठ जाता था।(८३–९०)

हे राजन्! हाथी, घोडे अपने बन्धन छूडाकर भागते थे, कोई हाथी, घोडा मृत्र करता था और लीद करता था, कहीं योद्धा भयके मारे पृथ्वीमें सो जाते थे और हाथी घोडे उन्हें आकर मार डालते थे। (९१-९३)

े हे राजन् ! उसी समय अनेक राक्षस और भृत प्रसन्नतासे गर्जने लगे और उस शब्दसे आकाश पूरित होगया तब हाथी, घोडे इधर उधर दौडने लगे। उनके घूमनेसे घोर घूल उठी। तव महा-

मुक्ताः पर्यपतन् राजन्मृद्गन्तः शिविरे जनम्। तैस्तत्र परिधावद्भिश्वरणोदीरितं रजः 11 99 11 अकरोच्छिबरे तेषां रजन्यां द्विगुणं तमः। तिसस्तमास सञ्जाते प्रमुदाः सर्वतो जनाः ॥ ९७॥ नाजानन्वितरः पुत्रान् भ्रातृन् भ्रातर एव च। गजो गजानतिकम्य निर्मनुष्या ह्या ह्यान ॥ ९८ ॥ अताडयंस्तथाऽभञ्जंस्तथाऽमृद्धंश्च भारत । ते भग्नाः प्रपतन्ति सा निव्नन्तश्च परस्परम् ॥ ९९ ॥ न्यपातयंस्तथा चान्यानंपातयित्वा तदाऽपिषत्। विचेतसः सनिद्राश्च तमसा चावृता नराः ॥ १००॥ ज्ञष्ठः खानेव तन्नाथ कालेनैव प्रचोदिताः। त्यक्त्वा द्वाराणि च द्वास्थास्तथा गुल्मानि गौलिमकाः १०१॥ प्राद्भवन्त यथाशक्ति कान्द्रिशीका विचेतसः। विप्रनष्टाश्च तेऽन्योन्यं नाजानन्त तथा विभो ॥ १०२ ॥ क्रोद्यान्तस्तात पुत्रेति दैवोपहतचेतसः। पलायन्त दिशस्तेषां खानप्युतसूज्य वान्धवान् ॥१०३॥ गोत्रनामभिरन्योन्यमाकन्दन्त ततो जनाः। हाहाकारं च कुर्वाणाः पृथिव्यां शेरते परे 11 808 11 तान्बुद्ध्वा रणमध्येऽसी द्रोणपुत्रो न्यवारयत्। तत्रापरे वध्यमाना सुहुर्सुहुरचेतसः 11 804 11

अन्धकार छागया, तब कोई मनुष्य अपने पिता और माईको मी न पहि-चान सका, हाथी, हाथियोंकी और घोडे घोडोंकी ओर दौडे और परस्पर एक द्सरेको मारते थे, कहीं कोई हाथी, घोडा, मनुष्यको पीस देता था, कहीं निद्रा और अन्धकारसे च्याकुल चीर पडे थे, कहीं चीर अपने ही चीरोंको मारते थे. कहीं द्वारपाल द्वारोंको छोडकर इघर उघर मागते थे, कहीं गुलममें सोते बीर गुलम छोडकर इघर उघर भागते थे, कहीं बीर मयसे व्याकुल होकर बाप और बेटोंको पुकारते थे, कहीं अपने बान्धवोंको छोडकर योद्धा मागते थे, कहीं अपना अपना गोत्रका नाम लेकर अपना परिचय देते थे, कोई हाहाकार करके पृथ्वीमें गिर जाता था, जो कोई लडनेको उठता था, उसको

शिविरान्निष्पतन्ति स्म क्षात्रिया भयपीडिताः । तांस्तु निष्पतितांस्रस्तान् शिविराज्ञीवितैपिणः ॥१०६॥ कृतवर्मा कृपश्चैव द्वारदेशे निजन्नतुः। विस्रस्तयन्त्रकवचान्सुक्तकेशान्कृताञ्जलीन वेपमानान् क्षितौ भीतान्नैव कांश्चिद्मुच्यताम् । नामुच्यत तयोः कश्चिन्निष्कान्तः शिविराद्वहिः॥१०८॥ कृपश्चैव महाराज हार्दिक्यश्चैव दुर्भतिः। भूषश्चैवं चिकीर्षतौ द्रोणपुत्रस्य तौ प्रियम् 11 909 11 त्रिषु देशेषु ददतुः शिविरस्य हुताशनम् । ततः प्रकाशे शिविरे खड्गेन पितृनन्दनः 11 880 11 अश्वत्थामा महाराज व्यचरत्कृतहस्तवत् ! कांश्चिदापततो वीरानपरांश्चेव धावतः 11 888 11 व्ययोजयत खड्गेन प्राणैऽर्ह्विजवरोत्तमः। कांश्रियोघान्स खड्गेन मध्ये सन्छिय वीर्यवात्॥११२॥ अपातयदोणपुत्रः संरब्धस्तिलकाण्डवत्। निनदद्भिर्भृशायस्तैनेराश्वद्विरदोत्तमैः 11 883 11 पतितैरभवत्कीणीं मेदिनी भरतर्षभ । मानुषाणां सहस्रेषु हतेषु पतितेषु च 11 888 11 उद्तिष्ठन्कवन्धानि वहून्युत्थाय चापतन् ।

अरवत्थामा मार डालता था,जो क्षत्रिय भयसे व्याकुल होकर अपना जीव लेकर भागता था; उसीको द्वारपर क्रपाचार्य और कृतवर्मी मार डालते थे। (९४-१०६)

शस्त्रहित और कवचरहित हाथ जोडते हुये और कांपते हुये, श्रत्रियोंको भी उन्होंने मार डाला, कोई जीता वीर डेरोंके बाहर न निकल सका। अनन्तर दर्बोद्धे कृपाचार्य और कृतवमोंने और

अभ्वत्थामाकी प्रसन्नताके लिये हेरोंमें तीनों ओर आग लगाय दी। तब बीर अञ्चत्थामा खड्ग लेकर ग्रीघतासे उस चान्दनेमें घूमने लगे। तब सहस्रों वीरोंको खड्गसे इस प्रकार मारडाला जैसे कोई मजुष्य तिलके वृक्ष उखाडकर फेंक देता है।(१०७-११३)

तव हाथी गर्जने लगे, मरे हुये मनुष्योंसे पृथ्वी भर गई, किसी वीरका हाथ कट गया, किसीका पैर कट गया.

किसीकी पीठ फट गई, किसीका मुंह कट गया, इस प्रकार महात्मा अञ्ब-त्थामाने सहस्रों वीरोंको गिरा दिया, वह भयानक अन्धकार रात्रि और भी भयानक दीखने लगी, कहीं न गारने योग्य शरीरमें शस्त्र लग गया, वह रात्रि मागते हुये हाथी, घोडे और मनुष्यांसे मयानक दीखने लगी, और कोई माई-को, कोई बापको, और कोई बेटोंको

जितेन्टिय और सब मनुष्योंपर

आसीन्नरगजाश्वानां रौद्री क्षयकरी भृदाम् ॥ १३३॥ तत्रादृश्यन्त रक्षांसि पिशाचाश्च पृथग्विधाः। खादन्तो नरमांसानि पिवन्तः शोणितानि च॥१३४॥ करालाः पिङ्गलाश्चेव शैलदन्ता रजस्वलाः । जिंदिला दीर्घशङ्खाश्च पञ्चपादा महोद्राः ॥ १३५॥ पश्चादङ्गुलयो रूक्षा विरूपा भैरवखनाः। घंटाजालावसक्ताश्च नलिकण्ठा विभीषणाः॥ १३६॥ सपुत्रदाराः सक्र्राः सुदुर्दशाः सुनिर्धृणाः। विविधानि च रूपाणि तत्रादृश्यन्त रक्षसाम्॥ १३७॥ पीत्वा च शोणितं हृष्टाः शानुत्यनगणशो परे। इदं परिमदं मेध्यमिदं स्वाद्विति चाज्ञवन् ॥ १३८॥ मेदोमजास्थिरक्तानां वसानां च भृशाशिताः। परे मांसानि खादन्ता ऋव्यादा मांसजीविना॥१३९॥ वसाश्चैवापरे पीत्वा पर्यधावत्विक्कक्षिकाः। नानावक्त्रास्तथा रौद्राः ऋव्याद्याः पिश्चिताञ्चानाः॥१४०॥ अयुतानि च तन्नासन्प्रयुतान्युर्वुदानि च। रक्षसां घोररूपाणां महतां क्रूरकर्मणाम् मुदितानां वित्रशानां तिसन्महति वैशसे।

का नाश करनेवाली थी और मांस खा-नेवाले भूत और जन्तुओंको प्रसन्नता बढाती थी, तब अनेक प्रकारके राक्षस घूमने लगे, वे मनुष्योंके मांस खाने और रुचिर पीने लगे, कोई भयानक धुमले रङ्गवाला किसीके बडे वडे दांत, कोई धूलमें भरा, किसीके वडी वडी जटा, किसीका वडा ग्रह, किसीका वडा पेट, किसीके पैरके पक्षे पीछेको थे, कोई घण्टा बजा रहा था, किसीका नीला-कण्ठ था, कोई महाभयानक था,

भयानक निर्देय अनेक रूपधारी राक्षस प्रत्र और स्त्रियोंके सहित वहां आए, फिर मनुष्योंका रुधिर पीकर नाचने लगे और कहने लगे कि यह रुधिर बडा स्वादमें श्रेष्ठ और पीने योग्य है, मांस खाने वाले जन्तु भी प्रसन्नता पूर्वक रुधिर पीने लगे. चरबी मांस और वसा खाने लगे । चरबी खानेसे राक्षसीं के पेट फूल गये, एक प्रकारके मुखवाले मयानक सहस्रों राक्षस मनुष्योंको घोर

• हमा कि से मार्थिक कर के कि से मार्थिक कर मार्यिक कर मार्थिक कर समेतानि बहुन्यासन् भूतानि च जनाधिप ॥ १४२ ॥ प्रत्युषकाले शिविशात्प्रतिगन्तुमियेष सः नुशोणितावसिक्तस्य द्रौणेरासीदसित्सरः ॥ १४३ ॥ पाणिना सह संश्लिष्ट एकीभूत इव प्रभी। दुर्गमां पदवीं गत्वा विरराज जनक्षये 11 888 11 युगान्ते सर्वभूतानि भसा कृत्वेव पावकः। यथाप्रतिज्ञं तत्कर्भ कृत्वा द्रौणायनिः प्रभो ॥ १४५ ॥ दुर्गमां पदवीं गच्छन्पितुरासीद्गतज्वरः। यथैव संसप्तजने शिविरे पाविशित्रिश 11 888 11 तथैव हत्वा नि:शब्दे निश्चकाम नर्षेभः। निष्कम्य शिविरात्तसात्ताभ्यां सङ्गम्य वीर्यवान् ॥ १४७ ॥ आचल्यौ कर्म तत्सर्वं हृष्टः संहर्षयन्विभो । तावधाचरुयतुस्तस्मै प्रियं प्रियकरौ तदा 11 288 11 पाञ्चालान्सुञ्जयांश्चेच विनिकृत्तान्सहस्रदाः। पीला चोबैरदकोशंस्तथैवास्फोटयंस्तलान एवंविधा हि सा रात्रिः सोमकानां जनक्षये।

हराते थे, उस घोर युद्धमें मांस खाकर और रुधिर पीकर बहुत हुये।(१३५--१४२)

तव अर्वत्थामाने देखा कि आकाश लाल होगया, उस समय अञ्चत्थामाके खड्गकी मूठि रुधिरसे भीग गई थी और खद्ग हाथमें फंस गया था, मानो एक ही होगया था। तब अञ्चत्थामाने भी डेरोंसे निकलनेकी इच्छा करी और उस घोर कर्मको करके प्रसन्नता पूर्वक ऐसे खडे हुए जैसे प्रलयकालमें आग्न। उन्होंने इस कर्मको अपनी प्रतिज्ञानुसार ही समाप्त किया, फिर अपने पिताके मर-

नेका शोक भी छोड दिया। (१४३-१४६)

प्ररुपसिंह अक्वत्थामा सोते शब्द रहित डेरोंमें घुसे थे और सबको मार-कर शब्दरहित डेरोंमेंसे निकले, फिर डेरोंसे बाहर आकर कृपाचार्य और कृतवमीसे मिले और प्रसन्न होकर उनसे सब समाचार कहा और वह भी सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे, कि अच्छा हुआ फिर ताली बजाने लगे। हे महाराज! इस प्रकार यह भयानक रात्री सोमकोंके लिये आई थी, उसमें सोते हुए उन्मत्त सहस्रों सोमकाँका नाश

प्रसुप्तानां प्रमत्तानामासीत्सुभृशदारुणा असंशयं हि कालस्य पर्यायो दुरतिक्रमः। तादृशा निहता यत्र कृत्वाऽसाकं जनक्षयम्॥ १५१॥ धतराष्ट्र उवाच-प्रागेव सुमहत्कर्भ द्रौणिरेतन्महारथः। नाकरोदीहर्शं कस्मान्मत्युत्राविजये धृतः 11 842 11 अथ कसाद्धते क्षुद्रं कर्मेदं कृतवानसी। द्रोणपुत्रो महात्मा स तन्मे शंक्षितुमहीस ॥ १५३ ॥ तेषां नृनं भयात्रासौ कृतवान्क्रस्नन्दन। असान्निध्याद्धि पार्थानां केशवस्य च धीमतः ॥१५४॥ सात्यकेश्वापि कर्मेंदं द्रोणपुत्रेण साधितम्। को हि तेषां समक्षं तान् इन्यादिष महत्पति॥१५५॥ एतदीहशकं वृत्तं राजनसुप्तजने विभो। ततो जनक्षयं कृत्वा पाण्डवानां महात्ययम्॥ १५६॥ दिष्टया दिष्टयैव चान्यीन्यं समेलोचुर्भहारथाः। पर्येष्वजत्ततो द्रौणिस्ताभ्यां सम्प्रति नन्दितः ॥१५७॥ इदं हर्षात् सुमहदाददे वाक्यमुत्तमम्। पाञ्चाला निहताः सर्वे द्रौपदेयाश्च सर्वशः ॥ १५८॥

सेनाका नाश किया था और यही आज इस प्रकार मारे गये, कालकी गतिको कोई नहीं जान सक्ता, यह बडी ही कठिन है। (१४६-१५१)

धतराष्ट्र बोले, हे सज्जय ! महारथ अञ्चरथामाके यह इच्छा तो थी, कि हमारे पुत्रकी विजय होय, तब उन्होंने पहिले यह कर्म क्यों नहीं किया था ? दुर्योधनके मरनेपर महारमा द्रोणपुत्रने ऐसा कुकर्म क्यों किया सो तुम हमस कहो ? (१५२-१५३)

सञ्जय बोले, हे कुरुकुलश्रेष्ठ! पा-

ण्डवोंके और कृष्णके सबसे अञ्चत्थान माने ऐसा नहीं किया था, आज वे पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकी सेनामें नहीं थे, इसही लिये अञ्चत्थामाने इनको मार डाला। यदि वे लोग होते तो साक्षात् इन्द्र भी उन लोगोंको नहीं मार सक्ता था। (१५४-१५५)

हे महाराज ! इस प्रकार यह सोती हुई पाण्डव सेनाका नाश हुआ, तब तीनों महारथ कहने लगे कि बहुत अच्छा हुआ, तब अक्वत्थामा अत्यन्त प्रसन्न होकर बोले, कि सब पाश्चाल सोमका मत्स्यशेषाश्च सर्वे विनिहता मया। इदानीं कृतकृत्याः सम याम तत्रैव मा चिरम्। यदि जीवति नो राजा तस्मै शंसामहे वयम्॥ १५९॥ [४७५]

विशेष्ठ विशेष स्तिमका हदानी हि यदि जी हि यह ते सम के यह सम इति श्रीमहामारते० वैयासिक्यां सीसिके पर्वणि रात्रियुद्धे पान्चालादिवघेऽष्टमोऽप्यायः॥ ८ ॥ सञ्जय उवाच— ते हत्वा सर्वेपाश्चालान्द्रीपदेयांश्च सर्वेशः । आगच्छन्सहितास्तत्र यत्र दुर्योधनो हतः 11 8 11 गत्वा चैनमपद्यन्त किञ्चित्राणं जनाधिपम्। ततो रथेभ्यः प्रस्कन्य परिवत्रुस्तवात्मजम् 11 7 11 तं भग्नसक्यं राजेन्द्र कुच्छ्याणमचेतसम्। वमन्तं रुधिरं वक्त्रादपद्यन्वसुधातेल 11 3 11 वृतं समन्ताद्वहुभिः श्वापदैघीरदर्शनैः। शालावकगणैश्चैव भक्षायिष्यद्विरन्तिकात् 11811 निवारयन्तं कुछात्तान् श्वापदांश्च चिखादिपृन्। विचेष्टमानं मद्यां च सुभूशं गाढवेदनम् तं शयानं तथा दृष्टा भूमौ सुरुधिरोक्षितम्। हतिशाष्ट्रास्त्रयो वीराः शोकार्त्ताः पर्यवारयन् अश्वत्थामा कृपश्चेच कृतचर्मा च सात्वतः। तैस्त्रिभिः शोणितादिग्धैर्निःश्वसाद्विमेहार्थैः

द्रौपदीके पुत्र, सोमक और वचे हुथे मत्स्यवंशी श्रुत्रिय मारे गये, अव हम लोग कृतकृत्य होगए, अब राजाके पास चलना चाहिये। कदाचित वे जीते होयं, तो उनसे यह सब समाचार क-

सौष्तिकपर्वमें भाठ अध्याय समाप्त । सौप्तिक पर्वमें नौ अध्याय।

सञ्जय बोले, हे राजन ! ये तीनों वीर पाश्चाल और द्रौपदीके पुत्रोंको मारकर रथोंपर चढकर वहां पहुंचे

जहां राजा दुर्योधन पडे थे, उन्होंने जाकर देखा कि महाराज मरा ही चा-हते हैं। तब वे सब रथोंसे उतरे और राजाके पास गये, उस समय राजा तडफ रहे थे, उनके मृहसे रुधिर बहुता था. चारों ओर अनेक खार और मेडिये आदि मांस खानेवाले जन्तु खडे थे. और पीडासे व्याकुल राजा दुर्योधन कठि नतासे उनको हटा रहे थे, तब ये तीनों वीर रुधिर भीगे राजाके पास गये और शोकसे न्याकल होकर खडे होगए।१.७ कुप उवाच---

999999999999999

भः ।

॥ १ ॥

॥ १ ॥

॥ १ ॥

॥ १ ॥

॥ १ ॥

॥ १ ॥

॥ १ ॥

। ॥ १ ॥

इस महात्मा यशस्वी

मं नहीं छोडती; अव

मी इनको नहीं छोडके भ्षणवाली गदा

के सङ्ग प्यारी स्त्रीके

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

एडे हुये घूल खाते

एडे हुये घूल खाते

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

एडे हुये घूल खाते

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

एडे हुये घूल खाते

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

एडे हुये घूल खाते

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

एडे हुये घूल खाते

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

हाय ! यही शञ्जनाले राजोंके आगे चलते

हाय ! यही श्रा खात्र खाते

हाय ! यही श्रा खात्र खात्र खाते

हाय ! यही श्रा खात्र खात्र खात्र खाते

हाय ! यही श्रा खात्र खात्र खाते

हाय ! यही श्रा खात्र शुशुभे स वृतो राजा वेदी त्रिभिरिवाग्निभिः। ते तं शयानं सम्प्रेक्ष्य राजानमतथोचितम् अविषद्येन दुःखेन ततस्ते रुखुस्त्रयः। ततस्तु रुधिरं हस्तैर्भुखान्निर्भुज्य तस्य हि। रणे राज्ञः शयानस्य कुपणं पर्यदेवयन् न दैवस्यातिभारोऽस्ति यदयं रुधिरोक्षितः। एकादशचम्भर्ता शेते दुर्योधनो हतः पद्य चामीकराभस्य चामीकरविभूषिताम्। गदां गदाप्रियस्येमां समीपे पतितां सुन्नि इयमेनं गदा शूरं न जहाति रणे रणे। खर्गायापि व्रजन्तं हि न जहाति यशस्त्रिनम् ॥ १२॥ पद्यमां सह वीरेण जाम्बूनद्विभूषिताम् । श्रायानां शयने हम्पें भार्या प्रीतिमतीमिव ॥ १३॥ योऽयं मूर्घाभिषिक्तानामग्रे जातः परन्तपः। स हतो ग्रसते पांसून्पइय कालस्य पर्ययम् ॥ १४॥ येनाजौ निहता भूमावशेरत हतद्विषः।

उस समय इन तीनों रुधिर भीगे ब्रीरोंके बीचमें राजाकी ऐसी शोमा दीखती थी, जैसे तीन अग्नियोंके बीचमें प्रधान अग्नि की । महाराजको अनुचित रीतिसे पडे देख तीनों बीर सांस लेकर रोने लगे। तब कृपाचार्य उनके पास गये और उनके मुखका रुधिर अपने हाथसे पोछकर रोकर कहने लगे। प्रार-व्य बहुत बडी बस्तु है देखो ग्यारह अक्षौहिणीके खामी राजा दुयोंघन आज पृथ्वीमें मूर्चिछत होकर सोते हैं; देखो सोनेके समान रङ्गवाले गदाके प्यारे महाराजकी सोनेसे भूषित गदा पृथ्वीमें

पड़ी है, यह गदा इस महात्मा यशस्वी वीरको किसी युद्धमें नहीं छोडती; अब खर्ग जाते समय भी इनको नहीं छोड-ती। (८-१२)

देखो यह सोनेके भूषणवाली गदा इन महात्मा वीरके सङ्ग प्यारी खीके समान सोती है। हाय ! यही शत्रना-शन महाराज पहिले राजोंके आगे चलते थे, आज पृथ्वीमें पडे हुये पूल खाते हैं। समय बढ़ा कठिन है। हाय ! जिस क्रुराजके हाथसे मारे हुए सहस्रों शञ्च पृथ्वीमें सोते थे, वही ये आज शत्रुओं-

स भूमी निहतः शेते कुरुराजः परैरयम् 11 84 11 भयान्नमन्ति राजानो यस्य स शतसङ्घराः। स वीरशयने शेते ऋव्याद्गिः परिवारितः 11 85 11 उपासत द्विजाः पूर्वमर्थहेतोर्थमीश्वरम् । उपासते च तं हादा क्रव्यादा मांसहेतवः 11 89 11 सञ्जय दवाच- तं शयानं कुरुश्रेष्टं ततो भरतसत्तम । अश्वत्धामा समालोक्य करुणं पर्यदेवयत् ॥ १८॥ आहुस्त्वां राजशार्द्ल सुद्यं सर्वधनुष्मताम्। घन्।ध्यक्षोपमं युद्धे शिष्यं सङ्कर्पणस्य च 119911 कथं विवरमद्राक्षीङ्गीमसेनस्तवानय। वलिनं कृतिनं नित्यं स च पापात्मवात्रृप 11 30 11 कालो नूनं महाराज लोकेऽसिन्यलवत्तरः। पद्यामी निहतं त्वां च भीमसेनेन संयुग ॥ २१ ॥ कथं त्वां सर्वधर्मज्ञं क्षुद्रः पापो वृकोदरः। निक्रलाहतवान्मन्दो नृनं कालो दुरलयः ॥ २२ ॥ धर्मगुद्धे हाधर्मण समाह्यौजसा मधे। गदया भीमसेनेन निभेन्ने सक्थिनी तव 11 55 11 अवर्मेण हतस्याजौ मृद्यमानं पदा शिरः।

जिनको देखते ही सैकडों राजा डरसे नीचे हो जाते थे, नहीं महाराज आज मांस खानेवाले जन्तुवोंके बीचमें वीरके योग्य शब्यापर सो रहे हैं,जिन महारा-जके पास हर समय सहस्रों त्राह्मण धन के लिये बैठे रहते थे, इन्हींके पास आज मांस खानेके लिये स्यार खडे हैं। (१३-१७)

सञ्जय बोले, कुरुकुलश्रेष्ठ दुर्योधनकी इस प्रकार पृथ्वीमें पडे देख अञ्चरधामा ऊंचे स्वरसे रोने लगे और कहने लगे। हे राजशार्द्ल आपको सब जगत्के क्षत्रिय, घनुषधारियोंमें श्रेष्ठ कहा करते घे, आप क्रुवेरके समान योद्धा साक्षात वलरामके शिष्य हैं । है पापरहित ! भीमसेनने अन्तर पाकर आपको कैसे मारहाला ? (१८-२०)

हे महाराज! महापराक्रमी और अत्यन्त चतुर आपको पापी भीमसेनके हाथसे मरा हुआ हम देखते हैं, समयकी गति बहुत ही कठिन, पापी, क्षुद्र, मूखें

य उपेक्षितवान् क्षुद्रं धिक्कृष्णं धिग्युधिष्ठिरम् ॥२४॥ युद्धेष्वपवदिष्यान्ति योधा नृनं वृकोदरम् । यावत्स्थास्यन्ति भूतानि निकृत्याद्यासि पातितः॥२५॥ ननु रामोऽब्रवीद्राजंस्त्वां सदा यदुनन्दनः। दुर्योधनसमो नास्ति गद्या इति वीर्यवान् श्लाघते त्वां हि वार्ष्णेयो राजन्संसत्स्र भारत । स शिष्यो मम कौरव्यो गदायुद्ध इति प्रभो॥ २७॥ यां गतिं क्षत्रियस्याहुः प्रशस्तां परमर्षयः। हतस्याभिमुखस्याजौ पाप्तस्त्वमसि तां गतिम्॥ २८॥ दुर्योधन न शोचामि त्वामहं पुरुषर्भ । हतपुत्री तु शोचामि गान्धारीं पितरं च ते भिश्लकौ विचरिष्येते शोचंतौ पृथिवीमिमाम्। धिगस्त कृष्णं वाष्णेयमर्जुनं चापि दुर्मतिम् ॥ ३० ॥ धर्मज्ञमानिनौ यौ त्वां वध्यमानस्रपेक्षताम् । पाण्डवाश्चापि ते सर्वे किं वक्ष्यन्ति नराधिप ॥ ३१॥

मारडाला । इससे हम जानते हैं, कि समयकी गति वडी कठिन है, धर्मसे वुलाकर और धर्म युद्ध आरम्भ करके भीमसेनने आपकी जङ्घा वोड दी, इस-से अधिक अधर्म और क्या होगा? जिसने अधर्मसे मरे हुये आपके शिरमें पैर रखते भीमसेनको देखा उस क्षद्र, कृष्ण और युधिष्टिरको धिकार है, जब-तक पृथ्वीमें मनुष्य रहेंगे तब तक सब वीर भीमसेनकी अवस्य निन्दा करें-हो । (२०-२५)

हे महाराज ! यद्कुलश्रेष्ठ वीर बलराम सदा कहा करते थे.

नहीं है, बलराम सब सभाओंमें आ पकी प्रशंसा किया करते थे. राजा दुर्योधन गदायुद्धमें हमारे शिष्य हैं, हे महाराज ! महाम्रुनियोंने जो क्षत्रियोंके लिये उत्तम गति कही है. युद्धमें मरनेसे आपका वही गति प्राप्त हुई। (२६--२८)

हे पुरुषसिंह दुर्योधन ! हम आपका कुछ शोच नहीं करते परन्तु हमें पुत्रर-हित गान्धारी, और आपके पिताहीका शोच है, वे दोनों बढ़े शोकसे व्याकुल होकर मिश्रकोंके समान पृथ्वीमें घुमेंगे, दुर्बुद्धी कृष्ण और अर्जुनको थिकार है,

क्यं द्योघनोऽसाभिहेत इसनपत्रपाः। घन्यस्त्वमसि गान्धारे यस्त्वमायोधने इतः ॥ ३२॥ प्रायशोऽभिमुखः शत्र्रधमेण पुरुषर्भ । हतपुत्रा हि गान्धारी निहतज्ञातिवान्धवा स ३३ ॥ प्रज्ञाचक्षुश्च दुर्धर्षः कां गतिं प्रतिपत्स्यते। धिगस्तु कृतवर्माणं मां कृपं च महारथम् 11 38 11 ये वयं न गताः खर्गं त्वां पुरस्कृत्य पार्थिवम् । दातारं सर्वेकामानां रक्षितारं प्रजाहितम् ॥ ३५ ॥ यद्वयं नानुगच्छाम त्वां धिगसान्नराधमान् । क्रपस्य तव वीर्येण मम चैव पितुश्च मे 113811 सभृत्यानां नरव्याघ्र रत्नवन्ति गृहाणि च। तव प्रसादादसाभिः समित्रैः सहवान्धवैः अवाप्ताः कतवो मुख्या बहवो भूरिद्क्षिणाः। कुतश्चापीदृशं पापाः प्रवर्त्तिष्यामहे वयम् ॥ ३८॥ यादृशेन पुरस्कृत्य त्वं गतः सर्वपार्धिवान् । वयमेव त्रयो राजन् गच्छन्तं परमां गतिम् ॥ ३९॥ यद्वै त्वां नातुगच्छामस्तेन घक्ष्यामहे वयम् । तत्खरीहीना हीनाथीः सरंतः सुकृतस्य ते किं नाम तद्भवेत्कर्म येन त्वां न ब्रजाम वै।

की यह दशा देखते रहे निर्ुं पाण्डन नया यह कह सर्नेगे, कि हमने दुर्योध-नको घर्मसे मारा ? (२९—३१)

हे गान्धारापुत्र ! आपको घन्य है, जो शत्रुवोंके आगे घमेयुद्धमें मारे गये, परन्तु पुत्रराहेत गान्धारी और अन्धे-राजाकी क्या गति होगी हमे यही शोक है, महारथ कृपाचार्य, कृतवमी, और हमे विकार है, जो आपके सङ्ग खर्गको न चले,आप हमें सब प्रकारका सुख देते थे, रक्षा करते थे, और प्रजाका कल्याण करते थे, सो हम आपके सङ्ग न चल सके इसलिये हम नीच मतुष्योंको धि-कार है, हमने, हमारे पिताने और कृपाचार्यने आपकी कृपासे रह मरे घर पाये, आपकी प्रसन्नतासे हम लोगोंने मित्र और बान्धवांके सहित दक्षिणाओं के सहित भारी मारी यह करी अब हम पापी इस जगत्में कैसे जियेंगे। अब हम इस जगत्में रहकर दरिद्र होकर

सञ्जय उंवाच-

द्राः वं नूनं क्रुरुश्रेष्ठ चरिष्याम महीमिमाम् हीनानां नस्त्वया राजन्कुतः ज्ञान्तिः कुतः सुखम् । गत्वैव तु महाराज समेल च महार्थान् यथाज्येष्ठं यथाश्रेष्ठं पूजयेर्वेचनान्मम । आचार्यं पूजियत्वा च केतुं सर्वधनुष्मताम् 0.83 0 हतं मयाच शंसेथा धृष्टचुन्नं नराधिप। परिष्वजेथा राजानं वाल्हिकं सुमहारथम् 11 88 11 सैन्धवं सोमदत्तं च भूरिश्रवसमेव च। तथा पूर्वगतानन्यान् खर्गे पार्थिवसत्तमान् असाद्वाक्यात्परिष्वज्य संपृच्छेस्वमनामयम् इस्रेवसुक्त्वा राजानं भग्नसक्थमचेतनम्। अश्वत्थामा समुद्रीक्ष्य पुनर्वचनमन्नवीत् ॥ ४७॥ दुर्योपन जीवासि त्वं वाक्यं श्रोत्रसुखं शृणु । सप्त पाण्डवतः शेषा घार्त्तराष्ट्रास्त्रयो वयम् ते चैव भ्रातरः पश्च वासुदेवोऽध सालकिः। अहं च कृतवर्मी च कृपः शारद्वतस्तथा 11 88 11

आपके धर्मका सारण करेंगे, वह कौनसा कर्म आपका है, जिसका सरण हम नहीं करेंगे।(३२--४१)

हे कुरुकुल्लेष्ठ ! अव हमको जगत्में दःख ही भोगना शेष है, क्यों कि अब आपके विना इमकी सुख और शान्ति कहां ? हे महाराज आप खर्गमें जाकर सब महारथियोंसे मिलकर हमारी ओरसे क्रमके अनुसार सबकी पूजा करना, फिर सब धनुपधारियों में श्रेष्ठ गुरुजीको प्रणाम करके कहना, कि मैंने धृष्टशु-सको मारंडाला । फिर महारथ राजा बाह्रीक, सिन्धुराज जयद्रथ, सोमदत्त

और भूरिश्रवादि स्वर्गमें बैठे राजोंसे मिलकर क्रगल प्रश्न करना। (४२–४६)

सञ्जय बीले, जांध टूटे मूर्विछत राजासे ऐसा कहकर फिर उनके मुख-की और देखकर अश्वत्थामा बोले, हे महाराज दुर्योधन! अभी आप जीते हो तो कानको सुख देनेवाले, मेरे वचन सुनिये, अब पाण्डवींकी सब सेनामें केवल सात मजुष्य शेष हैं और आपकी ओरसे हम तीन बचे हैं, पाण्ड-बोंकी ओर पांचों पाण्डव, छठे कृष्ण और सातर्ने सात्यकी, आपकी ओर मैं

द्रौपदेया हताः सर्वे धृष्टगुन्नस्य चात्मजाः। पाञ्चाला निह्ताः सर्वे मत्स्वरोषं च भारत कृते प्रतिकृतं पर्य हतपुत्रा हि पाण्डवाः । सौतिके शिविरं तेषां हतं सनरवाहनम् ॥ ५१ ॥ मया च पापकमीऽसी धृष्टसुन्नो महीपते । प्रविद्य शिविरं रात्री पद्यमारेण मारितः 11 42 11 दुर्योधनस्तु तां वाचं निशम्य मनसः प्रियाम्। प्रतिलभ्य पुनश्चेत इदं वचनमत्रवीत् ॥ ५३ ॥ न मेऽकरोत्तद्वाङ्गयो न कर्णी न च ते पिता ! यत्त्वया कृपभोजाभ्यां सहितेनाय मे कृतम् ॥ ५४ ॥ स च सेनापतिः क्षुद्रो हतः सार्धे शिखण्डिना । तेन मन्ये मचवता सममात्मानमच वै खस्ति प्राप्नत भद्रं वः खर्गे नः सङ्गमः पुनः । इस्रेवमुक्त्वा तृष्णीं स क्रुरुशको महामनाः ॥ ५६ ॥ प्राणानुपासृजद्वीरः सुहृद्ां दुःखमुतसृजन् । अपाकामहिवं पुण्यां शरीरं क्षितिमाविशत 11 49 11

द्रौपदीके पांची पुत्र, धृष्टसुस्रके पुत्र पाश्चाल और मत्स्यवंशी सब वचे हुए क्षत्री मारे गये; मैंने आपके वैरका बद-ला ले लिया, पाण्डवींका वंश नाश होगया। मैंने रातको डेरोंमें घुसकर वाहनों सहित सब वीरोंको मारडाला पृथ्वीनाथ ! मैंने हेरोंमें घुसकर पापी सोते हुये धृष्ट्युम्नको पशुके समान मारा। (५०--५२)

राजा दुर्योधन अञ्चत्थामाके प्यार वचन सुनकर चैतन्य होकर बोले, जो कर्म भीष्मने, तुम्हारे पिता द्रोणाचार्यने र्थ और कृतवर्माके सहित तुमने मेरे लिये किया, पापी क्षद्र पाण्डवींका सेनापति शिखण्डीके सहित मारा गया; यह सुन कर मैं अपनेको इन्द्रके समान मानता हूं। आप लोगोंका करवा ण हो। अब इम फिर आप लोगोंसे खर्गमें मिलेंगे। (५३-५६)

हे राजन् ! ऐसा कहकर महावीर, महामनस्वी दुर्योधन ज्ञान्त होगये और भित्रोंका शोक वढा करके प्राण पवित्र स्वर्गको चला गया, और श्ररीर यहां पडा रहा। हे महाराज ! इस प्रकार आपके प्रत्र दुर्योधन शत्रुओंसे प्रद्ध कर-

විය මෙයෙන් මෙන්න මෙන්න මන්නට වන්නට වන්නට වන්නට වන්නට මන්නට මන්නට මන්නට මන්නට මන්නට මන්නට මන්නට මන්නට

99999996666666666666666666 एवं ते निषनं यातः पुत्रो दुर्योधनो ऋप। अग्रे यात्वा रणे शूरः पश्चाद्विनिहतः परैः 119611 तथैव ते परिष्वक्ताः परिष्वज्य च ते सृपम् । पुनः पुनः प्रेक्षमाणाः खकानारुरह रथान् 11 49 11 इत्येवं द्रोणपुत्रस्य निशम्य करुणां गिरम्। प्रत्युषकाले शोकार्त्ताः प्राद्ववन्नगरं प्रति 11 90 11 एवमेप क्षयो वृत्तः कुरुपाण्डवसेनयोः। घोरो विशसनो रौद्रो राजन् दुर्मंत्रित तव ॥ ६१ ॥ तव प्रत्रे गते स्वर्ग शोकार्त्तस्य ममानघ । ऋषिदत्तं प्रनष्टं तहिब्यदर्शित्वमय वै ॥ ६२ ॥

वैशम्पायन उवाच-इति श्रुत्वा स रूपतिः पुत्रस्य निधनं तदा । निःश्वस्य दीर्घमुष्णं च ततश्चिन्तापरोऽभवत् ॥६३ ॥[५३८] इति श्रीमहामारते शतसाहस्त्यां संहितायां वेवासिक्यां सौष्तिके पर्वाण द्वर्योधनप्राणसागे नवमोऽध्याय: ॥ ९ ॥

अधैषीकपर्व ।

वैश्वन्यायन उवाच-तस्यां रात्र्यां व्यतीतायां घृष्टसुम्रस्य सारथिः। शशंस धर्मराजाय सीप्तिके कदनं कृतम् द्रौपदेया हता राजन्द्रपदस्यात्मजैः सह। स्त उवाच-

के मारे गये, ये तीनों वीर भी मरे हुए राजाका स्पर्ध करके रोते हुये अपने अपने रथोंपर बैठे और पीछेका देखते हथे शोकसे व्याकुल होकर, नगरकी ओर चले। उसी समय सर्थ भी उदय होने लगा। (५६-६०)

हे महाराज ! आपकी बुरी सम्मतिसे यह क्रुरुकुलका नाश हुआ। हे महा-राज! जब आपके पुत्र स्वर्गको चले गये. तव मुझे भी न्यासदेवजीकी दी हुई दिव्य दृष्टि नष्ट होगई।

म्पायन ग्रुनि बोले, राजा भृतराष्ट्र इस प्रकार अपने प्रत्रका भरना सुनकर शोकसे न्याकुल होगये और चिन्ता करने लगे। (६१--६३) [५३८]

साप्तिकपर्वमें नौ अध्याय समाप्त ।

सीप्तिकपर्वमें दस अध्याय। २ ऐषीकपर्व ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! जब रात्रि बीत गई तब घृष्ट्यस्नका सारथी धर्मराजके

प्रमत्ता । १ १ एपीकप वे प्रमानता । १ १ एपीकप वे प्रमत्ता निश्चि विश्वस्ताः स्वपन्तः शिविरे स्वके ॥ २ ॥ कृतवर्षणा नृशंसेन गौतमेन कृपेण च । अश्वत्थान्ना च पापेन हतं वः शिविरं निश्चि ॥ ३ ॥ एतेर्नरगजात्वानां प्रास्त्राक्तिपरश्वेः । सहस्राणि निकृत्तद्भिनिंश्चेषं ते वलं कृतम् ॥ ४ ॥ छिचमानस्य महतो वनस्यव परश्वेः । गुरुषु सुमहान शन्दो वलस्य तव भारत ॥ ५ ॥ अहमेकोऽवशिष्टस्तु तस्रात्तैन्पानमहामते । मुक्तः कथं चिद्मात्मन् च्यग्नाच कृतवर्षणः ॥ ६ ॥ तन्त्रवृत्वा वाक्यमशिवां कुन्तीपुन्नो गुिषित्रः । पपात मन्नां दुर्थयः पुत्रज्ञोकसमन्वितः ॥ ७ ॥ पतन्तं तमितिकम्य परिजग्राह साल्यिकः । ॥ ८ ॥ पतन्तं तमितिकम्य परिजग्राह साल्यिकः । भामसेनोऽर्जुनश्चेव माद्रीपुन्नौ च पाण्डवौ ॥ ८ ॥ जन्त्रवा शास्त्रवा कृत्वास्तु कीन्तेयः ग्रोकिवहल्या गिरा । जित्वा शासून् जितः पश्चात्पर्यदेवयवार्त्तवत् ॥ ९ ॥ हिंद्रवा गतिरर्थानामपि ये दिव्यचश्चप्रा ।

महाराज ! वृपदेक पुत्रोंके सहित आपके पांचों पुत्र मारे गये, वे सुखते विश्वास पूर्वक हेरोंसे सो रहे थे, उद्यी समय कृतवस्, पाणी कृपाचार्थ और पाणी अवस्वयामाने सबको मारहाला। (१-३) हे महाराज ! आपकी हाथी, घोडा और महाराज खुधिष्ठर पुत्रगोकसे च्याकुल कौर पश्चमें गिरपहे, तव जन्तीपुत्र योहे विश्वः समय आपकी सेनामं केवल एक में ही वचा हं, उन्होंने पास, शक्ति और परक्वासे सो सेनामं केवल एक में ही वचा हं, उन्होंने पास, शक्ति जैते कृत्वाहि क्वत्यहांसे किरा वन्त्र होवा था, जैसे कृत्वहांसे करते हिया अन्त्रवाहे वच्च या, जैसे कृत्वहांसे करते हुए वनमें । हे घर्मात्मन् ! में किसी प्रकार कृतवर्मीसे वचकर माग हियाले महारामा भी समय और कान्त्रवाहे सहित महारामा भी समय और कान्त्रवाहे हियाले महारामा भी समय और कान्त्रवाहे स्वति महारामा भी समय और कान्त्रवाहे सहित महारामा भी समय और कान्त्रवाहे स्वति महारामा भी समय और कान्त्रवाहे सहित महारामा भी समय और कान्त्रवाहे सारामा भी सम्य और कान्त्रवाहे सारामा भी सम्य और कान्त्रवाहे सहित महारामा भी सम्य और कान्त्रवाहे सारामा भी सम्य और कान्त्रवाहे सारामा भी सम्य और

१० व विकाय । १० व विकाय । १० ॥

हत्वा स्नानुन्वपस्यां स्व पाना वयं जिताः ॥ १० ॥

हत्वा स्नानुन्वपस्यां स्व पिनृन्वुत्रान्सुहृद्गणान् ।

वन्धूनमात्यान्पौत्रां क्ष जित्वा सर्वान् जिता वयम्॥११॥

अनर्थो द्वार्थसङ्काशस्त्रथाऽनर्थोऽर्थद्श्वीतः ।

जयोऽपमजयाकारो जयस्तसात्पराजयः ॥ १२ ॥

यज्ञित्वा तप्यते पश्चाद्वापत्र इव दुन्नैतिः ।

कथं मन्येत विजयं ततो जिततरः परैः ॥ १३ ॥

यवामर्थाय पापं स्वाद्विजयस्य सुद्धद्वीः ।

निर्जितेरप्रमत्तीर्हे विजिता जितकाशिनः ॥ १४ ॥

कर्णिनालीकदंष्ट्रस्य खद्गजिद्धस्य संगुणे ।

चापच्यात्तस्य रौद्रस्य ज्यातलखननादिनः ॥ १५ ॥

कर्ण्यान्यात्तस्य रौद्रस्य ज्यातलखननादिनः ॥ १५ ॥

क्रद्धस्य नरसिंहस्य संग्रामेष्वपणाणिनः ।

रथहदं शरवपोमिननं रत्नाचितं वाहनवाजिगुक्तम् ॥

रथहदं शरवपोमिननं रत्नामिनं रत्नामिनं वाहनवाजिगुक्तम् ॥

रथहदं शरवपोमिननं रत्नामिनं वाहनवाजिगुक्तम् ॥

रथहदं शरवपोमिननं रत्नामिनं वाहनवाजिगुक्तम् ॥

रथहदं शरवपोमिननं रत्नामिनं रत्नामिनं वाहनवाजिगुक्तम् ॥

रथहदं रावोपोमिनं साम्यानं सोम्यानं साम्यानं सोम्यानं साम्यानं सोम्यानं सोम्यानं साम्यानं साम्यानं

99 Recented acceptance of the contract of the र्योंकी गतिको नहीं जान सक्ते, देखो कोई हारकर हारता है, और हम जीत-कर द्वार गये; माई, पिता, वन्धु, मित्र, पुत्र और पोर्तोंको भारकर भी इम लोग पीछे हार गये, अर्थींको विचारना और देखना भी अनर्थ ही है, हमारी यह विजय भी पराजयके समान होगई जिस विजयको पाकर दुईाद्धि राजाको शोच करना पडे, उसे बुद्धिमान् विजय क्यों कहेंगे, वह तो पराजयसे भी अधिक दु:खदायक है, जिन मित्रोंके लिये हम पाप और विजय करनेकी इच्छा करते

ये तेरुरवावचरास्त्रनौभिस्ते राजपुत्रा निहताः प्रमादात् ॥ १८॥ न हि प्रमादात्परमस्ति कश्चिद्रघो नराणामिह जीवलोके। प्रमत्तमर्था हि नरं समन्तात्त्यजन्खनर्थाश्च समाविशन्ति ॥ १९॥ ध्वजोत्तमायोच्छिन्द्मकेतुं दारार्चिषं कोपमहासमीरम् । महायतुर्जातलनेमियोषं ततुत्रनानावियशस्त्रहोमम् महाचमृकश्चदवाभिपत्रं महाहवे भीष्ममयाग्निदाहम्। ये सेहरात्तायुधतीक्ष्णवेगं ते राजपुत्रा निहताः प्रमादात् ॥ २१ ॥ न हि प्रमत्तेन नरेण शक्यं विद्या तपः श्रीर्विपुलं यशो वा। पद्याप्रमादेन निहत्य शात्रूनसर्वीन्महेन्द्रं सुखमेधमानम् ॥ २२ ॥ इन्द्रोपमान्पार्थिव पुत्रपौत्रान्पश्याविशेषेण हतान्प्रसादात्। तीर्त्वा समुद्रं वणिजः समृद्रा मग्नाः क्रमचामिव हेलमानाः ॥२३॥ अमर्पितैयें निहताः श्रयाना निःसंशयं ते त्रिदिवं प्रपन्नाः। कृष्णां तु शोचामि क्यं नु साध्वी शोकार्णवं साऽच विशलभीता॥२४॥ भ्रानृंश्च पुत्रांश्च हतान्निशम्य पात्रालराजं पितरं च वृद्धम्। ध्रुवं विसंज्ञा पतिता पृथिव्यां सा शोष्यते शोककृशाङ्गयष्टिः॥१५॥

राजपुत्र आज हमारी भूलसे मारे गए। (१५-१८)

देखो जगत्में भृतके समान और कोई बुरी बात नहीं है, भृते हुये मनुष्यके सब अभिन्नाय नष्ट हो जाते हैं और अनेक अनधे उसको घर तेते हैं। जिन्होंने ऊंची ध्वलारूपी, धुन्नां, बाण ब्वालां, क्रोध वायु, धनुष पिहए और तल शब्दरूपी शब्द और अनेक प्रकार के शक्त आहुतियुक्त मीष्मरूपी सेना में जलती हुई अग्निको सहा था, वही राजपुत्र आज भृत्से मारे गये। प्रमच मनुष्य विद्या, तप, लक्ष्मी और यशको नहीं पा

सक्ता, देखो शश्चओंको मारकर इन्द्र, सुखसे राज करते हैं।(१९-२२)

देखो आज ये इन्द्रके समान पराक-मी राजपुत्र और राजोंके पोते भूलसे सामान्य मनुष्योंके समान इस प्रकार मारे गये, जैसे घनधान्य मरे विनये समुद्रको पार होकर छोटी नदीमें तरेत हुए इन जांय, हमें यह निश्चय है, कि हमारे सब सम्बन्धी सोते हुथे मारे गये, अब हमें कुछ शोच नहीं है, वे सब निश्चय ही खर्गको चले गए। हमें केवल पतित्रता द्रौपदीहीका शोक है, कि वह अ-पने भाई, पुत्र और बुढे पिताको मारा हु-आ सन किस दशाको प्राप्त होगी? २३-२५

वैशम्पायन उवाच-स दृष्ट्वा निहतान्संख्ये पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ।

महादुःखपरीतात्मा बभूव जनमेजय ततस्तस्य महान् शोकः प्रादुरासीन्महात्सन।। सरतः पुत्रपेषत्राणां भ्रातृणां खजनस्य ह तमश्रुपरिपूर्णीक्षं वेपमानमचेतसम्। सुहृदो भृशसंविग्नाः सांत्वयांचित्रिरे तदा 11 3 11 ततस्तासिन् क्षणे कल्पो रथेनादित्ववर्चसा। नकुलः कृष्णया सार्धेष्ठपायात्परमार्त्तया 11811 उपप्रव्यं गता सा तु श्रुत्वा सुमहद्वियम्। तदा विनाशं सर्वेषां पुत्राणां व्यथिताऽभवत् ॥ ५॥ कम्पमानेव कदली वातेनाभिसमीरिता। कृष्णा राजानमासाय शोकार्त्तान्यपतद्भवि 11 8 11 वभूव वदनं तस्याः सहसा शोककर्षितम् । फुलपद्मपलाशाक्ष्यास्तमोग्रस्त इवांशुमान् 11911 ततस्तां पतितां हष्ट्रा संरम्भी सत्यविक्रमः। बाहुभ्यां परिजग्राह समुत्पत्य वृकोद्रः 11011

सौदितक पर्वमें ग्यारह अध्याय ।

श्रीवैश्वस्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! अपने बेटे, पोते और सम्ब निधर्योंको मरा हुआ देखकर महाराज अत्यन्त श्रोकसे न्याकुल होगये; जब महात्मा सुधिष्ठिर बेटे, पोते, माई और सम्बन्धियोंके श्रोकसे न्याकुल होकर आखोंमें आंस भरकर कांपने लगे तब सब रोते हुये मित्र उन्हें समझाने लगे। (१—३)

उसी समय प्रातःकालके सर्थके समान चमकते हुये, रथपर बैठे हुए रोती हुई द्रौपदीके सहित नकुल आप हुंचे। द्रौपदी पहिलेही उपछुव (छावनी) को चली गई थीं, वहीं अपने पुत्रोंके मरनेका समाचार सुना और व्याकुल होगई, द्रौपदी महाराजके पास आकर और शोकसे व्याकुल होकर इस प्रकार पृथ्वीमें गिर पड़ी जैसे केलेका वृक्ष आंधीसे टूटकर गिर पड़ता है, उस समय फूले हुये कमलके समान नेत्रवा-ली द्रौपदीका सुख शोकसे व्याकुल होनेके कारण ऐसा होगया जैसा राहुके ग्रहण करनेसे चन्द्रमा। (४-७)

द्रौपदीको पृथ्वीमें पडी देख महाप-राक्रमी भीमसेनने अपने हाथोंमें उठा

सा समाश्वासिता तेन भीमसेनेन भामिनी। रुद्ती पाण्डवं कृष्णा सा हि भारतमत्रवीत् ॥ ९॥ दिष्ट्या राजन्नवाप्येमामखिलां भोक्ष्यसे महीम्। आत्मजान क्षत्रधर्मेण संप्रदाय यमाय वै दिष्ट्या त्वं कुशली पार्थ मत्तमातङ्गामिनीम्। अवाप्य पृथिवीं कृत्लां सीभद्रं न सारिष्यसि ॥ ११ ॥ आत्मजान् क्षत्रधर्मेण श्रुत्वा श्रूरान्निपातितान् । उपष्ठव्ये मया सार्ध दिष्ट्या त्वं न सारिष्यासि॥ १२॥ प्रसुप्तानां वधं श्रुत्वा द्रौणिना पापकर्मणा। शोकस्तपति मां पार्थ हुताशन इवाश्रयम् तस्य पापकृतो द्रौणेन चेद्य त्वया रणे। ह्वियते सानुबन्धस्य युधि विक्रम्य जीवितम् ॥ १४ ॥ इहैव प्रायमासिष्ये तन्निबोधत पाण्डवाः। न चेत्फलमवाप्नोति द्रौणिः पापस्य कर्मणः एवसुक्त्वा ततः कृष्णा पाण्डवं प्रत्युपाविदात्।

सा र रहतं दिष्टः आतः विष्टः आतः दिष्टः आतः दिष्टः आतः उपष्ठः प्रसुप्त शोकः तस्य हिं यते हरें वे न नेत एवसः जिया और समझाने ल एवसः विष्टः अवाः हुई द्रौपदी महाराजसे को नाथ! आज प्रारुघहीसे एथ्वीके राजा हुए; अव र वे ते देकर आप कुशलसे समान अभिनन्युका कभी सरण एगा ना? कहिए श्वित्रयों वाले वीर पुत्रोंकी स्त्यु मेरे सङ्ग विहार तो की। और कभी उन पुत्रोंका र कीजिएगा ? में यह गत स्वित्रया ? में यह गत स्वित्रया ? में यह गत स्वत्रया श्वत्यया श्वत्यया ? में यह गत स्वत्यया ? में यह ग लिया और समझाने लगे, तत्र रोती हुई द्रौपदी महाराजसे बोली, हे पृथ्वी नाथ ! आज प्रारब्धहीसे आप इस सव पृथ्वीके राजा हुए; अव क्षत्रियोंके धर्म के पालनेवाले अपने बेटोंको यमराजकी मेंट देकर आप कुशलसे तो हैं ? कहिये इस सब पृथ्वीका राज्य पाकर अब आप मतवाले हाथीके समान चलनेवाले अभिमन्युका कभी सरण तो न कीजि-एगा ना? कहिए क्षत्रियोंके धर्ममें रहने-वाले वीर पुत्रोंकी मृत्यु सुनकर आप मेरे सङ्ग विहार तो कीजियेगा ना ? और कभी उन प्रत्रोंका तो सारण नहीं कीजिएगा ? मैं यह बात सुन कर, कि

पापी अञ्चत्थामाने मेरे प्रत्रोंको सोते हुए मारडाला शोकसे व्याक्कल होगई हूं, जोक मेरे जरीरको इस प्रकार तपा-ता है, जैसे पास रक्खी हुई अग्नि वस्तु-को। (८-१३)

मसे उस पापी अञ्चत्थामाको युद्धमें नहीं मरियेगा तो मैं अन्न नहीं खाऊंगी और यहीं मर जाऊंगी। हे पाण्डवों! तम भी सब हमारी इस प्राविज्ञाको सुनो, यदि अञ्बत्थामा इस पापके फलको नहीं पावेगा, तो मैं यहीं मर जाऊंगी। ऐसा कहकर यश्चस्त्रिनी द्रौपदी धर्मराज

:eeeeeeeeeeeeeeeeee

युधिष्ठिरं घाज्ञसेनी
हम्नोपविष्ठां राजिंद्र
प्रमाण सम्भे
ध्रम्पं धर्मण धर्मज्ञे
ध्रम्पं धर्मण वनं द्व
तस्य त्वं पातनं संच
द्रोपग्रुवाच— द्रोणप्रत्रस्य सहजो
निहत्य संख्ये तं पा
राजन शिरसि ते वृ
इत्युक्तवा पाण्डवं
भीमसेनमथागत्य
त्रातुमहिस मां भी
जिहि तं पापकर्माणं
न हि ते विक्रमे तुः
श्रुतं तत्सर्वरुकेकेषु
द्रीपोऽभ्रस्त्वं हि प
अपी धुधिष्ठिरने अपनी प्यारी पटरानीको त्रतमें वैठे देख उस सुन्द्रीसे ऐसे
वचन कहे, हे धर्म जाननेवाली सुन्द्री!
युत्र और भाई धर्मग्रद्धसे मारे गये हैं,
दुत्र सिलेये कुछ शोक मत करो, हे कल्याणी, हे सुन्दरी! अञ्चत्थामा इस समय
किसी वन पर्वतमें छिप रहे हैं, उनके
हम कैसे मार सकेंगे।(१४-१९)
द्रीपदी वोली, हे महाराज! मैंने
स्ता है कि अञ्चत्थामाके शिरमें उत्पन्द
हुई माण है, उस पापीको मारकर वर्ह
क्रिक्ता है, उस पापीको मारकर वर्ह
क्रिका है, उस पापीको मारकर वर्ह युधिष्ठिरं याज्ञसेनी धर्मराजं यशस्विनी ॥ १६ ॥ हट्टोपविष्टां राजर्षिः पाण्डवो महिषीं प्रियाम् । प्रत्युवाच स धमातमा द्रौपदीं चारुद्शीनास् ॥ १७॥ धर्र्यं धर्मेण धर्मज्ञे प्राप्तास्ते निधनं शुभे । प्रजास्ते भ्रातरश्चैव तान्न शोचित्रमहीस स कल्याणि वनं दुर्गं दूरं द्रीणिरितो गतः तस्य त्वं पातनं संख्ये कथं ज्ञास्यासि शोभने ॥ १९ ॥ द्रोणपुत्रस्य सहजो मणिः शिरसि मे श्रुतः। निहल संख्ये तं पापं पश्येयं मणिमाहृतम् ॥ २०॥ राजन शिरसि ते कृत्वा जीवेगमिति मे मतिः। इत्युक्त्वा पाण्डवं कृष्णा राजानं चारुद्दीना॥ २१ ॥ भीमसेनमथागत्य परमं वाक्यमब्रवीत्। त्रातुमईसि मां भीम क्षत्रधर्ममनुस्मरन् 11 22 11 जहि तं पापकर्माणं शम्बरं मघवानिव। न हि ते विक्रमे तुल्यः पुमानस्तीह कश्चन ॥ २३ ॥ श्रुतं तत्सर्वलोकेषु परमव्यसने यथा। द्वीपोऽभूस्त्वं हि पार्थीनां नगरे वारणावते 11 88 11

को त्रतमें बैठे देख उस सन्दरीसे ऐसे वचन कहे, हे धर्म जाननेवाली सन्दरी! तम क्षत्रियोंके धर्मका सरण करो.तम्हारे पुत्र और भाई धर्मयुद्धसे मारे गये हैं, इसलिये कुछ शोक मत करो, हे कल्या-णी, हे सुन्दरी ! अञ्चत्थामा इस समय किसी वन पर्वतमें छिप रहे हैं, उनको

द्रौपदी बोली, हे महाराज ! मैंने सुना है कि अञ्चल्थामाके शिर्में उत्पन्न छीन लेनी च।हिये। मैं उसको आपके शिरमें स्थापन करके जिऊंगी, यही मेरी इच्छा है, इसलिये आप ऐसा ही की-जिये। ऐसा कहकर द्वौपदी भीमसेनके पास गई और कहने लगी, हे भीम! आप क्षत्रियोंके धर्मका सारण करके हमें इस दुःखसे बचाइये, उस पापी अक्व-त्थामाको इस प्रकार जीतिये, जैसे इन्द्र-ने शम्बरको जीता था, जगत्में तुम्हारे समान कोई मनुष्य बंलवान नहीं है, उस लाक्षाभवनमें आपने मस्ते हुए

हिडिम्बदर्शन वैव तथा त्वम
तथा विरादनगरे कीचकेन मृः
मामण्युद्धृतवान्कुच्छात्पीलोर्म
यथैतान्यकुथाः पार्थ महाकर्मा
तथा द्रोणिममित्रक्षं विनिह्छ
तस्या बहुविषं वुःखं निद्याम्
न चामपंत कीन्तेयो भीमसेन
स काञ्चनविचित्राङ्गमारुरोह् म
आदाय रुविरं चित्रं समार्गण
नकुलं सार्थि कृत्वा द्रोणपुत्रः
विस्फार्थ सद्दारं चापं तूर्णमश्व
ते ह्याः पुरुवच्याघ चोदिताः
वेगेन त्वरिता जग्मुईरयः शीः
शिवरात्खाङ्गुहीत्वा स रथस्य
हित श्रीमहाभारते वतसहस्यां संहितावां वैवासिक्यां
द्रीणवधार्य भीमसेनतमने एकादशोऽभ
विस्पायनउवाच-तस्मिन्प्रयाते दुर्धेचे यद्नामृषः
वार जगत्में प्रसिद्ध हैं, जय हिडम्य
शाससे पाण्डवींको आपित्त हुई थी
तय भी आपहीने इनकी रक्षा की थी,
जिस समय विराट नगरमें कीचकने
सहस प्रकार स्था करीः थी
छोत्रे अपने वैसे स प्रकार स्था करीः थी
वेसे इन्द्र इन्द्राणीकी रक्षा करते
हें (२०—२६)
हे कुन्तीपुत्र ! आपने वैसे स स्व
कर्म करे हैं ऐसे ही अञ्चत्यामाको मारकर सुखी हुजिये । द्रीपदिका अनेक
प्रकारका रोना सुनकर महावल्वाच् 666666666666666666666 हिडिम्बद्रशेने चैव तथा त्वमभवो गतिः। तथा विराटनगरे कीचकेन भृज्ञार्दिताम ॥ २५ ॥ मामप्युद्धतवान्कृच्छात्पौलोमीं मघंवानिव। यथैतान्यकुथाः पार्थ महाकर्माणि वै पुरा ॥ ३६ ॥ तथा द्रौणिममित्रव्नं विनिहस सुखी भव। तस्या बहुविधं दुःखं निदाम्य परिदेवितम् 11 29 11 न चामर्षत कौन्तेयो भीमसेनो महाबलः। स काश्चनविचित्राङ्गमारुरोह महार्थम् 11 36 11 आदाय रुचिरं चित्रं समार्गणगुणं धतः। नक्कलं सार्थि कत्वा द्रोणपुत्रवधे घृतः. 11 99 11 विस्फार्य सदारं चापं तूर्णमश्वानचोदयत्। ते हयाः पुरुषच्याघ चोदिता वातरंहसः 11 30 11 वेगेन त्वरिता जग्मुईरयः शीघ्रगामिनः। शिविरात्खाद्गहीत्वा स रथस्य पदमच्युता ॥ ३१ ॥ [६००]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूवां संहितायां दैयासिक्यां सौक्षिकपर्वान्तर्गत ऐपीके पर्वणी

द्रौणिवधार्थं भीमसेनगमने एकाद्शोऽध्याय: ॥ ११ ॥

वैशम्पायनस्वाच-तिसन्प्रयाते दुर्धवे यद्नामृषभस्ततः।

क्रन्तीपुत्र भीमसेन क्षमा न कर सके, और सोनेके रथपर बैठ, घतुष पर रोदा चढाकर बाण चढाने लगे, उसी समय नक्रल अपने स्थानसे उठकर भीमसेनका रथ हांकने लगे। तब भीमसेनने अपने धनुषपर टङ्कार दिया और नकुलने अपने घोडोंको भाग्र के समान वेगसे हांका, तब नकुलके हांकनेसे वे शीघ्र चलने वाले घोडे अपने डेरोंसे निकलकर अवनत्थामा के चले। (२७—३१) [६००]

अववीत्पुण्डरीकाक्षः कुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम् एव पाण्डव ते भ्राना पुत्रशोकपरायणः। जिघांसुद्रौंणिमाजन्दे एक एवाभिषावति भीत्रः प्रियस्ते सर्वेभ्यो भ्रातृभ्यो भरतर्षभ । तं क्षुच्छ्रगतमद्य त्वं कसान्नाभ्युपपद्यसे यत्तदाऽऽचष्ट पुत्राय द्रोणः परपुरञ्जयः। अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम दहेत पृथिवीमपि ्तन्महात्मा महाभागः केतुः सर्वधनुष्मताम् । प्रखपादयदाचार्यः प्रीयमाणो धनञ्जयम् तं प्रत्रोप्येक एवैनमन्वयाचद्मर्षणः। ततः प्रोवाच पुत्राय नातिहृष्टमना इव विदितं चापलं खासीदातमजस्य दुरातमनः। सर्वधर्मविद्।चार्यः सोऽन्वजात्खसुतं ततः परमापद्गतेनापि न सा तात त्वया रणे। इदमस्त्रं प्रयोक्तव्यं मानुषेषु विशेषतः इत्युक्तवान्गुरुः पुत्रं द्रोणः पश्चाद्धोक्तवान् ।

सौप्तिक पर्वमें बारह अध्याय ।

के प्राप्त श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! जब महापराऋमी भीमसेन अश्वत्थामाको मारने चले गये, तव यदुकुल श्रेष्ठ, कमलनेत्र श्रीकृष्ण क्रुन्ती-पुत्र युधिष्ठिरसे बोले, हे पाण्डव ? ये आपके माई मीमसेन पुत्रशोकसे व्या-कुल होकर एकले ही अञ्चत्थामाको मारने चले जाते हैं, हे भरतक्रलश्रेष्ठ ! मीमसेन आपको सब माइयोंमें प्यारे हैं, आप उनको इस आपत्तिसे उवारनेके लिये क्यों नहीं दौडते ? महात्मा शत्रु-

चार्यने जो सब पृथ्वीको ससा करनेमें समर्थ अर्जुनको प्रसन्न होकर जो अस्र दिया था, वही एक दिन क्रोधी अञ्च-त्थामाने अपने पितासे मांगा । महात्मा धर्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ, द्रौणाचार्यने विचारा कि यह वडा चञ्चल और दुष्ट हैं, तब भी द्रोणाचार्यने अश्वत्थामाको वह अस्त्र सिखा दिया, परन्तु अधिक प्रसन्न होकर नहीं दिया और फिरकहा कि, हे पुत्र ! अत्यन्त आपत्ति पडनेपर भी तुम यह अस्त्र किसी मनुष्यपर न छोडना।(१—८)

<u> A CONTRACT SERVICE DE CONTRACT DE CONTRA</u>

न त्वं जातु सतां मार्गे स्थातेति पुरुषर्धभ स तदाजाय दुष्टात्मा पितुर्वचनमापियम् । निराशः सर्वेकल्याणैः शोकात्पर्यचरन्महीम् ॥ १० ॥ ततस्तदा क्रस्त्रेष्ठ वनस्थे त्विय भारत। अवसद द्वारकामेल वृष्णिभिः परमार्चितः 11 88 11 स कदाचित्समुद्रान्ते वसन् द्वारवतीमनु । एकएकं समागम्य मामुवाच इसन्निव ॥ १२॥ यत्तदुग्रं तपः कृष्ण चरन्सत्यपराक्रमः। अगस्याद्वारताचार्यः प्रत्यपद्यत मे पिता 11 83 11 अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम देवगन्धर्वपुजितम् । तद्य मयि दाशाई यथा पितरि मे तथा 11 88 11 असत्तत्त्रुपादाय दिव्यमस्त्रं यद्त्रम । ममाप्यस्त्रं प्रयच्छ त्वं चक्रं रिप्रहणं रणे 11 89 11 स राजन्त्रीयमाणेन मयाऽप्युक्तः कृताञ्जलिः। याचमानः प्रयत्नेन मत्तोऽस्त्रं भरतर्षभ 11 25 11 देवदानवगन्धर्वमनुष्यपतगोरगाः।

कहकर फिर कहा कि, तुम इस जगत्में
महात्माओं के मार्गपर नहीं चल सकोगे।
पापी दुष्टात्मा अक्तत्थामा अपने पिताके कठोर वचन सुनकर सब सुखों से
निराश हो गये, और शोकसे न्याकुल
होकर जगत्में घूमने लगे। हे कुरुकुलश्रेष्ठ ? उन दिनों आप वनमें थे, तब ही
घूमते घूमते अक्तत्थामा द्वारिकामें
पहुंचे, वहां यादवोंने उनका बहुत ही
खागत किया,तब ने नहां कुछ दिनतक
ठहर गये, एक दिन हम और ने दोनों
सम्रुद्रके तटपर घूम रहे थे, तब उन्होंने
हंसकर हमसे कहा, कि हे कुष्ण ! हमारे

पिताने जो घोर तप करके देवता और दानवींसे पूजित ब्रह्मिश्चर नामक अस्र अगस्ति मुनिसे पाया है, में भी उसे आजकल अपने पिताके समान ही जानता हूं, इस लिये आप हमसे उस शस्त्र को सीखिये और युद्धमें शश्चर्योंके नाश करनेवाला अपना दिव्यचक हमको दे दीखिये। (९-१५)

हे राजन् ! मैंने अञ्चत्थामाको हाथ जोडते अनेक यत्न करके चक्र मांगते देख ऐसे वचन कहे, जगत्में देवता, दानव, गन्धर्व, मतुष्य, पक्षी और सांप कोई ऐसा नहीं है, जो हमारे बठके सौ

PRESERVATOR SECRETARIA SECULO DE SECRETARIA SECULO DE SE

महाभारत । [२ ऐपीव

क्वान्नान समा मा विर्माल कार्या निष्ठा कार्या है। यह प्रमुख्य क्वान्ता क्वान्त्र क्वान्ता क्वान

|

श्वाप १२] १० संगिष्ठकर्व ।

शवाप १२ वा प्रति च वा प्रति वा स्वाप स्वाप स्वाप स्वाप्त स्वाप स्वाप स्वाप्त स्वाप स्वप स्वाप स्वाप स्वाप स्वाप स्वाप स्वाप स्वाप स्वाप स्वप स्व

चक्रेण रथिनां श्रेष्ठ कं नु तात युयुत्ससे ॥ ३५॥
एवमुक्तो मया द्रौणिर्मामिदं प्रत्युवाच ह ।
प्रयुज्य भवते पूजां योत्स्ये कृष्ण त्वया सह ॥ ३६॥
प्रार्थितं ते मया चक्रं देवदानवप्राजितम् ।
अजेयः स्यामिति विभो सलमेतद्रवीमि ते ॥ ३७॥
त्वत्तोऽहं दुर्लभं काममनवाप्यैव केशव ।
प्रतियास्यामि गोविंद् शिवेनाभिवदस्य माम् ॥ ३८॥
एतत्सुभीमं भीमानामुषभेण त्वया घृतम् ।
चक्रमप्रतिचक्रेण स्ववि नान्योऽभिषयते ॥ ३९॥
एतावदुक्त्वा द्रौणिर्मा युग्यानश्वान्धनानि च ॥ ४०॥
स संरम्भी दुरात्मा च चपलः क्रूर एव च ।
वेद चास्त्रं ब्रह्मशिरस्तस्माद्रक्ष्यो वृकोदरः ॥ ४१॥ [६४१]

9999999999999999999999999999

इति श्रीमहामारिते शतसाहरूयां संहितायां नेयासिनयां सारितकपर्वान्तर्गत ऐपीके पर्वणि युधिष्ठिरकृष्णसंवादे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

वैश्वम्पायन दवाच-एवसुक्त्वा युघांश्रेष्ठः सर्वेषाद्वनन्द्नः।

आपका सत्कार किया। हे महारथ ! इस चक्रको आप लेकर कीनसे महारथ-से युद्ध कीजियेगा सो कहो, हमारे ऐसे वचन सुन अक्वत्थामाने हमसे कहा। (२५—३६)

हे कृष्ण ! हम यह चक्र लेकर आप की गुरु पूजा करके आपहीसे युद्धकरते। हम आपसे सत्य कहते हैं कि, हसीलिये हमने आपसे ये देवता और दानवोंसे पूजित चक्र मांगा था, और यह भी हच्छा थी कि, हमें कोई न जीत सके, परन्तु यह दुर्लम काम हमारा सिद्ध न हुआ, इसलिये हम प्रसन्ता पूर्वक आप- से जानेकी आज्ञा मांगते हैं, आप सब मयानकोंसे भी भयानक हैं, इसी लिये इस भयानक चक्रको कोई नहीं ले सक्ता ऐसा कहकर हमारे दिये हुए खचर, घोडे, धन और अनेक प्रकार के रल लेकर अञ्चत्थामा अपने घरको चले गये। वही अञ्चत्थामा अत्यन्त पापी चश्चल और दृष्ट हैं, और अक्षांब्रिर शक्तको जान ता भी हैं, इसलिये भीमसेनकी इससे रक्षा करनी चाहिए। (३६-४१)[६४१]

सौष्तिकपर्वमें बारह अध्याव समाप्त ।

सीश्तिकपर्वमें तेरह अध्याय । श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्

१० से विकाय । १ सर्वायुधवरोपेतमारुरोह रथोत्तमम् युक्तं परमकाम्बोजैस्तुरगैहेंममालिभिः। आदिलोदयवर्णस्य धुरं रथवरस्य तु दक्षिणामवहच्छैव्यः सुग्रीवः सव्यतोऽभवत् । पार्षिणवाहौ तु तस्यास्तां सेघपुष्पवलाहकौ विश्वकर्मकृता दिव्या रत्नघातुविभूषिता। उच्छिनेव रथे माया ध्वजयष्टिरहर्यत वैनतेयः स्थितस्तस्यां प्रभामण्डलरहिमवात् । तस्य सत्यवतः केतुर्भुजगारिरदृश्यत अथारोहद्वपिकेदाः केतुः सर्वधनुष्मताम् । अर्जुनः संयक्षमी च क्कहराजो युधिष्ठिरः अशोभेतां महात्मानौ दाशाईमभितः खितौ। रथस्थं शार्ड्डधन्वानमश्विनाविव वास्रवस् ताबुपारोप्य दाशाईः स्यन्दनं लोकपूजितम् । प्रतोदेन जवोपेतान्परमाश्वानचोदयत् ते ह्याः सहस्रोत्पेतुर्गृहीत्वा स्यन्दनोत्तमम् । आस्थितं पाण्डवेयाभ्यां यद्नामृषभेण च वहतां शार्ङ्गधन्वानमश्वानां शीघ्रगामिनाम् । प्रादुरासीन्महान् शब्दः पक्षिणां पततामिव ॥ १०॥

जनमेजय । यदुकुल श्रेष्ठ श्रीकृष्ण सब शस्त्रींसे भरे काम्बोजदेशमेंसे उत्पन्न हुए सोनेकी माला पहिने घोडोंसे युक्त रथमें बैठे । उस सूर्यके समान चमकते हुए रथके धुरके दहिनी ओर शैब्य, चांई ओर सुग्रीव और आगेकी ओर मेघपुष्प और बलाहक नामक घोडे जो-हे गए, ऊपरसे विश्वकर्माकी बनाई रत जडी सोनेके ऊंचे डण्डेवाली प्रकाशमान गरुडयुक्त ध्वजा, पहराने लगी। उसीमें

त स्वानातः। [२ वेशेकपेक
केन्नान्नातः। [२ वेशेकपेक
ते स्वाच्छेन्नरच्याघा। क्षणेन भरतर्षभ ।
भीमसेनं महेष्वासं समनुद्धत्य विगिताः ॥ ११ ॥
भीमसेनं महेष्वासं समनुद्धत्य विगिताः ॥ ११ ॥
सोधार्षातं द्ध सौत्ये द्विषदं समुच्यतम् ।
नाशक्तुवन्वारियितं सोत्यापि महारथाः ॥ ११ ॥
स तेषां प्रक्षतासेन श्रीमतां दृदधन्विनाम् ॥
यत्र सा श्रूयते द्वीणाः पुत्रहत्ता महात्मनाम् ।
स तृद्धां महात्मानमुद्धतान्तं यशक्तिनम् ॥ १४ ॥
स तद्द्धां महात्मानमुद्धतान्तं यशक्तिनम् ॥ १४ ॥
स तद्द्धां महात्मानमुद्धतान्तं यशक्तिनम् ॥ १४ ॥
स तद्द्धां महात्मानमुद्धतान्तं यशक्तिनम् ॥ १४ ॥
र सम्यावावत्कीत्तेयः प्रगुद्ध सहारं घट्यः ॥ १४ ॥
स तम्यावावत्कीत्तेयः प्रगुद्ध सहारं घट्यः ॥ १४ ॥
स तद्द्धां मीमसन्वानं प्रगुद्ध सहारं घट्यः ॥ १४ ॥
स तद्द्धां मीमसन्वानं प्रगुद्ध सहारं घट्यः ॥ १४ ॥
स तद्द्धां मीमसन्वानं प्रगुद्धां स्वर्धाः ॥ १४ ॥
स तद्द्धां सामस्वानं परमास्त्रमित्वात्।
व ह्युः मीमघन्वानं परमास्त्रमित्वात्।
व ह्युः मीमघन्वानं परमास्त्रमित्वात्।
स तद्धां सामस्वानं परमास्त्रमित्वात्।
व ह्युः मीमसन्वानं परमास्त्रमित्वात्।
व ह्युः सानस्वानं परमास्त्रमित्वात्वाः
व ह्युः सानस्वनं व ह्युः सानस्वानं व व्युः सानस्वानं व स्वयः स्वयः सानस्वानं व स्ययः सानते दे स्व व वृद्धाः सानस्वानं व स्वयः सानस्वानं व स्वयः सा

क्ष्याव १४] १० सेंग्रीहेक्वर्ष । ८६

क्रिका ह स सेंपिकां द्रीणि। सच्येन पाणिना ॥१९ ॥
स तामापदमासाय दिच्यमस्त्रप्तदेश्यत् ।
अनुष्यमाणस्ताञ्क्रान्तिच्यायुष्यवरान् स्थितात्॥२०॥
अनुष्यमाणस्ताञ्क्रान्तिच्यायुष्यवरान् स्थितात्॥२०॥
अपाण्डवायेति रुषा च्यस्जद्दारुणं चयः ।
इत्युक्त्वा राज्ञाद्देल द्रोणपुत्रः प्रतापवान् ॥ २१ ॥
सर्वेलोकप्रमोहार्षे तत्त्स्त्रं प्रसुमोच ह ।
ततस्त्रस्यामिपीकायां पावकः समजायतः !
प्रपक्ष्पत्रिच लोक्तिनिकालान्तकप्रमोपमः ॥ २२ ॥ [६६६]
हेत श्रीमहामारते तत्तराहरूचां संदित्रावां वैशाविक्वर्यान्तरंत
ऐपीके पर्योण महावाहुरर्जुनं प्रत्यभाषतः ॥ १ ॥
वैश्रमपायनजवाच हिंद्वानेतेन दाशाहस्त्रमिन्नप्रायमादितः ।
द्रोणेर्जुद्ध्वा महावाहुरर्जुनं प्रत्यभाषतः ॥ १ ॥
अर्जुनार्जुन यदिच्यमस्त्रं ते हृदि चर्त्तते ।
द्रोणोपदिष्टं तस्यायं कालः समप्रति पाण्डच ॥ २ ॥
अर्श्वनार्जुन यदिच्यमस्त्रं ते हृदि चर्त्तते ।
द्रोणोपदिष्टं तस्यायं कालः समप्रति पाण्डच ॥ २ ॥
अर्श्वनार्जुन यदिच्यमस्त्रं ते हृदि चर्त्तते ।
द्रोणोपदिष्टं तस्यायं कालः समप्रति पाण्डच ॥ ३ ॥
अर्थनाजुन यदिच्यमस्त्रं तिवारणम् ॥ ३ ॥
कर्त्वाने त्राच अत्रवस्त्रामति वती
दिव्य अस्त्रका ध्यान किया, फिर एक
सींक वर्षये कर्त्तर त्यस्त्रवस्त्रामति वती
दिव्य अस्त्रका ध्यान कर्त्तके लिपे,पतापी
अत्रवस्त्रामा हित्तः विद्या जन्तम् वीद्रवास अर्जुनेते
कहा, दे अर्जुन ! व अर्जुन ! तुम्हारे
द्रित होलाय'को समप्र आत्रामा । दे पाण्डच ! हे अर्जुन ! तुम्हारे
द्रित होलाय पत्रक्रे लिपे,पतापी
अत्रवस्त्रामा हित्र होत्रक्रे लिपे,पतापी
अत्रवस्त्रमा वात्रकर ग्रीप्रतासे अर्जुनेते
कहा, दे अर्जुन ! व अर्जुन ! तुम्हारे
द्रित्य अस्त्र सीमा अर्जुनेते लिपे, व व व स्रित आत्रक्रे लिपे, व त्राचा हुआ
दिव्य अस्त्र सीमा वात्रवे रहित्य अस्त्रके
यमराजके समान आज तीनों लेकोको
यस कर देगी । (१९-२२) [६६३]

केशवेनैवमुक्तोऽथ पाण्डवः परवीरहा । अवातरद्रथान्णै प्रगृह्य स्वारं घतुः पूर्वमाचार्यपुत्राय ततोऽनन्तरमात्मने । भ्रातृभ्यश्चेव सर्वेभ्यः खस्तीत्युक्तवा परन्तपः देवताभ्यो नमस्कृत्य गुड्भयश्चैव सर्वेशः। उत्ससर्ज शिवं ध्यायन्नस्त्रमस्रोण शाम्यताम् ततस्तदस्त्रं सहसा सृष्टं गाण्डीवधन्वना । प्रजन्वाल महाचिष्मचुगान्तानलसन्निभम् तथैव द्रोणपुत्रस्य तद्खं तिग्मतेजसः। प्रजन्वाल महान्वालं तेजोमण्डलसंवृतम् निर्घाता बहवश्चासन्पेतुरुल्काः सहस्रद्यः । महद्भयं च भूतानां सर्वेषां समजायत सशन्दसभवद् व्योम ज्वालामालाकुलं भृताम् । चचाल च मही कृत्सा सपर्वतवनद्वमा ते त्वस्रतेजसी लोकांस्तापयन्ती व्यवस्थिते। यहषींसहितौ तत्र दर्शयामासतुस्तदा नारदः सर्वेभूतात्मा भरतानां पितामहः।

श्रीकृष्णके ऐसे वचन सुन श्रुजना-शन अर्जुन धनुष बाण लेकर शीघ्रतासे उतरे,और ब्रह्माश्चर अस्त्र छोडनेके पहि-ले "हमारे गुरुपुत्र अञ्बत्थामाका कल्याण होय, पीछे हमारे भाइयोंका और हमारा कल्याण होय " ऐसा कह-कर देवता, गुरु और शिवको प्रणाम करके "अञ्चत्थामाका अस्त्र हमारे अस्तरे शान्त हो" ऐसा कहकर अर्जुनने उस असको छोड दिया।(४-६)

वह अस्र गाण्डीव घनुषसे छटकर

उसी प्रकार द्रोणपुत्र अञ्बरथामाका महातेजस्वी अस्त्र भी जलने लगा, और चारों ओर प्रकाश करने लगा,उस समय आकाशसे विजली गिरने लगी, और भी भयानक सहस्रों अपशकुन होने लगे। सब जगत् भयसे व्याकृल होगया, आकाश शब्द और आगसे पूरित होग-या, वन और पर्वतोंके समेत पृथ्वी हिलने लगी। (७-१०)

तव महामुनि नारद और कुरुकुलके पितामह महात्मा व्यासने सब लोगोंको

प्याय १५] १० तींक्षिकवर्षं । १२ ॥
तो मनी सर्वधभिष्ठो सर्वभुतहितिषणो ।
ती मनी सर्वधभिष्ठो सर्वभुतहितिषणो ।
ता त्रन्तरभथाषृष्ण्याषुपगम्य यद्याखिनौ ।
आस्तामुषिवरौ तत्र ज्विलताविव पावकौ ॥१४ ॥
पाणभृद्धिरनाषृष्पौ देवदानवसंमतौ ।
अस्रतेजः द्यायितुं लोकानां हितकाम्यया ॥१५ ॥
माणभृद्धिरनाषृष्पौ देवदानवसंमतौ ।
अस्रतेजः द्यायितुं लोकानां हितकाम्यया ॥१६ ॥
कर्षो अञ्चतः साहसं वीरो कृतवन्तो महास्ययम् ॥१६ ॥ [६०९]
हित क्षीमहानारते वातवाहस्यां सेहितायां वेवासिनयां सेषिकवर्यान्तांवपेषेके वर्वकि अञ्चनकात्रवाह वाच्या वाद्येव त्यायमाले प्रवाद त्यायमाले त्यायम

त्मा सब जगतका कल्याण करनेके लिथे

9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9	?666	666	999
संहते परमास्त्रेऽसिन्सर्वीनसानशेषतः।			
पापकर्मा ध्रुवं द्रौणिः प्रधक्ष्यसम्रतेजसा	lí	3	11
यदत्र हितमस्माकं लोकानां चैव सर्वेथा।			
भवन्तौ देवसङ्काशौ तथा संमन्तुमहेतः	II	ጸ	ij
इत्युक्त्वा सञ्जहारास्त्रं पुनरेव धनञ्जयः।			
संहारो दुष्करस्तस्य देवैरपि हि संयुगे	H	۹	11
विसृष्टस्य रणे तस्य परमास्त्रस्य संग्रहे ।			
अशक्तः पाण्डवादन्यः साक्षादपि शतऋतुः	11	Ę	IJ
ब्रह्मतेजोद्भवं तृद्धि विसृष्टमकृतात्मना।			
न शक्यमावर्त्तायेतुं ब्रह्मचारिवतादते	11	૭	Į]
अचीर्णब्रम्हचर्यो यः सृष्ट्वाऽऽवर्त्तयते पुनः ।			
तदस्त्रं सानुवन्धस्य मूर्धानं तस्य कृन्तति	11	ሪ	IJ
ब्रह्मचारी वती चापि दुर्वापमवाष्य तत्।			
परमव्यसनार्तोऽपि नार्जुनोऽस्त्रं व्यमुञ्चत	11	6	II
संखबत्धरः ग्रुरो ब्रह्मचारी च पाण्डवः।			
गुरुवर्ती च् तेनास्त्रं सञ्जहारार्जुनः पुनः	11 8	0	11

छोडा कि, इसके तेजसे अञ्चत्थामाके अस्तका तेज नष्ट होय, अव हम अस्तको लौटा लेयं, तो पापी अञ्चत्थामा अपने अख़के तेजसे निश्रय ही हम सबको मस कर देगा, इसलिये इस समय हमा-रे और जगतके कल्याणके लिये उचित बात हमसे कहिए सो ही हम करें, क्यों कि आप दोनों देवतोंके समान ऋषी हैं। ऐसा कहकर अर्जुनने अपने असुको **बौटा हिया । (१**–४)

हे राजन् ! उस अस्त्रका लौटाना वडा ही कठिन था, अर्जुनके शिवाय

थे; वह ब्रह्माके तेजसे बनाथा, इस लिये छोडनेके पश्चात् ब्रह्मचारीके शिवाय कोई पापी उसे लौटा नहीं सक्ता, जो विना कार्य किये उस अस्रको छोडे और फिर लौटानेकी इच्छा करे, तो वह उसहीका शिर कार था।(५-८)

अर्जुन ब्रह्मचारी और ब्रती होकर भी घोर आपत्तिमें पडनेसे भी उस घोर शस्त्रको कभी नहीं छोडते थे, ये व्रतको पालनेवाले वीर और ब्रह्मचारी तथा गुरुकी सेवा करनेवाले थे, इस

<u>ER HE BERREER EFFECER GARRY FERREAR BREER BREER GARREER BERREER BERREAR BERREER GERREAR BREER BERREER BREER BRE</u>

द्रौणिरप्यथ सम्प्रेक्ष्य तावृषी पुरतः स्थितौ । न राशाक पुनर्घीरमखं संहर्तुमोजसा 11 88 11 अशक्तः प्रतिसंहारे परमास्त्रस्य संयुगे । द्रौणिदीनमना राजन द्वैपायनमभाषत 11 82 11 उत्तमव्यसनार्त्तेन प्राणत्राणमभीष्स्रना । मयैतद्स्रमुत्सृष्टं भीमसेनभयानमुने 11 88 11 अधर्मश्च कृतोऽनेन धार्तराष्ट्रं जिघांसता । मिध्याचारेण भगवन् भीमसेनेन संयुगे 11 88 11 अतः सृष्टमिदं ब्रह्मन्मयाऽस्त्रमकृतात्मना । तस्य भूयोऽच संहारं कर्तुं नाहमिहोत्सहे त १५ ॥ निसृष्टं हि मया दिव्यमेतदस्त्रं दुरासदम् । अपाण्डवायेति सने वहितेजोऽनुमन्त्र्य वै 11 25 11 तदिदं पाण्डवेयानाभन्तकायाभिसंहितम्। अद्य पाण्डुसुतान्सर्वीन् जीविताद्धंशयिष्यति॥ १७ ॥ कृतं पापिमदं ब्रह्मन् रोषाविष्टेन चेतसा। वधमाशास्य पार्थानां मयाऽकां सुजता रणे अस्त्रं ब्रह्मशिरस्तात विद्वान्पार्थी धनञ्जयः । उत्सृष्टवान्न रोषेण न नाशाय तवाहवै 11 28 11

त्थामाने ऋषियोंको अपने आमे खडा देख अस्त्र लौटानेकी इच्छा करी, परन्तु शीघ न लौटा सके, तब अञ्चत्थामा दीन होकर च्याससे बोले।(९-१२)

हे ग्रुने ! मैंने मीमसेनके भयसे घार आपित्तमें पडकर अपनी रक्षाके लिये इस असको छोडा था, इसने दुर्शोधन-को मारते समय बहुत अधर्म किया था, यह भीमसेन ग्रुद्धमें अन्याय करता है, इसी लिये मैंने मीमपर यह अस्त्र छोडा था, अब मैं इसको लौटा नहीं सकता। मैंने इस घोर दिन्य असको अधिका मन्त्र पढकर पाण्डवोंका नाश करनेके लिये छोडा था, सो अब यह पाण्डवोंका अवस्य ही नाश करेगा। हे बहान् ! मैंने कोघमें मरकर भूलसे युद्धमें जो ये अस्त्र छोडा, सो पाप कि-या। (१३—१८)

श्रीव्यास मुनि बोले, हे तात ! कुन्तीपुत्र अर्जुन भी इस ब्रह्मिश्चर अस्तर-को जानते हैं। उन्होंने जो युद्धमें इस अस्त्रको छोडा था, सो कोधमें भरकर \පටස් ඉවත ම අතුර සියල් අවස් අවස් අවස් අවස්ථාව කරයි. ම සියල් අවස්ථාව අවස්ථාව සියල් අවස්ථාව අවස්ථාව අවස්ථාව අවස්

प्रकारका हिन्दा हुन्त स्वाप्त हिन्दा स्वाप्त हिन्दा स्वाप्त हिन्दा स्वाप्त हिन्दा हिन्दा स्वाप्त हिन्दा हिन्दा स्वाप्त स

अवाप्तमिह
यमावध्य
देवेभ्यो दा
न च रक्षीः
एवं वीर्यो
यसु मणिः
गर्मेषु पाण
न च रक्ते
एतदस्त्रमत
न च वाक्रं
व्यास उवाच— एवं क्रुक्त न
गर्भेषु पाण
वैश्वम्पायन उवाच-ततः। परमा
द्वेषायनवच
इति श्रीमहामारते शतसाहर
व्यास जी भन पाया है, उन
यह मणि अधिक हैं, जिसके पार
पाण्डवोंसे जितने रत्न पाये हैं
काँरवांसे जो भन पाया है, उन
यह मणि अधिक हैं, जिसके पार
पाण्डवोंको नहीं दे सक्ता, परन्तु
वचनोंको टाल भी नहीं सक्ता,
यह मणी रक्षी है, और यह हैं
स्रान्तु अब यह ज्यर्थ अस्त अ
की स्रीके गर्ममें जाकर
वचनों के महें हों कर लीट

999999999999999999999999999999	99999999999999999999999999999999999999
केन्द्रवायम् त्वाच-तहाऽऽज्ञाय हृषीकेशो	विस्षष्ट पापकमणा।
हृत्यमाण इदं वाक्यं	द्रीणि प्रसम्बात्तद्। ॥ १ ॥
विराटस्य सुतां पूर्वं स्तु	(वां गाण्डीवघन्वनः।
उपस्रव्यगतां हष्ट्रा व्रत	वान्त्राह्मणोऽत्रवीत् ॥२॥
परिक्षीणेषु कुरुषु पुत्रस	तव भविष्यति ।
एतदस्य परिक्षित्तवं गः	र्भस्थस्य भविष्यति ॥ ३॥
तस्य तद्वचनं साधोः स	बराबेनद्वविष्यति ।
परिक्षिद्भविता खेषां पु	नर्वशकरः स्तः ॥ ४॥
पाराक्षर्वाचता खना उ एवं ब्रुवाणं गोविन्दं स	
द्रौणिः परमसंरब्धः प	त्युषापद्रश्वरास्य ॥ १॥ कल्यानेन सेकाम ।
नैतदेवं यथाऽऽत्थ त्वं	
वचनं पुण्डरीकाक्ष न	
पातंष्यातं तदस्र हि	गर्भे तस्या मयोचतम्।
विराटदुहितुः कृष्ण यं	
श्रीमगवातुवाच- अमोधः परमास्त्रस्य प	
स तु गर्भी सतो जात	ो दीर्घमायुरवाप्स्यति ॥८॥
सादितकपर्वमें सोछइ अध्याय ।	नामक उत्तराका पुत्र होगा। (१-४
श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्	। यदुकुलश्रेष्ठ श्रीकृष्णके ऐसे वच
जनमेजय । पापी अञ्चत्थामाके अभि-	सुन अश्वत्थामा क्रोधर्मे मरकर बोरे
प्रायको जानकर श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर	हे कमलनेत्र कृष्ण ! जो तुम पाण्डवी
अन्तरथामासे बोले, एक दिन राजा	पक्षपातसे कह रहे हो, सो ऐसा नई
विराटकी पुत्री अभिमन्युकी स्त्री उत्तरा	
अपने घरमें चैठी थी, तब उससे एक	होगा, क्यों कि हमारा वचन मिथ्य
नारायाचे आदर हेते चन्न न्हें	नहीं होता; जिस विराटपुत्रीके गर्भव
नाह्मणने आकर ऐसे वचन कहे, कि	तुम रक्षा करना चाहते हो, यह हमा
जर कुरुकुलका नाश है। चुकेगा, तन	छोडा हुआ अस उसी गर्भका ना
तुम्हारे पुत्र होगा, वह पहले गर्भमें नष्ट	करेगा। (५-७)
हाजायगा, ।फर उसका जन्म होगा।	श्रीकृष्ण बोले, और श्रुद्र ! यह अ
होजायगा, फिर उसका जन्म होगा। आज उस महात्माका वचन सत्य हुआ, अब कुरुकुलकी रक्षा करनेवाला परिश्चित विeccecceccecceccecceccecc	वृथा नहीं होगा, वह गर्भ मर जायग
्र अभ क्रुक्कलका रक्षा करनेवाला परिश्चित	ं परन्तु फिर जीकर दीर्घाषु पावेगा, तु
	eeeeeeeeee eeeeeeeee e

यदुकुलश्रेष्ठ श्रीकृष्णके ऐसे वचन सन अश्वत्थामा क्रोधमें भरकर बोले. हे कमलनेत्र कृष्ण ! जो तुम पाण्डवोंके पक्षपातसे कह रहे हो, सो ऐसा नहीं, होगा, क्यों कि हमारा वचन मिथ्या नहीं होता; जिस विराटपुत्रीके गर्भकी तुम रक्षा करना चाहते हो, यह हमारा छोडा हुआ अस्त्र उसी गर्भका नाश करेगा। (५-७)

श्रीकृष्ण बोले, अरे क्षुद्र ! यह अस्र ष्ट्या नहीं होगा, वह गर्भ मर जायगा: परनत फिर जीकर दीर्घाय पावेगा. तझे

eeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee

<u> Paradopana pa</u>

त्वां तु कापुरुषं पापं विदुः सर्वे मनीषिणः। असम्बत्पापकर्माणं बालजीवितघातकम् 11911 तस्मात्त्वमस्य पापस्य कर्मणः फलमाप्नृहि । त्रीणि वर्षसहस्राणि चरिष्यसि महीमिमाम् ॥ १०॥ अप्राप्नुवन्कचित्काश्चित्संविदं जातु केनचित्। निर्जनानसहायस्त्वं देशान्प्रविचरिष्यसि 118811 भवित्री न हि ते क्षुद्र जनमध्येषु संश्वितिः। प्यशोणितगन्धी च दुर्गकान्तारसंश्रयः 11 88 11 विचारिष्यसि पापात्मा सर्वव्याधिसमान्वितः। वयः प्राप्य परिक्षित्तु वेदव्रतमवाष्य च 11 88 11 कृपाच्छारद्वताच्छूरः सर्वोस्त्राण्युपपत्स्यते । विदित्वा परमास्त्राणि क्षत्रधर्मवते स्थितः 11 88 11 षष्टि वर्षाणि धर्मात्मा वसुधां पालियच्यति । इतश्चोध्वे महावाहुः कुरुराजो भविष्यति 11 24 11 परिक्षित्राम रूपतिर्मिषतस्ते सुदुर्मते । अहं तं जीवियव्यामि द्रमं शस्त्राग्नितेजसा। पद्य में तपसो वीर्य सलस्य च नराधम

व्यास उवाच — यसादनाहस्य कृतं त्वयाऽसान्कर्भ दारुणम् ।

सव मतुष्य नपुंसक, पापी, सदा पाप करनेनाला और बालकोंको मारनेनाला कहेंगे, इसलिये इम और भी एक शाप तुझे देते हैं, क्यों कि इस महापापका फल अवश्यही तुझे होना चाहिए। तु तीन हजार वर्षतक कहीं किसीसे किसी प्रकारकी सम्पत्ति विना पाये एकला और असहाय होकर जगत्में डोलेगा, हे शुद्र! तू मतुष्योंके बीचमें नहीं रहेगा, तेरे शरीरसे पीन और रुधिरकी दुर्गिन्ध आवेगी, मयानक जङ्गलोंमें यूमता फिरेगा और अनेक प्रकारके दु। ख सहेगा, परीक्षित भी दीर्घाष्ठ पाकर वेद पढेंगे, अनेक प्रकारके त्रत करेंगे, और कुपाचार्यसे सब अस्नविद्या सीखकर क्षत्रियोंका धर्म पालन करेंगे, वीर धर्मात्मा परीक्षित साठ वर्ष राज्य करेंगे, युधिष्ठिरके पांछे महाबाहु परीक्षित ही कुरुकुलके राजा होंगे, रे नराधम! रे दुबुद्ध! तेरे देखते देखते परीक्षित महाराज होंगे, तू हमारे सत्य और तपके बलको देख। तेरे अस्नकी अप्रिसे जले हुए परीक्षितको

ब्राह्मणस्य सतश्चैव यसात्ते वृत्तमीदशम् तसाद्यदेवकीपुत्र उक्तवानुत्तमं वचः। असंशयं ते तद्भावि क्षत्रधर्मस्त्वयाऽऽश्रितः ॥ १८॥ अश्वत्थामोवाच- सहैव भवता ब्रह्मन्थ्यास्यामि पुरुषेष्विह । सत्यवागस्तु भगवानयं च पुरुषोत्तमः वैश्वम्यायन त्वाच-प्रदायाथ मार्णि द्रौणिः पाण्डवानां महात्मनाम् । जगाम विमनास्तेषां सर्वेषां पश्यतां वनम् पाण्डवाश्चापि गोविन्दं प्रस्कृत्य हतद्विषः। क्राचाद्वैपायनं चैव नारदं च महासुनिम् द्रोणपुत्रस्य सङ्जं मणिमादाय सत्वराः। द्रौपदीसश्यधावन्त प्रायोपेतां मनिखनीम् वैश्वन्पायन उवाच-ततस्ते पुरुषव्याघाः सद्श्वेरनिलोपमैः। अभ्ययुः सह दाशाहीः शिविरं पुनरेव हि अवतीर्य रथेभ्यस्तु त्वरमाणा महारथाः। दरशुद्रीपदीं हृष्टामात्तीमार्ततराः खयम तामुपेल निरानन्दां दुःखशोकसमन्विताम्।

हम जिला देंगे। (८-१६)

श्रीव्यास मुनि बोले, तुमने इमारे वचनोंका निरादर करके ऐसा घोर कर्म किया, तुम ब्राह्मण और विशेष कर पण्डित होके ऐसे ऐसे घोर कर्म करते हो और श्रत्रीधर्मका पालन करते हो, इसलिये देवकीपुत्रने जो इछ तुम्हारे लिये कहा, सो सब सत्य होगा। (१७-१८)

अञ्चत्थामा बोले, पुरुषश्रेष्ठ भगवा-न् कृष्णके वचन सत्य होय, मैं आजसे आपके संगही रहूंगा। वैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर अक्बत्थामाने महा-त्मा पाण्डवींकी मणि दे दयी और आप

मलीन होकर सबके देखते देखते वनको चले गये। (१९--२०)

पाण्डव लोग भी अश्वत्थामाके संग उत्पन्न हुई मणि लेकर श्रीकृष्ण, वेद-व्यास और महाम्रुनि नारदको आगे करके शीघ्रता सहित यशस्त्रिनी द्रौपदीके गए। (२१~-२२)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,तब पुरुष-सिंह पाण्डव घोडोंको वायुके समान दौडते हुए कृष्णके सहित डेरोंको चले गए, वहां जाकर सब लोग रथसे उतरे और शोकसे भरी टीपदीको शोकसे

परिवार्य व्यातिष्ठन्त पाण्डवाः सहकेशवाः ततो राज्ञाऽभ्यनुज्ञातो भीमसेनो महाबलः। पददौ तं मणिं दिव्यं वचनं चेदमब्रवीत अयं भद्रे तव मणिः पुत्रहन्तुर्जितः स ते। उत्तिष्ट शोकपुत्सुज्य क्षात्रधर्ममनुसार ॥ २७ ॥ प्रयाणे वासुदेवस्य शमार्थमसिते क्षणे। यान्युक्तानि त्वया भीरु वाक्यानि मधुघातिनि॥२८॥ नैव मे पतयः सन्ति न पुत्रा भ्रातरो न च। न वै त्वमिति गोविन्द शमिसच्छति राजनि॥ २९ ॥ उक्तवसि तीवाणि वाक्यानि पुरुषोत्तमम्। क्षत्रधर्मानुरूपाणि तानि संसार्तुमहंसि हतो दुर्योधनः पापो राज्यस्य परिपन्धिकः। दुःशासनस्य रुधिरं पीतं विस्फुरतो मया वैरस्य गतमानृण्यं न सा वाच्या विवक्षताम् । जित्वा मुक्तो द्रोणपुत्रो ब्राह्मण्याद्वीरवेण च ॥ ३२ ॥ यशोऽस्य पतितं देवि शरीरं त्ववशेषितम् ।

व्याकुल देखा परनतु द्रौपदी इन्हें देख-कर प्रसन्न होगई। तब श्रीकृष्णके सहित पांची पाण्डव द्रौपदीके चारों और वैठ गये, तब राजाकी आज्ञासे महाबली भी-मसेनने वह मणी द्रौपदीको दी और ऐसे वचन कहै। (२३-२६)

हे कल्याणी ! यह तुम्हारे बेटोंके मारनेवालेसे जीतकर छीनी है, अब तुम उठो और क्षत्राणियोंके धर्मका सरण करो। हे कमल नयनी ! जिस समय मधुदैत्यके नाग्र करनेवाले श्रीकृष्ण दैतवनसे महाराजसे विदा होकर चले थे, उस समय तुमने कैसे कैसे कठोर

वचन कहे थे, कि मेरे पित, पुत्र और तुम सन मर गए, जिस समय महाराजने यान्ति करनेकी इच्छा की थी तन तुम इनसे कैसे कैसे कठोर वचन कहे थे! वे सब क्षत्राणियों के धर्मके अनुसार ही थे, क्या तुम उन्हें कुछ भी नहीं स्मरण करती हो? हमारा राज्य छीननेवाला पापी दुर्योधन मारा गया, मैंने तहफते हुए पापी दुःशासनका रुधिर पिया, वैर समाप्त होगया; अब तुम पाण्डवोंसे कुछ नहीं कह सक्ती हो, अवनत्थामाको जी-तकर बाह्मण और गुरु समझकर जीता छोड दिया, उसका यश जगत्में नष्ट

वियोजितश्च मणिना श्चांशितश्चायुर्ध सुवि ॥ ३३ ॥
दौपबुवाच—केवलानृण्यमाप्ताऽस्मि गुरुपुत्रो गुरुपम ।
किरस्येतं मणिं राजा प्रतिवश्चातु भारत ॥ ३४ ॥
तं गृहीत्वा ततो राजा शिरस्येवाकरोत्तदा ।
गुरोरुच्छिष्टामित्येव द्रौपद्या वचनादिष ॥ ३५ ॥
ततो दिन्धं मणिवरं शिरसा धारयन्त्रसुः ।
शुरुप्ते स तदा राजा सचंद्र इव एवतः ॥ ३६ ॥
उत्तस्यौ पुत्रशोकात्ती ततः कुष्णा ग्रनस्विनी ।
कुष्णं चापि महावाहुः परिपप्रच्छ धर्मराष्ट् ॥ ३७ ॥ [७५१]

द्रौपदीसांत्वनायां पोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

वैश्वम्पायन उवाच- हतेषु सर्वसैन्येषु सीप्तिके तै रथेस्त्रिभिः।
शोचन्युधिष्ठिरो राजा दाशाईमिदमद्रवीत् ॥१॥
कथं नु कृष्ण पापेन क्षुद्रेणाकृतकर्मणा।
द्रौणिना निहताः सर्वे मम पुत्रा महारथाः ॥२॥
तथा कृतास्त्रविकान्ता सहस्रशतयोधिनः।
द्रुपदस्यात्मजाश्चेव द्रोणपुत्रेण पातिताः ॥३॥

होगया, केवल शरीरही वाकी रह गया है, उससे मणि और अस्त्र छीन लिये।(२७—३३)

द्रौपदी बोली, अब में अरिण दोगई
गुरुपुत्र तो हमारे गुरुही हैं, अब इस
मणिको राजा अपने शिरमें बांधे। महा
राज युधिष्ठिरने उस मणिको गुरुका
प्रसाद मानकर द्रौपदीकी हठसे अपने
शिरमें बांधा, उस समय उस मणिसे
राजा ऐसे शोमित हुए, जैसे चन्द्रमाके
सहित पर्वत, तब द्रौपदी शोकसे व्याकुल होकर उठीं और महाबाहु युधिष्ठिरने

श्रीकृष्णसे कुञ्चल पूंछी। (३४-३७)
सीप्तिकपर्वमें सोलह अध्यान समाप्त। [७५१]
सीप्तिक पर्वमें सतरह अध्यान।
श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले, जब इस
प्रकार तीनों नीरोंने रात्रिको सोते हुए
युधिष्ठिरकी सब सेनाको मारहाला, तब श्रोच करते हुए राजा युधिष्ठिर कृष्णसे बोले, हे कृष्ण! पानी क्षुद्र दुरात्मा अञ्चत्थामाने हमारे सब महारथ पुत्रोंको कैसे मारहाला? सब शस्त्रविद्याके जाननेवाले एकले ही सेकडों और सहस्रों वीरोंसे लडनेवाले द्वपदके सब पुत्रोंको

यस्य द्रोणो महेष्वासो न पादादाहवे झुखम्। निजन्ने रथिनां श्रेष्ठं घृष्टशुम्नं कथं नु सः 081 किं नु तेन कृतं कर्म तथायुक्तं नरर्षभ। यदेकः समरे सर्वीनवधीन्नो ग्ररोः सतः 11 4 11 श्रीमगवानुवाच- नृनं स देवदेवानामीश्वरेश्वरमञ्ययम्। जगाम शरणं द्रौणिरेकस्तेनावधीद्वहून् 4511 प्रसन्नो हि महादेवो द्याद्मरतामपि। वीर्यं च गिरिशो द्यायेनेन्द्रमपि शातयेत 11 9 11 वेदाहं हि महादेवं तत्त्वेन भरतर्षभ। यानि चास्य पुराणानि कर्माणि विविधानि च ॥ ८॥ आदिरेष हि भूतानां मध्यमन्तश्च भारत। विचेष्टते जगचेदं सर्वमस्यैव कर्मणा 11911 एवं सिस्क्षुर्भूतानि ददर्श प्रथमं विसुः। पितामहोऽब्रवीचैनं भृतानि सुज मा चिरम् हरिकेशस्तथेत्युक्तवा भूतानां दोषद्शिवान् । दीर्धकालं तपस्तेपे मन्नोडम्भसि महातपाः 11 88 11

कैसे अवनत्थामाने मारडाला ? देखो, जिस महारथको युद्धमें खडा देखकर महाघतुषधारी द्रोणाचार्य युद्धसे हट जाते थे, उस वीर धृष्टद्युद्धको एकले अवनत्थामाने कैसे मारडाला ? हे पुरुष-सिंह ! हमारे गुरुपुत्र अवनत्थामाने कीनसा कर्म किया था, जिससे एकलेही ने सबको मारडाला । (१-५)

श्रीकृष्ण गोले, हमे यह निश्चय हैं कि अश्वत्थामा निश्चय ही देवतोंके देवता, ईश्वरके ईश्वर, सनातन शिवको शरण गये होंगे, इसीसे उन्होंने सबको मारडाला, शिव प्रसन्न होकर महुष्यको अमर कर सकते हैं और ऐसा पराक्रम दे सक्ते हैं, जिससे मनुष्य इन्द्रको भी मार सक्ता है, इम देवतों के देवता शिवके अनेक पुराने कमें जानते हैं। हे भारत! वह जगत्के आदि, अन्त और मध्य हैं, उनकी शिक्तिसे सब जगत् अपना अपना काम करता है। जिस समय भगवान् ब्रह्मा पहिले सृष्टि बनाने लगे, तब उन्होंने भी शिवके ऐसे ही प्रभाव देखे और शिवसे कहा कि अच्छा, और फिर ब्रह्माको जगत्के दोष दिखलाये, तब महातपस्ती ब्रह्माने बहुत दिनतक जलमें

cassseccessaaceeeasneceeseeeee

सुमहान्तं ततः कालं प्रतीक्ष्यैनं पितामहः। स्रष्टारं सर्वभूतानां ससर्ज मनसाऽपरम् 11 88 11 सोऽब्रवीत्पितरं दृष्ट्वा गिरिशं सुप्तमंभसि । यदि से नाग्रजोऽस्त्यन्यस्ततः स्रक्ष्याम्यहं प्रजाः॥१३॥ तमब्रवीत्पिता नास्ति त्वद्नयः पुरुषोऽग्रजः। स्थाणुरेष जले मग्नो विस्नव्धः क्रुरु वैकृतम् 118811 भूतान्यन्वसृजत्सप्त दक्षादींस्तु प्रजापतीन् । यैरिमं व्यक्रोत्सर्वं भूतग्रामं चतुर्विधम् 11 રેલ્લા ताः सृष्टमात्राः श्लुधिताः प्रजाः सर्वोः प्रजापतिम्। विभक्षायिषवो राजन्सहसा प्राद्रवंस्तदा स भक्ष्यमाणस्त्राणार्थी पितामहसुपाद्रवत् । आभ्यो मां भगवांस्त्रातु वृत्तिरासां विधीयताम्॥१७॥ . ततस्ताभ्यो ददावन्नमोषधीः स्थावराणि च। जङ्गमानि च भूतानि दुर्चलानि वलीयसाम् ॥ १८॥ विहितालाः प्रजास्तास्तु जग्मुः सृष्टा यथागतम् । ततो वृष्टिरे राजन्यीतिमत्यः खयोनिषु 11 28 11

ह्रवकर तपस्या करी इस प्रकार बहुत दिनतक तपस्या करते करते त्रम्हा जगत् कत्ती शिवका मागे देखते रहे, फिर उन्होंने अपने मनसे एक मनुष्य उत्पन्न किया। (६-१२)

नहाने अपने पिता शिवको जलमें सोता हुआ देख उस पुरुषसे कहा यदि ग्रुझसे पहिले कोई उत्पन्न न हुआ हो ता मैं सृष्टि रचूं, उस पुरुषने कहा कि, तुम विश्वास रक्खो तुमसे पहिले उत्पन्न हुआ कोई नहीं है, ये जो जलमें सोते हैं सो सनातन पुरुष हैं, अब तुम प्रजा उत्पन्न करो। (१३-१४) तव ब्रह्माने दक्ष प्रजापित आदि लेकर सब जगत् बनाया, फिर स्वेदज, अण्डल, उम्ब्रिज और जरायुज ये चार प्रकारकी सृष्टि रची, हे राजन्! यह सब प्रजा उत्पन्न होते ही भूखसे ज्याकुल होकर दक्ष प्रजापितको खाने दौडी। दक्ष प्रजापित अपनी रक्षाके लिये, ब्रह्माके पीछे दौडे और कहा कि, हे भगवन्! आप इनसे हमारी रक्षा कीजिये और इन्हें खानेको कुछ दीजिये, तब ब्रह्माने उन्हें अन और स्थावर औपघी दी,और चलनेवालेमें यह नियम कर दिया कि दुर्वलको बलवान खाजाय। (१५-१८)

भूतग्रामे विषृद्धे तु तुष्टे लोकगुरावि । उद्तिष्ठज्ञलाज्ज्येष्ठः प्रजाश्चेमा दद्शे सः बहुरूपाः प्रजा सृष्टा विवृद्धाश्च स्रतेजसा । चुकोध भगवान् रुद्रो लिङ्गं स्वं चाप्यविध्यत्॥ २१॥ तत्प्रविद्धं तथा भूमौ तथैव प्रत्यतिष्ठत । तम्बाचाव्ययो ब्रह्मा वचोभिः शमयनिव किं कृतं सलिले शर्व चिरकालिश्वतेन ते। किमर्थं चेदमुत्पाच लिङ्गं भूमौ प्रवेशितम् सोऽब्रवीजातसंरमभस्तथा लोकगुरुर्गुरुम्। प्रजाः सृष्टाः परेणेमाः किं करिष्यास्यनेन वै ॥ २४ ॥ तपसार्धिगतं चान्नं प्रजार्थं से पितामह। ओषध्यः परिवर्त्तेरन्यथैवं सततं प्रजाः 11 24 11 एवस्कत्वा स सकोषो जगाम विमना भवः। गिरेर्मुजवतः पादं तपस्तप्तं महातपाः ॥२६॥ [७७७]

इति श्रीमहाभारते०संहितायां०सौरितकपर्वान्तर्गतऐपीके पर्वाण सुधिष्ठिरकृष्णसंवादे सप्तद्शोऽध्यायः ॥१७॥ श्रीमगवातुवाच-ततो देवयुगेऽतीते देवा वै समकल्पयन्।

हित श्रीमहाभारते • सं श्रीमगवा सुवाच ~ हे राजन् ! तक्ष्य अपने घरको चली अपनी जातियों में यह सब जगत् सनातन पुरुष भी सब प्रजाको देखने अनेक रूपसे उत्प सुआ देख, जिनको और अपने लिंगको दिया, वह लिज पृष्ठ ही रह गया । (१ तब ब्रह्मा उन्हें तुमने हतने दिनत हे राजन् ! तब वह प्रजा अन्न लेकर अपने घरको चली गई; तभीसे अपनी अपनी जातियोंमें प्रेम बढने लगा। जब यह सब जगत उत्पन्न होगया तव सनातन पुरुष मी जलसे उठ घैठे, और सब प्रजाको देखने लगे। सब जगत्के अनेक रूपसे उत्पन्न हुआ और बढा हुआ देख, शिवकी बडा क्रोध हुआ, और अपने लिंगको बलसे पृथ्वीमें पटक दिया, वह लिझ पृथ्वीमें गिरकर वैसा ही रह गया। (१९-२२)

तब ब्रह्मा उन्हें शान्त करके बोले, तमने इतने दिनतक पानीमें

क्या किया ? और इस लिङ्गको पृथ्वीमें क्यों पटक दिया ? तव जगत्के गुरू शिव ब्रह्मासे क्रोध करके बोले, प्रजा तो दसरेने बनाही ली, अब मैं इसको रखकर क्या करूंगा ? तमने तपसे अन और ओपधी भी बना लिए, अब प्रजा सुख करे ऐसा कहकर शिव क्रोधमें भर-कर मुझवान नामक पर्वतपर तप कर-नेको चले गए। (२३-२६) [७७७] सौष्तिकपर्वमें सत्तरह अध्याव समाप्त ।

सौष्तिकपर्वमं अठारह अध्याय। श्रीकृष्ण बोले, हे राजन् ! युधिष्ठिर

# ceeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee	
यज्ञं वेद्प्रमाणेन विघिवद्यष्टुमीप्सवः ॥ १ ॥	
कल्पयामासुरथ ते साधनानि हवींषि च । 🖁	
भागाही देवताश्चेव यज्ञियं द्रव्यमेव च ॥ २॥	
ता वै रुद्रमजानंस्रो याधातथ्येन देवताः।	
नाकल्पयन्त देवस्य स्थाणारभागं नराधिप ॥ ३॥ 🦞	
सोऽकल्प्यमाने भागे तु कृत्तिवासा मखेऽमरैः।	
ततः साधनमन्दिच्छन्धनुरादौ ससर्जे ह ॥ ४॥ 🧍	
लोकयज्ञः क्रियायज्ञो गृहयज्ञः सनातनः।	
पश्चभूतृतृयज्ञश्च जज्ञे सर्विमिदं जगत् ॥ ५॥	
लोकपज्ञैन्धेयज्ञैश्च कपदी विद्ये घनुः।	
घतुः सृष्टमभूत्तस्य पश्चिकिच्कुप्रमाणतः ॥ ६॥	
वषट्कारोऽभवज्ज्या तु धनुषस्तस्य भारत ।	
यज्ञाङ्गानि च चत्वारि तस्य संनहनेऽभवन् ॥७॥	
ततः कुद्धो महादेवस्तदुपादाय कार्मुकम् ।	
आजगामाथ तत्रैव यत्र देवाः समीजिरे ॥ ८॥	
तमात्तकार्भुकं हट्टा ब्रह्मचारिणमन्ययम्।	
विष्यथे पृथिवी देवी पर्वताश्च चकाम्परे ॥ १॥	
न ववौ पवनश्चैव नाग्निर्जंडवाल वैधितः।	
पश्च स्तर्य ज्ञिश्च कर्री विद्धे धनुः। घनुः सृष्टम भृत्तस्य पश्चिक द्भुप्रमाणतः ॥६॥ घनुः सृष्टम भृत्तस्य पश्चिक द्भुप्रमाणतः ॥६॥ वषट्कारोऽ भवज्ञ्या तु धनुषस्तस्य भारत। यज्ञाङ्गानि च चत्वारि तस्य संनहनेऽ भवन् ॥७॥ ततः कुद्धो महादेवस्त दुणादाय कार्मुकम्। आजगामाथ तन्नैव यत्र देवाः समीजिरे ॥८॥ तमात्तकार्मुकं हृद्वा ब्रह्मचारिणमञ्चयम्। विद्यथे पृथिवी देवी पर्वताश्च चकामिपरे ॥९॥ न ववौ पवनश्चेव नाग्निजंज्वाल वैधितः। व्यश्चमचापि संविग्नं दिवि नक्षत्रमण्डलम् ॥१०॥ विधिपूर्वक यज्ञोंको यज्ञ और नृयज्ञसे पांच हाथका धनुष वनाया। हे भारत उस धनुषका रोदा वद्पकार हुआ और सब यज्ञकी सामग्रीसे उसे पृष्ट किया, तब महादेव क्रीध करके उस धनुषको लेकर उस स्थानपर आये,	
विधिपूर्वक यज्ञोंको यज्ञ और नृयज्ञसे पांच हाथका धनुष	
नुसार ही यज्ञकी सा- वनाया। हे भारत उस धनुषका रोदा	
ा छेने योग्य देवतोंको वट्पकार हुआ और सब यज्ञकी सामग्रीसे	
यथार्थ रूपसे शिवको उसे पुष्ट किया, तब महादेव क्रोध करके	
सिलिये उन्होंने मग- उस धनुषको लेकर उस स्थानपर आये,	
ा न दिया, तब शिवने जहां सब देवता यज्ञ कर रहे थे। ब्रह्मचारी	
हिले धतुप बनाया, सनातन जिवको प्रचार निर्मे देख प्रकृति	
क्रियायज्ञ, सनातन और एवंट कांग्ये की	
यह और नृयह बना- चलता बन्द होगया, आग जलती	
ात् बनाया, फिर लोक-	
क्ष्या युश्च गर्द, आदाश्चम तार आर् इत्वेभ्भभद्रक्ष्यक्ष्यक्ष्यक्ष्यक्ष्यक्ष्यक्ष्यक्ष	
**	

विधिपूर्वक यज्ञोंको वेदोंके प्रमाणसे बनाया, उनके अनुसार ही यज्ञकी सा-मग्री भी और भाग लेने योग्य देवतोंकी बनाया, परन्तु ने यथार्थ रूपसे शिवको नहीं जानते थे, इसलिये उन्होंने भग-वान शिवका भाग न दिया, तब शिवने क्रोध करके पहिले धनुप बनाया, फिर लोक यज्ञ, क्रियायज्ञ, सनातन गृहयज्ञ, पश्चभृत यज्ञ और नृयज्ञ बना-

न बभौ भास्करश्चापि सोमः श्रीमुक्तमण्डलः। तिमिरेणाकुलं सर्वमाकाकां चाभवद्भतम् 11 88 11 अभिभृतास्ततो देवा विषयान्न प्रजान्निरे। न प्रत्यभाच यज्ञः स देवतास्त्रेसिरे तथा 11 22 11 ततः स यज्ञं विव्याध रौद्रेण हृदि पत्रिणा। अपकान्तस्ततो यज्ञो मृगो भृत्वा सपावकः स त तेनैव रूपेण दिव्यं प्राप्य व्यराजत। अन्वीयमानो रुद्रेण युधिष्ठिर नभस्तले 11 88 11 अपकान्ते ततो यशे संज्ञानप्रसभातस्यरात् । नष्टसंज्ञेषु देवेषु न प्राज्ञायत किंचन || १५ || त्रयम्यकः सर्वितुर्वाह् भगस्य नयने तथा। पूष्पश्च दशनान् ऋद्धो धनुष्कोट्या व्यशातयत्॥१६॥ प्राद्रवन्त ततो देवा यज्ञाङ्गानि च सर्वेशः। केचित्तत्रैव घूर्णन्तो गतासव इवाभवन् स तु विद्राव्य तत्सर्वे शितिकण्ठोऽवहस्य च। अवष्टभ्य धनुष्कोटिं रुरोध विवुधांस्ततः ततो वागमरैक्का इयां तस्य धनुषोऽच्छिनत्। अथ तत्सहसा राजंदिछन्नज्यं विस्फुरद्धनुः ततो विधनुषं देवा देवश्रेष्ठमुपागमन् । शरणं सह यज्ञेन प्रसादं चाकरोत्प्रसः

नक्षत्र घूमने लगे, सर्थ और चन्द्रमाका मण्डल अस्त होगया, जगत् और आ-काश अन्धकारसे भर गया, देवता और सब प्राणी घवडाने लगे। सब देवता घवडा गए, तब शिवने उस यझ के हृदयमें एक बाण मारा, तब यझ और अग्नि: हरिण बनकर भाग गये, श्चिवभी उस तेजसे प्रकाशित होने लगे, और आकाशमें यझको हुंटने लगे। जब यज्ञ नष्ट होगया, तब सब देवता घवडाने लगे। तब शिवने कोष करके धनुषके कोनेसे सविताके हाथ, भगके नेत्र और पूराके दांत तोड डाले, तब सब देवता और यज्ञके अङ्ग इघर उघरकी माग गये; कोई वहीं सुरदेके समान गिरपडे, तब शिवने देवतोंको भागते देख धनुषके कोनेसे सबको रोक दिया, तब देवतोंने अपने बचनने इस धनुषके रोदेको

ततः प्रसन्नो भगवान् स्थाप्य कोपं जलाशये ।

सजलं पावको भूत्वा शोषयत्यनिशं प्रभो ॥ २१ ॥

भगस्य नयने चैव बाह् च सवितुस्तथा ।

प्रादात्पूष्णश्च दशनान्पुनर्पज्ञांश्च पाण्डव ॥ २२ ॥

ततः सुस्थमिदं सर्वं वभूव पुनरेव हि ।

सर्वाणि च हर्वोष्यस्य देवा भागमकल्पयन् ॥ २३ ॥

तस्ति कुद्धेऽभवत्सर्वमसुस्थं भुवनं प्रभो ।

प्रसन्ने च पुनः सुस्थं प्रसन्नोऽस्य च वीर्यवान् ॥ २४ ॥

ततस्ते निहताः सर्वे तव पुत्रा महारथाः ।

अन्ये च बहवः शुराः पांचालस्य पदानुगाः ॥ २५ ॥

न तन्मनसि कर्त्तव्यं न च तद् द्रौणिना कृतम् ।

महादेवपसादेन कुरु कार्यमनन्तरम् ॥ २६॥ [८०३]

eeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयाविक्यां साँविकपर्वान्तर्गत ऐपीके पर्वेणि भ्रष्टादशोऽध्याय:॥ १८ ॥

ऐषीकं पर्व समाप्तम् । सौष्तिकं ऐषीकं च पर्वद्वयिमदं संलग्नम् ।

काट दिया तब सब देवता यज्ञकी संगर्मे लेकर धनुपरहित शिवकी शरणमें गये।(१---२०)

तब शिवने भी उनके ऊपर कृपाकर दी तब भगवान् शिवने अपने कोपको तलावमें गिराय दिया, वहीं कोघ अब अग्निरूप होकर जलको सुखाता है, शिवने फिर प्रसन्न होकर भगको नेत्र, सविताको हाथ और पूपाका दांत दे दिये। और फिर जगतमें यज्ञ होने लगे। उसी दिनसे सब जगत् सावधान होगया, तमीसे देवतोंने सब यज्ञोंमें शिवका भाग दे दिया। (२१-२३)

हे राजन् शिवहीं के कोधसे यह सब नाश हुआ और उनहीं की प्रसन्नतासे सुख होगा, इसीसे तुम्हारे सब महारथ पुत्र और साथियों सहित धृष्टसुम्न मारे गए। आप उस कर्मको अञ्चल्थामाका किया न मानिये, यह सब शिवकी कृपासे हुआ है, अब आगे जो कुछ काम हो सो कीजिये। (२४—२६) [८०३]

सो। दिक पर्वमें अठारह अध्याय समास । ऐपीक और सौंप्रिक पर्व समाप्त ।

~~~

9<del>999999999999999999999999999999</del>

अस्यानन्तरं स्त्रीपर्व भविष्यति तस्यायमाद्यः श्लोकः। जनमेजय उवाच-हते दुर्योधने चैव हते सैन्ये च सर्वशः। धृतराष्ट्रो महाराज श्रुत्वा किमकरोन्छने 11 8 11

आदितः श्लोक संख्या-



अध्याय

विषय

ăă

अध्याय

विषय

gg

१ अश्वस्थामाप्रभृतिका भयभीत होके रणभूमिसे अलग जाना, धतराष्ट्रका आक्षेप ।

धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा अक्वत्थामाप्रभृतिका रात्रिके वटवृक्षके तले निवास वर्णन ।

उछके द्वारा स्रोते हुए कौवाँका मरना देखके अध्यत्थामाका निद्रित शञ्ज पाण्डव तथा पाश्चालोंको मारनेका त्रिचार करना ।

२-- ३ अञ्चत्थामाके अभिप्रायमें कृपाचार्यकी असम्मति, कृपाचार्य और कृतवर्गीके समीप अञ्चत्थामाके वचन ११

Necesses consecutions of the contract of the c ४ कुपाचार्य और अञ्चत्थामाकी निज निज मत स्थापित करनेके लिये उत्तम युक्तिपूर्ण बक्तता और तीनो महाराधियोंका रांत्रिके समय पाण्डवोंके शिविरमें जाना।

५ अक्वत्थामाका शिबिर जाके महाभूत देखकर चिन्ता करके महादेवकी उपासना करना, देवी और

प्रकट होके अरवस्थामाको देना ।

६ अद्भरथामाका शिविरमें प्रवेश करना और शिविरके द्वारपर कृपाचार्य तथा कृतवर्माका स्थित होना,अक्वत्थामा का धृष्टशुस्रके डेरेमें जाना, अक्वत्थामा-के हाथसे घृष्ट्यस्रप्रभृति तथा बची हुई सेनाके सब पुरुषोंका मारा जाना। २९

७-८ अक्वत्थामादि तीनों महारथों का ग्रुग्रर्ष दुर्योधनके निकट जाना और उनकी दुरवस्था देखके कुपाचार्येका आक्षेप करना।

९ दुर्योधनको पृथ्वीमें पडे देखके अक्वत्थामाका विलाप करके शिविरके वीच षृष्टशुम्नादि शत्रुओंके मारनेका सम्बाद कहना और अश्वत्थामाकी प्रशंसा करके दुर्योधनका प्राण त्यागना । ६०

१० ऐषिक पर्वारम्भ, धृष्टद्मुस्नके सारथिके मुखसे द्रीपदीपुत्रश्रमृति खजनों को मृत्युका सम्वाद सुनके युधिष्ठिरका विलाप करना ।

११ नकुलके मुखसे प्रत्रादिका मरना सनके द्रौपदीका विलाप करके यथिष्ठि

अध्याय विषय पृष्ठ

रसे अव्यत्थामाको मारनेके लिये अनु-रोष करनां, तथा द्रौपदीके अनुरोधसे भीमसेनका अव्यत्थामाको मारनेके लिये जाना । ७१

१२ कृष्णका युधिष्ठिरका अस्वत्यामा को मारनेके लिये उद्यत, मीमसेनकी रक्षाके लिये अनुरोध करना और उसही प्रसङ्गमें ब्रह्मश्चिरनाम अस्वका उपाख्यान कहना। ७५

१३ युविष्ठिर, कृष्ण और अर्जुनका एक रथपर चढके मीमसेनके पास जाना, अक्वत्थामाका पाण्डनोंको मारनेके लिये ब्रह्मशिरनाम अस्त्र चलाना,अक्वत्थामा-के असको निचारण करनेके लिये अर्जु-नका ब्रह्मशिर अस्त्र छोडना, ज्यासदेवके अनुरोधसे अक्वत्थामाका पाण्डनोंको

ť

अध्याय विषय ५८

अपने सिरकी मणि देनेमें सम्मत होकर ब्रह्मश्चिर अस्त्रको उत्तराके गर्भमें छो-डना।

१४-१५ अञ्चरधामाकं सङ्ग कृष्णकी प्रशिक्षितके जन्मादि विषयक वार्वालाप, अञ्चरधामाके विषयमें कृष्णका शाप, अञ्चरधामाके विषयमें कृष्णविका शाप, अञ्चरधामासे मणि लेकर कृष्णादिका द्वीपदीके समीप जाके, उसे घीरज देना, और उस मणिको ग्राविष्ठिरके सिरपर घारण करना।

१६—१८ अस्वत्थामाके हाथसे पाखालादि वीरोंके विनाध विषयमें युधिष्ठिर और कृष्णकी वार्तालाप तथा महादेवका माहात्म्य वर्णन देवताओंके पक्षमें महादेवका कुद्ध होके प्रसम्भ होना, सौिप्तिक पर्वकी समाप्ति। ९०

--





## [स्रीपर्व १]

# HETHER

भाषा--भाष्य-तभेत संपादक श्रीपाद दामादर सातवहेकर, स्वाध्याय मंडह, श्रीध जि. साताग

## छपकर तैथ्यार है।

- १ अ।दिएर्त्र । पृष्ठ लंख्या ११२५. मूल्य म. आ. से ६) रे.
- 🤻 🚰 📢 पृष्ट संख्या ३५६. मृत्य म. आ. सेरे) रु.
- ३ त्निप्यं । पृष्ट संख्या १५३८ मृत्य म. आ. से ८) रु.
- ४ विराटपर्व । पृष्ठ संख्या ३०६ मृत्य. म. आ. से १॥ ) रु.
- प्रद्योगपूर्व। पृष्ट संख्या ९५३ मृत्यः म. आ. से. ५ ) क
- ्ह् भीटम्पर्व । पृष्ट संख्या ८०० मध्य म. आ.से ४) क
- ७ द्वीपापूर्व । पृष्ठ संख्या १३६४ मृत्य म० आ० से आ) र.
- 🌊 ्कृषीपूर्व । पृष्ठ संख्या ६३७ म्. म० आ० से ३॥ ) ह.

## र्शि महाभारतकी समालोचना।

मंत्री— स्वाध्याय मंडल, औंघ, (जि. सातारा )





श्री-महर्षि-व्यास-प्रणीत

## महाभारत।

(११) स्त्रीपर्व।

( भाषाभाष्य समेत )

सम्पादक और प्रकाशक श्रीपाद दामोदर सातवळेकर स्वाध्यायमण्डल, औंध (जि० सातारा )

> संबत् १९८६, शक १८५१, सर्व १९६९,



राजा हि यः स्थितमज्ञः खयं दोषानवेक्षते ।
देशकालविभागं च परं श्रेयः स विन्दति ॥
स्रीपर्य ज० १३ । ६

" जो राजा अपनी द्विको स्थिर काके देश और कालके अनुसार सब दोपोंको देखता है, जगत् में उसीका करणण होता है ।"

अविद्या मकाव — श्रीपाद दामोदर सातवळेकर, स्वाप्पाय संदक्ष भारतहरूणलय सीच (जि. सातारा)

696S.D.

<u>REPARTER CONTROL CONT</u>

#### श्रीमहर्षिच्यासप्रणीतम् ।

## म हा भारत म्।

### स्त्रीपर्व ।

श्रीगणेशाय नंमः। श्रीवेद्व्यासाय नमः।

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरखतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥१॥
जनमेजय उवाच-हते दुर्योधने चैव हते सैन्ये च सर्वद्याः।
धृतराष्ट्रो महाराज श्रुत्वा किमकरोन्मुने ॥१॥
तथैव कौरवो राजा धर्मधुत्रो महामनाः।
कृषप्रभृतयक्षेव किमकुर्वत ते त्रयः ॥२॥
अश्वत्थाम्नः श्रुतं कर्म द्यापादन्योन्यकारितात्।
धृतान्तमुत्तरं ब्रहि यदभाषत सञ्जयः ॥३॥

क्षी पर्वमें प्रथम अध्याय।

नारायण, नरोत्तम नर और देवी सरस्वतीको नमस्कार करके जय कीर्तन करना चाहिये। (१)

महाराज जनमेजय बोले, हे वैश-म्पायन मुने ! जिस समय राजा दुर्यो-धन सब सेनाके सहित मारे ग्ये, तब महाराज धतराष्ट्रने सुनकर क्या किया!
महामनखी कुरकुलराज महाराज युधिछिरने क्या किया? और कुपाचार्य,
अक्तत्थामा, और कृतवमीने क्या किया?
हमने यह सुना कि कुष्णने अक्तत्थामाको
शाप दिया था, फिर सञ्जयने राजासे क्या
कहा सो हमसे कहिये?।(१-३)

वैश्वम्यायन उवाच-हते पुत्रशते दीनं छिन्नशाखिमव द्वमम् । पुत्रशोकाभिसन्तप्तं घृतराष्ट्रं महीपतिम् 11811 ध्यानसूकत्वमापन्नं चिन्तया समभिष्ठुतम् । अभिगम्य महाराज सञ्जयो वाक्यमब्रवीत् किं शोचिस महाराज नास्ति शोके सहायता। अक्षौहिण्यो हताश्राष्ट्रौ दश्चैव विज्ञाम्पते 11 8 11 निर्जनेयं वसुपती शून्या संप्रति केवला। नानादिग्भ्यः समागम्य नानादेश्या नराधिपाः ॥ ७ ॥ सहैव तब पुत्रेण सर्वे वै निधनं गताः। पितृणां पुत्रपौत्राणां ज्ञानीनां सुद्धदां तथा । गुरूणां चानुपूर्व्येण प्रेतकार्याणि कारय वैश्वम्यायन उवाच-तच्छ्रत्वाऽकरुणं वाक्यं पुत्रपात्रवधार्दितः । पपात सुवि दुर्घषों वाताहत इव दूमः 11811 धृतराष्ट्र उवाच-इतपुत्रो हतामात्यो हतसर्वसुहुज्जनः। दुःखं नूनं भविष्यामि विचरन्पृथिवीमिमाम् ॥ १० ॥ किं नु बन्धुविहीनस्य जीवितेन ममाच वै।

श्रीवैशम्यायन मुनि चोले, हे महा-राज ! सौ प्रत्रोंके मरनेसे राजा धतरा-ष्ट्रकी ऐसी दशा होगई जैसे शाखा कट-नेसे वृक्षकी। उस समय पुत्रशोकसे व्याकुल, चिन्तासे भरे राजा धृतराष्ट्रके पास जाकर सञ्जय वोले. हे महाराज! शोक किसीकी सहायता नहीं करता. इसलिये आप क्यों शोक करते हैं? देखो अठारह अक्षीहिणी सेना मारी गई, इस समय पृथ्वी मनुष्योंसे रहित होगई है, अब किसी ओर कुछ उत्साह नहीं दीखता, अनेक देशोंसे आये हुये राजा तुम्हारे पुत्रोंके सहित मारे गये.

आप राठिये, गुरु, बेटे, पीते, जाती और मित्रोंका प्रेतकर्म कीजिये। (६-८)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन - जनमेजय ! सञ्जयके ऐसे दया भरे वचन सुनकर अपने पुत्र और पाँतांके शोकसे व्याकुल राजा घतराष्ट्र मृर्व्छित होकर पृथ्वीमें गिर गये, उस समय राजाकी ऐसी दशा होगई. जैसे वायुसे उखडे हुए वृक्षकी। (९)

राजा धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय । मेरे सव पुत्र, मन्त्री और मित्र मारे गये, अव मैं जीकर जगत्में केवल दुःख ही भोगंगा। अब मैं बन्धुरहित होकर जी-

श्वाप १)

श्वाप १)

श्वाप १)

श्वाप १)

श्वाप १ विषय ।

स्वाप स्वाप महापाज्ञ स्वीपारहिमरिवां ग्रुमान ॥ १२ ॥

न कृतं सुहृदां वाक्यं जामदरन्यस्य जल्पतः ।

नारदस्य च देवर्षेः कृष्णहैपायनस्य च ॥ १३ ॥

सभामध्ये तु कृष्णेन यच्छ्रेपोऽभिहितं मम ।

अस्त वेरिण ते राजन्युत्रः सङ्ग्रज्ञामिति ॥ १४॥

तच वाक्यमक्त्वाऽहं भृत्रं तत्पामि दुर्मितः ।

न हि श्रोताऽसि भीष्मस्य धर्मगुक्तं प्रभाषितम्॥ १५॥

दुर्योधनस्य च तथा वृष्ण भस्येव नर्दतः ।

दुःशास्त्रवां श्रुख कर्षा वृद्ध सं विदिधिते ।

न साराम्यास्माः किञ्चित्रुरा सञ्जय दुष्कृतम् ॥ १८॥

यस्पेदं फलम्येह मया मुदेन सुष्ठ्यते ।

स्वा होगई है, जैते पङ्क करनेसे वृद्धे

पश्चीकी । मेरा राज्य नर होगया, आंख

जाती रहीं और सव वन्यु मी मारे गये,

अव वेजरिहत स्रयेके समान में अव

जीकर क्या कर्ष्या १ मेने पहिले अपने

क्रित्र पश्चराम्, ज्ञस्वभि नारद और

कृष्णदेवायन स्विचेके वचन नहीं माने

ये, स्रवसे जो सभाके वीचर्षे बैठकर

श्रीकृष्णने कल्याण मरे वचन कहे थे,

मेने इनके वचन नहीं सुने, उन्होंने

सुन्न वेर मत कीजिये और अपने

स्वा वेर मत कीजिये और अपने

स्वाप वेर मत कीजिये अपने अपने जन्ममें कोहे पाप किया है, जिसका सुन्नके पह मयानक फल

परिणामश्च वयसः सर्वबन्युक्षयश्च मे ॥ १९ ॥ सुहृन्मित्रविनाशश्च दैवयोगादुपागतः । कोऽन्योऽस्ति दुःखिततरो मत्तोऽन्योहि पुमान्सुवि॥२०॥ तन्ममाचैव पर्यन्तु पाण्डवाः संशितव्रताः। विवृतं ब्रह्मलेकस्य दीर्घमध्वानमास्थितम् 11 38 11 वैशम्पायन उवाच-तस्य लालप्यमानस्य बहुशोकं वितन्वतः। ज्ञोकापहं नरेन्द्रस्य सञ्जयो वाक्यमब्रवीत् 11 22 11 शोकं राजन्वयपनुद श्रुतास्ते वेदनिश्चयाः । शास्त्रागमाश्च विविधा वृद्धेभ्यो रूपसत्तम 11 33 11 सञ्जये पुत्रशोकार्ते यद्चुर्मुनयः पुरा। यथा यौवनजं द्र्पमास्थिते ते सुते रूप 11 88 11 न त्वया सुहृदां वाक्यं ब्रुवतामवधारितम्। खार्थश्च न कृतः कश्चिल्लुब्धेन फलगृद्धिना ॥ २५॥ असिनैवैकधारेण खबुद्या तु विचेष्टितम्। प्रायशोऽवृत्तसम्पन्नाः सततं पर्युपासिताः यस्य दुःशासनो मंत्री राघेयश्च दुरात्मवान् ।

परिणामश्र परिणामश्य परिणा भोगना पढा। मुझे निश्रय है कि मैंने पहिले जन्मों में कुछ पाप किया था, उसीसे ब्रह्माने मुझे ऐसे ऐसे दुःख दिये। यह बुढापा, वन्धु और मित्रोंका नाश ये प्रारब्धहीसे सब दुःख इकट्टे होगये हैं; अब इस जगतमें हमारे समान दुःखी और कौन है ? इसलिये व्रतधारी पाण्डंव आज ही हमें ब्रह्म लोकके बड़े रास्तेमें नाते देखें, अर्थात् हम इसही समय प्राण

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,इस प्रकारसे राजाको अनेक प्रकार रोते देख सञ्जय बोले, हे महाराज! आपने वृढाँके मुखसे

वेद और अनेक शास्त्र सुने हैं, इसलिये आप शोकको छोड दीजिए, हे राजन ! जैसे पुत्रके मरनेसे राजा सुझयको शोक हुआ था और उनको मुनियोंने समझा-या था, जैसे उनके पुत्रोंको अभिमान हुआ था, ऐसे ही तुम्हारे पुत्रको भी अभिमान हुआ था, आपने पहिले किसीकी वात नहीं मानी, केवल लोभमें पडके अन्याय करने लगे और अपना भी प्रयोजन कुछ सिद्ध न कर सके, केवल अत्यन्त तेजधारवाली तलवारके समान अपनी महातेज बुद्धिसे काम

<sup>ଅକ୍ଷେଷ୍ଟ କେଟ ବଟଟ ପର୍ବଟ ପର୍ବଟ ପର୍ବଟ କରେ ବେଟେ କରେ ଅବ୍ୟବକ୍ଷ କରେ ଅବକ୍ଷର କରେ ଅବକ୍ଷର କରେ ଅବକ୍ଷର କରେ ଅବକ୍ଷର କରେ ଅବକ୍ଷ</sup>

राकुनिश्चैव दुष्टात्मा चित्रसेनश्च दुर्मितिः श्राल्यश्र येन वै सर्वं शल्यभूतं कृतं जगत्। कुरुवृद्धस्य भीष्मस्य गान्धार्या विदुरस्य च ॥ २८॥ द्रोगस्य च महाराज कृपस्य च शरद्वतः। कृष्णस्य च महाबाहो नारदस्य च घीमतः ऋषीणां च तथाऽन्येषां व्यासस्यामिततेजसः। न कृतं तेन वचनं तव पुत्रेण भारत। न धर्मः सत्कृतः कश्चित्रित्यं युद्धमभीप्सता अल्पबुद्धिरहङ्कारी नित्यं युद्धिमिति ब्रुवन् । ऋरो दुर्भर्षणो नित्यमसन्तुष्टश्च वीर्यवान् 11 38 11 श्रुतवानिस मेघावी सलवांश्रेव निलदा। न मुख्यन्तीह्याः सन्तो बुद्धिमन्तो भवाह्याः॥३२॥ न धर्मः सत्कृतः कश्चित्तव पुत्रेण भारिष। क्षपिताः क्षत्रियाः सर्वे शत्रूणां वर्षितं यदाः ॥ ३३॥ सध्यस्थो हि त्यमप्यासीने क्षमं किश्चिदुक्तवान्। दुर्धरेण त्वया भारस्तुलया न समं धृतः 11 28 11

आपके पुत्रने सदा ही मुखींको मन्त्री रक्खा, जिसका दुःशासन, मुखे राधापुत्र कर्ण, दुष्टात्मा शक्कनी, मन्त्री होय, उसका नाश क्यों न होता? जिस ने सब जगत्को जीता था, ऐसे शब्य, करुकुलमें बूढे भीष्म, गान्धारी, विदुर, कृषाचार्य, द्रोणाचार्य, महावाहु कृष्ण, दुद्धिमान नारद और अनन्त तेजस्वी न्यास आदि मुनियोंक वचन दुर्योधनने न माने, कभी किसी धर्मका आश्रय न लिया, केवल सदा युद्ध करनेहीकी इच्छा रक्खी, जैसे वायु तिनकोंको इधर उधर उडाकर लेजाता है, तैसेही काल मी

सन जन्तुओंको इधर उधर करता रहता है, दुर्योधन मूर्ख, अभिमानी केवल युद्ध करनेकी इच्छा करनेवाला, दुष्ट, क्षमाहीन, असन्तोषी और वलवान था।(२७-३१)

तुम विद्वान, बुद्धिमान और सदासे सत्यवादी हो, ऐसे बुद्धिमान मनुष्योंको कभी मोह नहीं होता। हे राजन् । तुम्हारे पुत्रने घर्मका आदर नहीं किया, सब श्वत्रियोंका नाश कराया और शश्चवोंका यश बढा दिया, तुम भी उस समय मध्यस्थ थे, परन्तु कोई बात तुमने भी अच्छी न की, तराजुके दोनों ओर

යි. ප්‍රතිශේඛය සහ අතර සහ සහ සහ සහ අතර සහ අතර සහ සහ සහ සහ සහ සහ සහ සහ

आदावेव मनुष्येण वर्तितव्यं यथाक्षमम् । यथा नातीतमर्थं वै पश्चात्तापेन युज्यते ॥ ३५ ॥ पुत्रगृद्ध्या त्वया राजन् प्रियं तस्य चिकीर्षितम् । पश्चात्तापिममं प्राप्तो न त्वं शोचितुमईसि मधु यः केवलं हट्टा प्रपातं नानुपर्यति । स भ्रष्टो मधुलोभेन शोचत्येवं यथा भवान् ॥ ३७ ॥ अर्थान्न शोचन्प्राशीत न शोचन्विन्दते फलम् । न शोचन श्रियमाप्तोति न शोचन्विन्दते परम् ॥३८॥ स्वयमुत्पादियत्वाऽप्तिं वस्त्रेण परिवेष्टयन् । दश्चमानो मनस्तापं भजते न स पण्डितः 11 39 11 त्वयैव ससुतेनायं वाक्यवायुसमीरितः। लोभाज्येन च संविक्तो ज्वलितः पार्थपावकः।॥४०॥ तिखन समिद्धे पतिताः शलभा इव ते सुताः। तान्वै शराग्निनिर्देग्धान्न त्वं शोचितुमहीस यबाश्रुपातात्कलिलं बद्नं बहसे नृप। अशास्त्रदृष्टमेतद्वि न प्रशंसन्ति पण्डिताः विस्फुलिङ्गा इव ह्येतान्दहन्ति किल मानवान् ।

समान वोझ न रक्खा, मनुष्यको ऐसा जित्त है कि पहिले ही शक्तिके अनु-सार ऐसा विचारकरे, जिसमें आगे कोई दुःख न सोगना पडे। तुमने मी पुत्रके प्रेममें आकर दुर्योधनके अनुकूल ही वर्षांव किया, फिर अब आपित पडने-से क्यों शोक करते हो ? (३२-३६)

जो केवल शहत देखकर वृक्षपर चढ जाता है और अपने गिरनेका मय नहीं करता, वह वृक्षपरसे गिरकर तुम्हारे ही समान आपाचि मोगता है। शोचसे धन, बल, लक्ष्मी और मोक्ष सिद्ध नहीं होती। जो आप ही आग बनाकर पीछे कपडेसे दकता है और पीछे जलनेसे योच करता है, वह पण्डित नहीं कहाता तुमने अपने पुत्रको सङ्ग लेकर वचन रूपी वायुसे घौककर और लोमरूपी घी डालकर युधिष्टिररूपी अग्निको चैतन्य कर दिया, उस वही हुई अग्निकी बाण-रूपी ज्वालामें तुम्हारे पुत्र पतङ्गके समान जल गये, अब तुम उनका क्या योच करते हो? अब जो तुम अपनी आंसुवांसे शरीरको मिगा रहे हो, यह व्यवहार शास्त्रेस विरुद्ध है, पण्डित केमा

18

प्रश्नाव २ | ११ जीववं । ११ जीववं । ११ जीववं । जहीं हि मन्युं बुद्ध्या वे पार्यात्मानमात्मना ॥ ४२ ॥ विदुरो सूय एवाह बुद्ध्युर्व परंतप ॥ ४४ ॥ हित श्रीमहामात्मे ज्ञावाहस्यां सहितायां वैयाध्यय स्वाचिक्ववं ज्ञावाहस्यां सहितायां वैयाध्यय स्वाचिक्ववं ज्ञावाहस्यां सहितायां वैयाध्यय स्वाचिक्ववं ज्ञावाहस्यां सहितायां वैयाध्यय ॥ १ ॥ वैवाजवीर्य विदुरो यदुवाच निवाध तत् ॥ १ ॥ विदुर खाच- उत्तिष्ठ राजन्मिक शेषे घारयात्मानमात्मना ॥ १ ॥ सर्वे क्षयात्मा निययाः पतानात्माः समुच्च्याः ॥ १ ॥ सर्वे क्षयात्मा निययोगात्मा मरणात्मं च जीवितम् ॥ १ ॥ सर्वे क्षयाः सर्वे विदे स्वाचात्मे श्रियते युच्यमानय जीवित । सर्वे विदे श्रियते अपने आत्माको ज्ञान्व कीविते । सर्वे विदे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे विदे सर्वे विदे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे विदे सर्वे विदे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे सर्वे सर्वे विदे सर्वे विदे सर्वे विदे सर्वे वि

कालं प्राप्य महाराज न कश्चिद्तिवर्तते 11 9 11 अभावादीनि भृतानि भावमध्यानि भारत । अभावनिधनान्येव तत्र का परिदेवना 11 8 11 न शोचन्मृतमन्वेति न शोचन्म्रियते नरः। एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमतुशोचसि 11 9 11 कालः कर्षति भूतानि सर्वाणि विविधान्यत । न कालस्य प्रियः कश्चित्र द्वेष्यः क्रुरुसत्तम 11611 यथा वायुस्तृणाग्राणि संवर्तयति सर्वज्ञाः। तथा कालवदां यान्ति भूतानि भरतर्षभ 118 11 एकसार्थप्रयातानां सर्वेषां तत्र गामिनाम्। यस्य कालः प्रयालग्रे तत्र का परिदेवना न चाप्येतान्हतान्युद्धे राजन् शोचितुमईसि । प्रमाणं यदि शास्त्राणि गतास्ते परमां गतिम्॥ ११॥ सर्वे खाध्यायवन्तो हि सर्वे च चरितवताः। सर्वे चाभिमुखाः क्षीणास्तत्र का परिदेवना ॥ १२॥

जीवा रहे, क्यों कि काल आनेसे सब ही मर जाते हैं। जगत्के पहिले ब्रह्म था, अन्तमें ब्रह्म रहेगा, केवल बीचमें श्रीर धारण करता है, इसलिये सब शरीर नष्ट होनेवाले हैं। इसमें रोनेसे क्या होगा ? शोच करनेसे मरा हुआ नहीं मिलता और शोचनेसे कोई मर भी नहीं जाता, लोक इस ही प्रकार स्थित है, इसलिये आप शोच करने योग्य नहीं हैं। (४-७)

हे कुरुकुलश्रेष्ठ! काल जगत्में सब प्रकारके जीवोंका नाश करता है, उसका कोई मी मित्र और शत्रुत नहीं है, जेसे वायु तिनकोंको इधर उधर उडाया कर-ता है वैसेही कालमी जीवोंको इधर उधर

घुमाया करता है, यद्यपि सब एक रीतिसे उत्पन्न होते हैं, परन्तु मरनेके समय जिस का काल पहिले आता है, वही मनुष्य पाहिले मरता है। इसलिये रोनेसे क्या होगा ? यदि आप शास्त्रोंको प्रमाण मानते हो, तो निश्रयही ये सब क्षत्री स्वर्गको गए इसलिये आप युद्धमें मरे हुए वीरों का शोक न कीजिये, वे सब क्षत्री वेद पाठी, वतवारी थे; और सब युद्धमें सन्मुख मरे उनके लिये रोनेसे क्या लाम है ? सन अज्ञानसे यहां आए थे, और अज्ञानसे नष्ट होगए, तुम उनके कोई नहीं हो और वे तुम्हारे कोई नहीं थे,

अदर्शनादापतिताः प्रनश्चादर्शनं गताः । नैते तब न तेषां त्वं तत्र का परिदेवना 11 83 11 हतोऽपि लभते खर्ग हत्वा च लभते यशः। उभयं नो बहुगुणं नास्ति निष्फलता रणे तेषां कामद्रघान्लोकानिन्द्रः सङ्कल्पायिष्यति । इन्द्रस्यातिथयो ह्येते भवन्ति भरतर्षभ 11 84 11 न यज्ञैदेक्षिणावाद्भिने तपोभिने विद्यया। खर्म यान्ति यथा मत्यी यथा शूरा रणे हताः॥ १६ ॥ शरीराश्रिषु शूराणां जुहुबुंस्ते शराहृतीः। हयमानान् शरांश्रीव सेहस्तेजिखनो मिथा एवं राजंस्तवाचक्षे खर्ग्यं पन्थानमुत्तमम्। न युद्धादधिकं किञ्चितक्षत्रियस्येह विचते क्षत्रियास्ते महात्मानः शूराः समितिशोभनाः। आशिषः परमाः प्राप्ता न शोच्याः सर्वे एव हि॥१९॥ आत्मानमात्मनाऽऽश्वास्य मा शुन्धः पुरुषर्षभ । नाच शोकाभिभूतस्त्वं कायमुत्स्रष्टुमईसि मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च।

को दोनों ही ओरसे सुख है, अर्थात युद्धमें मरे तो खर्ग और शत्रुवोंको मारा तो यश मिलता है, जो क्षत्रिय युद्धमें मरता है. वह इन्द्रका अतिथि बनता है. इन्द्र उनको इच्छानुसार सुख देनेवाले लोकोंको देते हैं, जिस प्रकार युद्धमें मरनेवाले अत्रियोंको खर्ग मिलता है, ऐसा दक्षिणायुक्त यज्ञ और अनेक तपसा करनेसे भी नहीं मिलता और ऐसा सुख अनेक विद्या पढनेसे भी नहीं मिलवा है। (८-१६)

हे राजन ! वीरोंने शरीररूपी अग्रिमें

# #8 #8 वाणरूपी आहुती छोडी और दसरोंकी आहुती सहीं, तब ये सब खर्म को चले गए, हमने यह खर्गका मार्ग आपसे कहा, वास्तवमें क्षत्रियोंका युद्धके समान कल्याः ण और कहीं नहीं है, वे सब सभाकी शोमा बढानेवाले, बीर महात्मा, क्षत्री उत्तम लोकोंको गए, इसलिये आप उनका क्रछ शोक न कीजिये। (१७-१९)

हे पुरुषसिंह ! आप अपने आत्मा-को ज्ञान्त कीजिए और शोकसे व्याक्कल होकर शरीर मत छोडिये, जगत्में सह-

संसारेष्वनुभूतानि कस्य ते कस्य वा वयम् शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च । दिवसे दिवसे मुहमाविशन्ति न पण्डितस् न कालस्य प्रियः कश्चित्र द्वेष्यः कुरुसत्तम । न मध्यस्थः कचित्कालः सर्वं कालः प्रकर्षति ॥ २३॥ कालः पचित भूतानि कालः संहरते प्रजाः। कालः सुप्तेषु जागतिं कालो हि दुरतिकमः 11 88 11 अनित्यं यौवनं रूपं जीवितं द्रव्यसञ्जयः। आरोग्यं प्रियसंवासो गृद्धयेदेषु न पण्डितः 11 34 11 न जानपदिकं दुःखमेकः शोचितुमईसि । अप्यभावेन युज्येत तचास्य न निवतंते ॥ २६ ॥ अशोचन्प्रतिकुर्वीत यदि पश्येत्पराक्रमम् । भैषज्यमेतहु।खस्य यदेतन्नानुचिन्तयेत् 11 29 11 चिन्लमानं हि न व्येति भूयश्चापि प्रवर्धते। अनिष्ठसम्प्रयोगाच विप्रयोगात्प्रयस्य च 11 26 11 मानुषा मानसैद्धीः सैर्देश्चन्ते चालपबुद्धयः।

चुके। तुम किसके हुंए और तुम्हारा कौन हुआ जगत्में शोकके सहस्रों और मयके सैकडों स्थान हैं, उनमें प्रतिदिन मुर्ख जाते हैं, पण्डित नहीं। (२०-२३)

हे कुरुकुलश्रेष्ठ ! कालका कोई मित्र,
शञ्ज और मध्यस्थ नहीं है, वह समान
रूपसे सबका नाश करता है, काल सब
जगतका नाश करता है, काल सब
जगतके सोनेपर भी जागता है, कालको
कोई भी नहीं नांध सक्ता, यौवन रूप,
जीवन द्रव्य, सुख और मित्रोंके सङ्ग
रहना सब श्रनित्य हैं, इसलिये पण्डित
हनकी इच्छा न करे; सब जगतके शो-

चको आप एकले अपने ऊपर न लीजि-ये। क्यों कि जो अभाव होनेवाला होता है, वह किसी के रोके रुकता न-हीं। (२३–२६)

यदि मनुष्य अपना पराक्रम देखे तो विना शोक किय ही शोचका बदला लेय। शोकरूपी दुःखकी यही औषधी है, क्यों कि शोक करनेसे शोक नष्ट नहीं होता, बरन उलटा बढता ही है। दुरा कर्म करने और बन्धुओंके वियोगसे जो शोक उत्पन्न होता है, उससे मूर्ख मनुष्योंका हृदय जला करता है, आप जो शोच करते हैं, इससे धर्म, अर्थ और

नाथीं न धर्मी न सुखं चदेतदनुशोचिस न च नापैति कार्यार्था त्रिवर्गाचैव हीयते। अन्यामन्यां धनावस्थां प्राप्य वैशेषिकीं नराः। असंत्रष्टाः प्रमुद्यान्ति सन्तोषं यान्ति पण्डिताः ॥३०॥ प्रज्ञया मानसं दुःखं हन्याच्छारीरमौषधैः। एतद्विज्ञानसामध्ये न वालै। समतामियात शयानं चानुशते हि तिष्ठन्तं चानुतिष्ठति । अनुधावति धावन्तं कर्म पूर्वकृतं नरम् 11 55 11 यस्यां यस्यामवस्थायां यत्करोति शुभाशुभम् । तस्यां तस्यामवस्थायां तत्फलं समुपाशृते 11 33 11 येन येन शरीरेण यद्यत्कर्म करोति यः। तेन तेन शरीरेण तत्फलं समुपाश्रुते 11 88 11 आत्मैव ह्यात्मनो वन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः। आत्मैव ह्यात्मनः साक्षी कृतस्यापकृतस्य च ॥ ३५ ॥ शुभेन कर्मणा सौख्यं दुःखं पापेन कर्मणा। कृतं भवति सर्वत्र नाकृतं विद्यते कचित् 11 38 11

नाथां न न च ना अन्यामः असंतुष्टा प्रज्ञया म एतद्विज्ञा चयानं न अनुधावा यस्यां या तस्यां तर येन येन तेन तेन आत्मेव । ज्ञात्मेव । साधाः च्याको प्राप्त होता है, ज्ञात्मेव स्थाता ज्ञाता है । (२७—३० मनुष्य मनका चुद्धिसं और औपधियोंसे दुःख द्रकरे । यह ज्ञान तुमसे कहा इसको । समझ सकता । पूर्वजन्मका वि कोई सुख भी सिद्ध नहीं होगा, इससे जगत्के कार्य सिद्ध नहीं होते और खर्ग भी नष्ट होजाता है। साधारण मनुष्य जब किसी छोटी अवस्थासे बडी अव-स्थाको प्राप्त होता है, अर्थात दरिद्रसे धनी होजाता है, तब उसे सन्तोप नहीं होता और अनेक प्रकारका उपद्रव करता है, परन्तु पण्डित क्रमसे सन्तुष्ट होता चला जाता है। (२७-३०)

मनुष्य मनका बुद्धिसे और शरीरका औषधियोंसे दु!ख दूर करे । हमने जो यह ज्ञान तुमसे कहा इसको मुर्ख नहीं समझ सकता । पूर्वजन्मका किया हुआ

कर्म सोतेके सङ्ग सोता है, बैठेके सङ्ग बैठता है, चलते हुयेके सङ्ग चलता है; अर्थात् किसी समय सङ्ग छोडता नहीं है। (३१-६२)

मनुष्य जिस जिस अवस्थामें जो जो श्चम या अञ्चम कर्म करता है, उसी उसी अवस्थामें उसका वैसा ही फल मोगता है, जिस जिस श्ररीरसे मनुष्य जो जो कर्म करता है, उसका उसका फल उसही शरीरसे भोगना पडता है, आत्मा ही आत्माका बन्धु है, आत्मा ही आत्माका शञ्ज है और आत्मा ही

विद्युक्त विद्य न हि ज्ञानविरुद्धेषु यह्नपायेषु कर्मसु । मूलघातिषु सज्जन्ते बुद्धिमन्तो भवद्विधाः ॥ ३७ ॥ [८१] इति श्रीमहाभारतेo स्त्रीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि एतराएविशोककरणे हितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ धृतराष्ट्र उवाच—सुभाषितैर्महाप्राज्ञ शोकोऽयं विगतो मम। भूय एव तु वाक्यानि श्रोतुमिच्छामि तत्वतः ॥ १ ॥ अनिष्टानां च संसर्गीदिष्टानां च विसर्जनात् । कथं हि मानसैर्द्धः से: प्रमुच्यन्ते तु पण्डिता: ॥ २ ॥ विदुर ख्वाच— यतो यतो मनो दुःखात्सुखाद्वा चिप्रमुच्यते । ततस्ततो नियम्पैतच्छान्ति विन्देत वै वृषः अशाश्वतमिदं सर्वं चिंत्यमानं नरपंभ। कदलीसन्निभो लोकः सारो छस्य न विद्यते यदा प्राज्ञाश्च मुढाश्च धनवन्तोऽध निर्धनाः। सर्वे पितृवनं प्राप्य स्वपन्ति विगतज्वराः निर्मांसैरस्थिभूयिष्ठैर्गात्रैः स्नायुनिवन्धिभः। किं विशेषं प्रपश्यंति तत्र तेषां परे जनाः 11 8 11

हुए कोई कर्मका फल नहीं भोगता, धर्मका सुख और पापका फल दु:ख है, आपके समान बुद्धिमान लोग मूलनाश करनेवाले अज्ञानसे उत्पन्न हुये पापकर्म नहीं करते हैं। (३३-३७) [८१]

खीपवेंमें द्वितीय अध्याय समास।

स्तीपवंभें तृतीय अध्याय।

महाराज धृतराष्ट्र वोले, हे महाबु-द्धिमान ! तुम्हारे उत्तम वचन सुननेसे मेरा शोक नष्ट होगया। अब कुछ और सुननेकी इच्छा है, इम तुमसे प्रश्न करते हैं, कि प्यारी वस्तुओंके छूटने और अनिष्ट वस्तुओंके मिलनेसे पण्डितोंके मनमें दुःख क्यों नहीं होता ? विदुर

मोले, हे राजन्! जिस जिस वस्तुसे मनमें सुख वा दुःख होय, पण्डित उनहींसे द्र रहे और अपने मनको वश्रमें रक्ले वो शान्ति प्राप्ति होती है। (१- ३)

हे प्ररुपसिंह! आप अत्यन्त विचार कर देखिये तो यह अनित्य जगत् केलेके वृक्षके समान सारहीन मिलेगा, देखी सब पण्डित, मूर्ख, धनी और निर्धन व्मशानमें जाकर एक समान सो रहते हैं, देखो उस समय मांसरहित इड़ी और नाडियोंसे वन्धे हुए शरीरोंमें मनुष्यका मेद देखता है, अर्थात् मरे हुए दरिद्र और धनीके शरीरमें कुछ

येन प्रत्यवगच्छेयुः कुल्रूपविशेषणम्।

कस्माद्रयोग्यमिच्छन्ति विप्रलम्धियो नराः॥७॥

ग्रहाणीव हि मर्लोनामाहुर्देहानि पण्डिताः।

कालेन विनियुज्यन्ते सत्वमेकं तु शाश्वतम् ॥८॥

यथा जीर्णमजीर्णं वा वस्त्रं त्यक्तवा तु पूरुषः।

अन्यद्रोचयते वस्त्रमेवं देहाः शरीरिणाम् ॥९॥

वैचित्रवीर्यं साध्यं हि दुःखं वा यदि वा सुखम्।

प्राप्तवन्तीह भूतानि स्तृत्तेनैव कर्मणा ॥१०॥

कर्मणा प्राप्यते स्तर्भः सुखं दुःखं च भारत।

ततो वहति तं भारमवशः स्वशोऽपि वा ॥१९॥

यथा च मृन्मयं भाण्डं चक्रारूढं विषयते।

किञ्चित्रिक्तियमाणं वा कृतमात्रमधापि वा ॥१२॥

छन्नं वाष्यवरोष्यन्तमवतीर्णमथापि वा।

आर्द्रं वाऽप्यथवा शुक्कं पच्यमानमथापि वा॥१३॥

उत्तार्थमाणमापाकादुद्वृतं चापि भारत।

आदिके विशेष भाव होते हैं, वह प्रारइस सदा ही सब कामों में सक्त रहती
हैं, तब मूर्छ मनुष्य तथा क्यों शोक
करते हैं। पण्डितोंने शरीरोंको घरके
समान कहा है, जैसे घर ट्रटनेसे घरका
खामी नहीं मर जाता; ऐसे ही शरीर नष्ट
होनेसे नित्य जीवका नाश नहीं होता।
जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र छोडकर नवीन
वस्त्र पहिननेकी इच्छा करता है, ऐसे
ही जीव एक शरीरको छोडकर दूसरे
शरीरमें चला जाता है। (४-९)

हे विचित्रवीर्यपुत्र ! मनुष्य विना कुछ कर्म किये फल नहीं भोगता। सुख अथवा दुःख अपने ही किये कर्मोंसे मिलता है, कमेंसे स्वर्ग, सुख, दु।ख, स्वतन्त्रता और परतन्त्रता प्राप्त होती है, जैसे कोई मिट्टीका बरतन चाक पर चढते ही फूट जाता है, कोई पकते और कोई बहुत दिनमें टूटता है, ऐसे ही किसी कमेंका फल उसी समय, किसीका कुछ दिनमें और किसीका फल बहुत दिनमें होता है, कोई कमें किसी कमेंसे ढक जाता है, कोई करते ही मात्र और कोई पीछे फल देता है। (१०-११)

हे राजन् ! मनुष्यों के श्रारों की ऐसी गति है, जैसे कोई फल होते ही, कोई सखा और कोई पकता पकता गिर पडता है, जैसे किसी अन्नकी हाण्डी

recessande e com e companda de companda de

अथवा परिभुज्जन्तमेवं देहाः शारीरिणाम् गर्भस्थो वा प्रसृतो वाऽप्यथवा दिवसान्तरः। अर्धमासगतो वाऽपि मासमात्रगतोऽपि वा ॥ १५॥ संवत्सरगतो वापि द्विसंवत्सर एव वा। यौवनस्थोऽथ मध्यस्थो वृद्धो वाऽपि विपद्यते ॥ १६ ॥ प्राक्कमभिस्तु भूतानि भवन्ति न भवन्ति च । एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमनुतप्यसे यथा तु सलिलं राजन् क्रीडार्थमनुसन्तरत्। उन्मज्जेच निमज्जेच किश्चित्सत्वं नराधिप 11 86 11 एवं संसारगहने उन्मज्जननिमज्जने । कर्मभोगेन वध्यन्ते क्विर्यन्ते चालपबुद्धयः ते तु प्राज्ञाः स्थिताः सत्वे संसारेऽसिन् हितैषिणः । समागमजा भतानां ते यान्ति परमां गतिम ॥ २० ॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिन्यां स्नीपर्वणि जलप्रदानिकवर्वणि विशोकहरणे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ [ १०१ ]

ष्टतराष्ट्र उनाच-कथं संसारगहनं विज्ञेयं वदतां वर । एतदिच्छाम्यहं श्रोतं तत्त्वमाख्याहि पृच्छतः

चुल्हेपर चढी, कोई उत्तरी, कोई उत्तरती, कोई आधी पकी और पूरी पककर फुटवी है, ऐसेही किसीका शरीर गर्भहीमें उत्पन्न होते ही, किसीका एक दिनमें. किसीका दूसरे दिन, किसीका एक पक्षमें, किसीका एक महीनेमें, किसीका एक वर्षमें, किसीका दो वर्षमें, किसीका जवानीमें, किसीका बुढापेमें नष्ट होजा-ता है, पहिले कमों के वशमें हो कर मनुष्य उत्पन्न होते हैं और मस्ते हैं, यह संसार अपने स्वभावसे ऐसे ही चलता है, जैसे कोई जन्तु खेलनेके लिये

पानीमें तैरता है, उसमें कभी हुनता है और कभी उछलता है, ऐसे ही इस गम्भीर जगत्में मुर्ख कर्मके वशमें होकर बन्धते हैं और दुःख भोगते हैं, परन्तु कल्याण चाहनेवाले पण्डित इन सब दु:खोंसे छूटकर मोक्ष पदको पाते है। (१२–२९) [१०१]

स्त्री पर्वमें तीन अध्याय समाप्त । खी पर्वमें चार अध्याय \

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे कहनेवाः लोंमें श्रेष्ठ विदुर ! इस संसाररूपी वन-

| 393333333333333333333333333333333333333           | 666 | 66 | €66 |
|---------------------------------------------------|-----|----|-----|
| जन्मप्रभृति भूतानां क्रिया सर्वोपलक्ष्यते।        |     |    |     |
| पूर्वमेवेह कलिले वसते किञ्चिदन्तरम्               | 11  | 9  | ll  |
| ततः स पृथ्रमेऽतीते मासे वासमकलपयत्।               |     |    |     |
| ततः सर्वोङ्गसम्पूर्णो गर्भो वै स तु जायते         | 11  | Ŗ  | 1)  |
| अमेध्यमध्ये वसति मांसशोणितलेपने।                  |     |    |     |
| ततस्तु वायुवेगेन ऊर्ध्वपादो ह्यघः शिराः           | 11  | ጸ  | 11  |
| योनिद्वारसुपागम्य वहुन् क्वेशान्स मृच्छति ।       |     |    |     |
| योनिसम्पीडनाचैव पूर्वकर्षभिरन्वितः                |     | Ģ  | ii  |
| तस्मान्मुक्तः स संसारादन्यान्पद्यत्युपद्रवान्     | į   |    |     |
| ग्रहास्तमनुगच्छन्ति सारमेया इवामिषम्              | 11  | ģ  | IJ  |
| ततः प्राप्तोत्तरे काले व्याधयश्चापि तं तथा।       |     |    |     |
| उपसर्पन्ति जीवन्तं वध्यमानं खकर्मभिः              | ij  | 9  | 11  |
| तं वद्धमिन्द्रियैः पाश्रैः सङ्गखादुभिराष्ट्रतम् । |     |    |     |
| व्यसनान्यपि वर्तन्ते विविधानि नराधिप              | I)  | ሪ  | ll  |
| वध्यमान्ख्र तैर्भूयो नैव तृप्तिसुपैति सः।         |     |    |     |
| तदा नावैति चैवायं प्रक्कर्वन्साध्वसाधु वा         | []  | 9  | lì  |

इस विषयको सुनना चाहते हैं तुम

विदूर उवाच विदूर उवाच विदूर वोले, कहो। (१) कहो। (१) कहो विदुर बोले, किर कमसे जाते हैं, कर का को उपरको हुआ वायुके वेग रहता है। (२ – वहां उसे य विदर बोले, इस जीवको जन्महीसे क्रिया करनी होती है, पहिले जब स्नीके गर्भमें वीर्थ और स्त्रीका रज मिलता है, तब ही जीव आकर उसमें वास करता है, फिर ऋमसे जब पांच महीने बीत जाते हैं, तब उस बालकके सब अङ्ग पूरे होजाते हैं, उस समय वह अपवित्र मांस और ऊपरको पैरके अनेक क्रेश सहता हुआ वायुके वेगसे योनीके द्वारमें टंगा रहता है। (२ --५)

जनमके कर्मोंसे अनेक कप्ट भागने पहते हैं, जब उस घोर आपित्तसे छटता है. तव संसारमें आकर अनेक उपद्रव करता और देखता है। उसके पास अनेक वन्धु चान्धव ऐसे आते हैं, जैसे मांसकी ओर क्रुत्ते । फिर जब कुछ समय बीत जाता है. तब पहिले कमेंसि अनेक रोग आकर अनेक पीडा देते हैं, जब वह मनुष्य इद्रियोंकी फांसीमें फसकर विषयोंके स्वादमें पडता है, तब ही उसे अनेक प्रकारके विषय आकर घेर लेते हैं, उन विषयोंसे बार बार दुःख पानेपर भी आपत्तिसे नहीं छटता.

तथैव परिरक्षन्ति ये ध्यानपरिनिष्ठिताः। अयं न बुद्धयते तावद्यमलोक्तमधागतम् 11 80 11 यमद्तैर्विकृष्यंश्च मृत्युं कालेन गच्छति । वारघीनस्य च यनमात्रामिष्टानिष्टं कुनं मुखे। भूय एवात्मनाऽऽत्मानं वध्यमानसुपेक्षते 11 48 11 अहो विनिकृतो लोको लोभेन च वशीकृतः। लोभकोधभयोन्मत्तो नात्मानमवब्रध्यते कुलीनत्वे च रमते दुष्कुलीनान्विकुतस्यत् । धनद्रेंण द्राश्च द्रिहान्परिकुत्सयन् 11 53 11 मृर्वानिति परानाह नात्मानं समवेक्षते। दोषान्श्रिपति चान्येषां नात्मानं शास्तुमिच्छति॥१४॥ यदा प्राज्ञाश्च मृर्खीश्च घनवन्तश्च निर्धनाः। क्रलीनाश्चाक्कलीनाश्च मानिनोऽधाप्यमानिनः॥ १५॥ सर्वे पितृवनं प्राप्ताः खपन्ति विगतत्वचः। निर्मासैरस्थिभूविष्ठैर्गात्रैः स्तायुनिवन्धनैः 11 88 11

भला काम करते करते आपित्योंसे तृप्त नहीं होता, दन महात्मा शास्त्र और ध्वानकी विधिसे अपने आत्माकी रक्षा करते हैं। परन्तु मृर्ख कुछ भी नहीं जान सक्ता, तन उसे यमतृत खींचकर मारडालते हैं और यमलोकको ले लाते हैं। तन सब इन्द्रिय नष्ट होनेपर भी जो पहिले पुण्य और पाप किया था, उसका फल देखकर भी अपने कल्याण-का कोई उपाय नहीं करता, अधीत अप-ने आप ही बन्धन काटनेका उपाय नहीं करता। (६-११)

देखों कैसे आवर्षकी बात है, कि सब जगत पागलके समान होकर लो- भक्ते वशमें पढ़ा है, देखों मनुष्य लोम, कोध और भयसे पागल होकर अपने आत्माका कुछ ज्ञान नहीं करता। "हम कुलीन हैं " इस अभिमानसे छोटे कुल-वालोंका और धनके अभिमानसे दिर-द्रियोंकी निन्दा करता है, में पण्डित हूं और सब मूर्ख हैं, यह जानकर दूसरोंके दोष देखाता है, परन्तु अपने दोषोंको द्र करनेकी इच्छा नहीं करता! (१२-१४)

देखो पण्डित, मूर्ख, धनी, निर्धन, कुलीन, अकुलीन, मानी और मानरहित सब ही रुमशानमें जाकर नक्ने होकर सो जाते हैं, किसीका मांस हड़ी और बसा भी नहीं बचती, उस समय दूसरे

विशेषं न प्रपश्पति तत्र तेषां परे जनाः।

पेन प्रवान छोषुः कुळरूपविशेषणम् ॥ १७॥

पदा सर्वे समं न्यस्ताः स्वपन्ति परं जनाः।

पेन प्रवान छोषुः कुळरूपविशेषणम् ॥ १७॥

पदा सर्वे समं न्यस्ताः स्वपन्ति परं जनाः।

कस्माद-योन्यमिच्छन्ति प्रज्ञानिक वृद्धपाः।

प्रवस्तं च परोक्षत्र यो निशम्य श्रुति त्विमाम्॥१८॥

अध्रवे जीवलोकेऽस्तिन् यो धर्ममनुपालपन्।

जन्मप्रमृति चतंत प्राप्तुपत्पान ॥ १९॥

एवं सर्व विदित्वा वे यस्तत्त्वमनुवर्तते।

स् प्रमोक्षपते सर्वोन्पन्यानो मनुजन्वर ॥ २०॥ [१२१]

इति श्रीमहाभारते शतवाहरूपां सहितायां विश्वविक्षयं क्षिपविण ज्ञव्यवानिकपर्वण विश्वोर्कण वृद्धया समनुपान्यते।

विदुर उवाच — पदिदं धर्मगहनं बुद्धया समनुपान्यते।

तदि विस्तरतः सर्व बुद्धिमागं प्रशास मे ॥ १॥

विदुर उवाच — शत्र ते वर्तिपत्पामि नमस्कृत्वा स्वयंस्वे।

पथा संसारगङ्गं वदन्ति परमर्पयः ॥ २ ॥

सश्चिम्महति कान्तारे वर्तमानो द्विजः। किल ।

सन्दर्भाको धनी और दरिद्रमें कुछ मी

मत्रव्यांको पत्री स्वयंत्र स्वयंत्र वाक्ष प्रवान वा व्यांत्र प्रवान वा व्यांत्र व्यांत स्वयं वाक्ष प्रवान स्वयं स्वयं प्रवान वा वा विश्वा पर्या स्वयं स्वयं वा वाक्ष प्रवान वा वा विश्वा पर्या स्वयं स्वयं स्वयं वा वा वर्णेन केषा सो खुद्धियानोंक वा वर्णेन किया सो खुद्धियानोंक वा वर्णेन का वर्णेन का वर्णेन करा है। ११ — १८ )

हे प्रथीनाथ । जो इस तत्वको जान
विद्धा पर्या करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस ज्ञाको पर्या करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस ज्ञाको पर्या करा है। द्रिप चेन करा है। ११ महाराज ! इस ज्ञाको पर्या करा है। द्रिप चेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त करा वर्णेन करा है। ११ महाराज ! इस व्याक्त कर

उस वायुसे भरे वनसे विषयोंसे व्याक्कर ब्राह्मण दूर न जा सका, फिर पर्वतोंके समान ऊंचे पांच विपीले सांपके सहित एक स्त्रीको देखा, फिर आकाशके समान इक्षोंसे पूरित वेत और बडे बडे तिन-कोंसे भरे एक तालावको देखा, त्राह्मण उस गहरे तलावमें शिर पडा. फिर एक तिनकेको पकडकर उस लवा भरे तलावमें अभिमान सहित इस प्रकार

\ \ \ \

स तथा लम्बते तत्र ह्यूर्ध्वपादो ह्यधः शिराः। अथ तत्रापि चान्योऽस्य भूयो जात उपद्रवः ॥ १३ ॥ क्रुपमध्ये महानागमपद्यत महाबलम् । क्रपवीनाहवेलायामपर्यत महागजम् 11 88 11 षड्वक्त्रं कृष्णशुक्कं च द्विषट्कपदचारिणम् । क्रमेण परिसर्पन्तं वहीवृक्षसमावृतम् ॥ १५॥ तस्य चापि प्रशाखासु वृक्षशाखावलम्बिनः। नानारूपा मधुकरा घोररूपा भयावहाः 11 25 11 आसते मधु संवृत्य पूर्वमेव निकेतजाः। भूयोभूयः समीहन्ते मधूनि भरतर्षभ 11 69 11 स्वादनीयानि भूतानां यैवीलो विप्रकृष्यते। तेषां मधूनां वहुधा धारा प्रस्नवते तदा 11 28 11 आलम्बमानः स पुमान् धारां पिबति सर्वेदा । न चास्य तृष्णा विरता पिबमानस्य सङ्कटे 11 88 11 अभीप्सति तदा निखमतृष्ठः स पुनः पुनः। न चास्य जीवित राजन्निर्वेदः समजायत 11 20 11 तत्रैव च मनुष्यस्य जीविताञ्चा प्रतिष्ठिता। क्रुडणाः श्वेताश्च तं वृक्षं कृष्टयन्ति च मुषिकाः ॥२१ ॥ व्यालैश्च वनदुर्गान्ते स्त्रिया च परमोग्रया ।

वह जिस डालमें लटकता था, वहां इसका शिर नीचेको पैर उत्परको थे, तव वहां उसने फिर एक उपद्रव देखा कि क्षेत्रके बीचमें सांप बैठा है और उत्पर एक मतवाला हाथी खडा है, उस हाथी के छ: सह, सफेद और काला रझ और चार पैर हैं, और कमसे उसहीकी ओर चला आता है, उस क्षेत्रके उत्पर जो वश्च था, उसकी डालियोंमें भयानक अनेक रूपवाली मखियोंका छाता लगा

है, उससे वार बार थोडा सहत गिरता
है, और उसीको खाकर वह मूर्ख ब्राह्मण
उस सङ्कटहीमें प्रसन्न होरहा है और
उसकी प्यास नहीं बुझती और उसकी
यही इच्छा होती है, कि मैं सदा यही
शहत पीता रहूं। कभी उससे निराध
नहीं होता, फिर उस ब्राह्मणने देखा कि
कई सफेद और कई काले मूसे जिस
लताको में पकडे रहा हूं, उसे काट रहे
हैं, परन्तु तौभी उस ब्राह्मणको जीनेकी

| <b>२</b> २                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                              | मक्षामारत ।                                                                                                    | . [१ जलप्रदानि                                                                                                                                                         |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------|------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
|                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                         | ह्हिट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्ट्                                                                       | ारेण च ॥ २२ ॥<br>पश्चमम् ॥<br>इ.यम् ॥ २३ ॥                                                                                                                             |
| 0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0<br>0                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | न चैव जीविताशायां निर्वेदसुप<br>इाभारते शतसाहरूयां संहितायां वेवासिक्यां स्त्रीप<br>विशोककाणे पंचमोऽध्यायः॥ ५॥ | ।गच्छति ॥२४॥[१४५]                                                                                                                                                      |
| व्याच्या । च्याच्या । च्याच्याच्या । च्याच्याच्याच्याच्याच्याच्याच्याच्याच्या | सुकृतं विन्दते येन परलोकेषु म<br>उच्यते यत्तु कान्तारं महासंसार                                                | तां वर ॥ १ ॥<br>धर्मसङ्कटे ।<br>स्महाभयात् ॥ २ ॥<br>धहे तदा ।<br>इरणेन हि ॥ ३ ॥<br>दाहृतम् ।<br>।।नवः ॥ ४ ॥                                                            |
| वह स्ती, वनके जन<br>वाला हाथी,<br>मूसे और मधुम<br>मूलकर मी वा<br>स्वादको लेने<br>न हुआ और :<br>स्वापनेंम<br>महाराज<br>महाराज<br>वालोंमें श्रेष्ठ हि                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | तु, नीचेवाला सांप, ऊपर                                                                                         | क्षण महाकष्टमं पडा कहो वह तैसे प्रसन्न और तृप्त होता था, ा कहां है, जहां ब्राह्मण धर्मके पडा था, वह उस दुःखसे कैसे सुझे उसके उत्पर बहुत कुपा है, तुम यह सुझसे सब वर्णन |

ये च ते कथिता व्याला व्याधयस्ते प्रकीतिंताः। या सा नारी बृहत्काया अध्यतिष्ठत तन्न वै तामाहुस्त जरां प्राज्ञा रूपवर्णविनाशिनीम् । यस्तत्र कूपौ नृपते स तु देहः शरीरिणाम् 11 9 11 यस्तत्र वसतेऽधस्तान्महाहिः काल एव सः। अन्तकः सर्वभूतानां देहिनां सर्वहार्यसौ कूपमध्ये च या जाता बळी यत्र स मानवः। प्रताने लम्बते लग्नो जीविताशा शरीरिणाम स यस्तु कूपवीनाहे तं वृक्षं परिसर्पति । षड्वक्त्रः कुञ्जरो राजन्स तु संवत्सरः स्मृतः ॥१०॥ मुखानि ऋतवो यासाः पादा द्वादशकीर्तिताः। ये तु बृक्षं निकृत्तन्ति मृषिकाः पत्रगास्तथा ॥ ११ ॥ ्रात्र्यहानि तु तान्याहुर्भृतानां परिचिन्तकाः। ये ते मधुकरास्तत्र कामास्ते परिकीर्तिताः चास्तु ता बहुशो धाराः स्रवन्ति मधुनिस्रवम्। तां स्तु कामरसान्वियायत्र मजान्ति मानवाः॥ १३॥ एवं संसारचकस्य परिवृत्तिं विदुर्वेधाः । येन संसारचक्रस्य पाद्यांदिछन्दन्ति वै बुधाः ॥ १४ ॥ [१५९]

इति श्रीसहाभारते शतसाहर-यां संहितायां वैद्यासिन्यां स्त्रीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि विशोककरणे पष्ठोऽध्याय: ॥ ६ ॥

कहे वे सब रोग हैं, बडी श्रारवाली जो स्त्री कही वह यौवन और रूप नाश करनेवाला बुढापा है, जो सांप कहा सौ श्रीरमें नीचे रहनेवाला सांप काल है, वह सब श्रीरधारियोंका नाश करता है, उस क्षेमें जो घास लटकती है, जिस को मतुष्य पकडकर लटक रहा है; वही अवस्था जीनेकी आशा है, जो इस बुक्षकी ओर लह मुख्वाला हाथी दौडा आता है, वही वर्ष है; ६ ऋतु उसके
मुख और चार महीने उसके पैर हैं और
जो मूसे उस इक्षको काट रहे हैं, पण्डित,
उन्हें दिन रात कहें हैं; इसमें जो सहत
की मक्खी है, वे अभिलाष हैं; जो सहत-की धार वहती है, वेही इच्छाओं के रस
हैं; मनुष्य उसीमें इचता और उछलता
है। पण्डितोंने इस प्रकार इस संसार
चक्रका वर्णन किया है, इसी प्रकार प-

而是是他的,我们的是一个,我们的是一个,我们的,我们的是一个,我们的一个,我们的一个,我们的一个,我们的一个,我们的一个,我们的一个,我们的一个,我们的一个,我们

अहोऽभिहितमारुयानं भवता तत्त्वदर्शिना। भूष एव तु में हर्ष: श्रुत्वा वागसृतं तव विदुर उवाच— श्रृणु भूयः प्रवक्ष्यामि मार्गस्यैतस्य विस्तरम् । यच्छ्रस्त्वा विष्रसुच्यन्ते संसारेभ्यो विचक्षणाः॥ २ ॥ यथा तु पुरुषो राजन्दीर्घमध्यानमास्थितः। कचित्कचिच्छ्रमाच्छ्रान्तः क्रुक्ते वासमेव वा एवं संसारपर्याये गर्भवासेषु भारत । क्कर्वन्ति दुर्वुधा वासं मुच्यन्ते तत्र पण्डिताः तस्राद्ध्वानमेवैतसाहुः शास्त्रविदो जनाः। यत्तु संसारगहनं वनमाहुर्मनीषिणः 11411 सोऽयं लोकसमावत्तीं मलीनां भरतर्षभ। चराणां स्थावराणां च न गृध्येत्तत्र पण्डितः शारीरा मानसाश्चैव मर्लांनां ये तु व्याधयः। प्रत्यक्षाश्च परोक्षाश्च ते व्यालाः कथिता वधैः क्विरयमानाश्च तैर्नित्यं वार्यमाणात्व भारत।

ण्डित लोग संसारकी फांसी काटकर सुख पाते हैं। (४---१४) [१५९]

(श्रीपर्वमें छ: अध्याय समाप्त ।

स्त्रीपवेंमें सात अध्याय।

महाराज धतराष्ट्र बोले, हे विदुर ! तुम बहुत पण्डित हो, तुमने जो मित्रके समान बचन कहे इनको सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ, अब तुम कुछ और वर्णन करो । (१)

विदुर बोले, हे राजन् ! अब हय इस ही विषयको फिर विस्तारसे वर्णन करते हैं, आप सुनिये इस ही तत्वको जानकर पाण्डित लोग संसारबन्धनसे छट जाते हैं, जैसे मजुष्य बहुत द्रके मार्गको चला जाता है और थक थक-कर कहीं कहीं बैठ जाता है। हे मारत! इसही प्रकार मनुष्य गर्भवासमें आकर मुखे फिर भी जसी बन्धनमें पडते हैं और पण्डित लोग उसी बन्धनको काट-कर सुख भोगते हैं, जिस संसारको वन-रूपसे वर्णन किया था; उसीको यहां पर मार्ग कहा हैं। (२-५)

हे मरतिसंह ! चर और अचर जी-वोंसे मरा हुआ यह लोक अनेक चक्रके समान है, पिण्डित इस संसारकी कभी भी इच्छा नहीं करते, इस जगत्में जिन मजुष्योंको संसारमें मन और शरीरके रोग होते हैं, वेही सांप हैं। हे भारत!

खकर्मभिर्महाच्या**ले**नीद्विजन्लल्प<u>नु</u>द्धयः 1161 अथापि तैर्विमुच्येत व्याधिभिः पुरुषो तृप । आवृणोत्येव तं पश्चाजरा रूपविनाशिनी 11911 शब्दरूपरसस्पर्शेर्गन्धेश्च विविधेरपि । मज्जमांसमहापङ्के निरालम्बे समन्ततः 11 80 11 संवत्सराश्च मासाश्च पक्षाहोरात्रसन्धयः। क्रमेणास्योपयुञ्जन्ति रूपमायुक्तथैव च 11 88 11 एते कालस्य निषयो नैतान् जानन्ति दुर्बुधाः। धात्राऽभिलिखितान्याहुः सर्वभूतानि कर्मणा ॥ १२॥ रथः शरीरं भूतानां सत्वमाहुस्तु सारथिम् । इन्द्रियाणि हयानाहुः कर्मबुद्धिस्तु रइमयः तेषां हयानां यो वेगं धावतामनुधावति। स त संसारचकेऽसिश्चक्रवत्परिवर्तते 11 88 11 यस्तान्संयमते बुद्धधा संयतो न निवर्तते । ये त संसारचकेऽसिश्रकवत्परिवर्तिते 11 24 11 भ्रममाणा न मुद्धान्ति संसारे न भ्रमन्ति ते।

उन सोपोंसे मनुष्य बार बार दुःख पा-ता है, और बार बार कमोंके वशमें होकर फिर वही कर्म करता है, उन्हें छोडनेकी इच्छा नहीं करता है, इसीसे मनुष्य सदा मूर्ख बना रहता है, यदि उनसे भी मनुष्य किसी प्रकार बच जांय, तो रूप और यौवन नाश करनेवाले बुढापेसे किसी प्रकार नहीं बच सक्ता। शब्द, रूप, रस, गन्ध और अनेक .प्रकारके स्पर्धेके वश्चमें होकर मांस और चर्बीके मयानक कीचडमें फसता है. वर्ष, महीने, पक्ष, रात्रि, दिन और सन्ध्या ही ऋमसे मन्द्रव्यको रूप

आयुको नष्ट करते हैं, यही समयका विचार है, मूर्ख लोग उसे नहीं जानते। निकान, पहिले ही सब सुख, दुःख अवस्था बुदापा और रोग लिख दिये हैं, घरीर रथ, मन सारथी, इन्द्रिय घोडे, दुद्धि और कर्म रास है, जो इस रथमें बैठनेवाला अर्थात् जीव उन दौडते हुए घोडोंके सङ्ग दौडता है, वह संसार चक्रमें चाकके समान घूमता है, जो पण्डित अपनी बुद्धिसे उन घोडोंको अपने वश्में रखकर घूमते हुए इस संसार चक्रमें आप स्थिर होता है, और किसी प्रकार मोहमें नहीं पडता वह उस

संसारे भ्रमतां राजन् दुःखमेतद्धि जायते 11 88 11 तसादस्य निवृत्त्वर्थं यत्नमेवाचरेद् वुधः। उपेक्षा नात्र कर्तव्या शतशाखः प्रवर्धते 11 89 11 यतेन्द्रियो नरो राजन् कोघलोभनिराकृतः। सन्तुष्टः सत्यवादी यः स ज्ञान्तिमधिगच्छति॥ १८॥ याम्यमाह रथं होनं मुह्यन्ते चेन दुर्बुधाः। स चैतत्प्राप्रयाद्वाजन्यत्त्वं प्राप्तो नराधिप अनुतर्षुलमेवैतद्दाःखं भवति मारिप। राज्यनाशं सुहन्नाशं सुतनाशं च भारत । साधुः परमदुःखानां दुःखभैषज्यमाचरेत 11 30 11 ज्ञानौषधमचाप्येह दूरपारं महोषधम्। छिन्चादुःखमहाव्याघि नरः संयतमानसः न विक्रमो न चाप्यथीं न मित्रं न सुहुज्जनः। तथोन्मोचयते दुःखाद्यथाऽऽत्मा स्थिरसंयमः ॥ २२॥ तसान्मैत्रं समाखाय जीलमापद्य भारत। दमस्यागोऽप्रमाद्श्य ते त्रयो ब्रह्मणो ह्याः ॥ २३ ॥

घूमनेसे बचता है। (५-१५)

मने हें वार्य में स्वाहत का का साम में स्वहत का साम में साम साम में हे राजन् ! संसारमें घूमनेवालोंको बार बार गही दुःख मोगने पडते हैं, इसलिये पण्डित इनको छोडनेहीका उपाय करे, इसके छोडनेमें विलम्ब नहीं करना चाहिये, क्यों कि विलम्ब करनेसे यह दक्ष बढता ही जाता है। हे राजन्! जो मनुष्य इन्द्रियोंको वशमें करके कोध और लोभको छोड देता है, सन्तोप करके सत्य घोलता है, वही शान्ती और सुख पाता है। (१५-१८)

हे महाराज ! यह शरीर यमराजका रथ है, इसमें वैठकर मुखें लोग पागल

होजाते हैं और उनहीं दु:खोंमें पडते हैं, जिनमें आप पडे हैं। पुत्र, राज्य और मित्रोंका नाश होना ये सब दुाख उन्हें ही होते हैं। जो बहुत लोभ करते हैं, इसलिये पण्डितको उचित है कि अपने दुःखोंकी ओपधिकरे, संसाररूपी रोगकी औषधि मनुष्य अपने मनको वशमें करके करे। इसकी औपधि ब्रह्म-ज्ञान ही है, मनुष्यको जैसे मनकी।स्थि-रता शक्ति उसको जैसे छुडा सक्ती है, तेसे वल, घन, मित्र और बन्धु, बान्धव नहीं छुडा सकते । इसिलिये आप अपने

श्वािलरिश्मसमायुक्तः स्थितो यो मानसे रथे।

त्यक्त्वा मृत्युभयं राजन्ब्रह्मलोकं स गच्छिति ॥ २४ ॥
अभयं सर्वभृतेभ्यो यो ददाित महीपते ।
स गच्छित परं स्थानं विष्णोः पदमनामयम् ॥ २५ ॥
न तत्क्रतुसहस्रेण नोपवास्थ्य नित्यशः ।
अभयस्य च दानेन यत्फलं पामुयान्तरः ॥ २६ ॥
न स्थात्मनः प्रियतरं किञ्चिद्भृतेषु निश्चितम् ।
अनिष्टं सर्वभृतानां मरणं नाम भारत ॥ २७ ॥
तस्थात्सवेषु भूतेषु द्या कार्यो विपश्चिता ।
नानामोहसमायुक्ता बुद्धिजालेन संवृताः ॥ २८ ॥
अस्क्ष्मदृष्ट्यो मन्दा भ्राम्यन्ते नत्र तत्र ह ।
सुस्क्ष्मदृष्ट्यो राजन्बजनित ब्रह्म शाश्वतम् ॥ २९ ॥ १८८०

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्यां खीववीण जलप्रदानिकवर्षीण विशोककरणे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७॥

वैश्वम्पायन उवाच-विदुरस्य तु तद्वाक्यं निशस्य क्रुरुसत्तमः।
पुत्रशोकाभिसन्तमः पपात सुवि सूर्विज्ञतः ॥१॥

इन्द्रियोंको वशमें रखना, त्याम और सावधानी ये तीनों ब्रह्मके घोडे हैं, जो मनुष्य इन घोडोंकी लगामको पकडकर शीलरूपी रथमें बैठकर चलता है, वह मृत्युके डरको पार होके ब्रह्मलोकको चला जाता है। (१९-२४)

हे पृथ्वीनाथ ! जो सब भनुष्योंको अभय दान करनेसे मनुष्यको फल भि-लता है, वह सहस्रों यज्ञ और व्रत करने से भी नहीं मिलता है। ऐसी कोई बात नहीं है, जो निश्चय करके मनुष्यकी हित कहीं जाय। परन्तु सब मनुष्योंके लिये मरना ही अहित है, इसलिये पण्डित मजुष्यको उचित है, कि सदा प्राणियोंपर कुपा करे, परन्तु मूर्ख मजुष्य अनेक प्रकारके मोह और बुद्धिके जालमें फंस-कर संसारमें घूमते हैं, परन्तु पण्डित संसारको छोडकर सनातन ब्रह्मको प्राप्त होते हैं। (२४-२९) [१८८]

36666666666666666666

स्त्रीपर्वमें सात अध्याय समाप्त स्त्रीपर्वमें बाठ अध्याय ।

श्रीवैश्वम्पायन म्रुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! कुरुकुलराज ष्ट्रतराष्ट्र विदु-रके ऐसे वचन सुन पुत्रोंके शोकसे न्या-कुल होकर मुच्छी खाकर पृथ्वीमें गिर पढे। राजाको पृथ्वीमें पढे और मुर्च्छि-

तं तथा पतितं भूमौ निःसंज्ञं प्रेक्ष्य वान्धवाः। क्रब्णद्वैपायनश्चैव क्षत्ता च विदुरस्तथा सञ्जयः सुहृदश्चान्ये द्वाःस्था ये चास्य संमताः। जलेन सुखदातिन तालवृन्तैश्च भारत 0 \$ 0 पस्पर्शेश्व करैगीत्रं वीज्यमानश्च यत्नतः। आश्वास्य तु चिरं कालं घृतराष्ट्रं तथागतम् 11811 अथ दीर्घस्य कालस्य लन्धसंज्ञा महीपतिः। विललाप चिरं कालं पुत्राधिभिरभिष्ठुतः 11911 धिगस्तु खलु मानुष्यं यानुषेषु परिग्रहे । यतो मूलानि दु:खानि सम्भवन्ति मुहुर्मुहु: 11 & 11 पुत्रनाद्येऽर्थनाद्ये च ज्ञातिसम्वन्धिनामथ । प्राप्यते सुमहद्दुः विपाग्निवतिमं विभो 11 0 11 येन दह्यन्ति गात्राणि येन प्रज्ञा विनरूयति । येनाभिभूतः पुरुषो मरणं वह मन्यते 11611 तदिदं व्यसनं प्राप्तं मया भाग्यविपर्ययात् । तस्यान्तं नाधिगच्छामि ऋते प्राणविमोक्षणात्॥ ९॥ तथैवाहं करिष्यामि अचैव द्विजसत्तम। इत्युक्त्वा तु महात्मानं पितरं ब्रह्मवित्तमम् ॥ १०॥

त देखकर सब बान्धव, श्रीकृष्णहेपा-यन वेदन्यास, विदुर, और सञ्जय आदि सब मन्त्री उनके ऊपर ठंडा जल छिड-कने लगे, बहुत देरमें बहुत यह करनेसे राजा धतराष्ट्र चैतन्य होकर पुत्रोंके शोकसे व्याकुल होकर बहुत देर तक रोते रहे। फिर कहने लगे कि, मनुष्य जन्मको धिकार है, विशेष कर गृहस्थों को; क्यों कि बार बार गृहस्थोंको दुःख ही मोगना होता है। देखो पुत्र, धन, जाति और संबन्धियोंका नाश होनेसे

दुःख और विपाप्तिके समान महादुःख मोगने पडते हैं। जिनको सहते सहते चरीर जरुने रुगते और बुद्धिका नाम होजाता है, उस 'समय जीनेसे मरना अच्छा समझते हैं। आज प्रारब्ध उरुटी होनेसे मुझे भी वैसाही भयानक दुःख हुना है। मुझे निश्चय होता है, कि, विना प्राण छोडे इस दुःखके पार नहीं जा सक्तंगा, हे बाह्यणश्रेष्ठ च्यास मुने! अप महात्या जेट बाननेवानोंगे श्रेष्ट

भू अ ता पुर धृतराष्ट्रोऽभवन्मूढः सक्तोकं परमं गतः। अभूच तृष्णीं राजाऽसौ ध्यायमानो महीपते ॥ ११ ॥ तस्य तद्भचनं श्रुत्वा कृष्णद्वैपायनः प्रभुः। पुत्रशोकाभिसन्तर्रं पुत्रं वचनमञ्जवीत् 11 88 11 व्यास उवाच — धृतराष्ट्र महावाहो यत्त्वां वक्ष्यामि तच्छ्रुण श्रुतवानसि मेधावी धर्मार्थक्कशलः प्रभो न तेऽस्त्यविदितं किञ्चिद्वोदितव्यं परन्तप । अनिखतां हि मत्यीनां विजानासि न संशयः॥ १४ ॥ अध्वे जीवलोके च स्थाने वा शाश्वते सति। जीविते मरणान्ते च कसाच्छोचिस भारत ॥ १५॥ प्रत्यक्षं तव राजेन्द्र वैरस्यास्य समुद्भवः। पुत्रं ते कारणं कृत्वा कालयोगेन कारितः अवर्यं भवितच्ये च क्ररूणां वैशसे नृप । कस्माच्छोचिस तान्द्राराम् गतान्परमिकां गतिम्॥१७॥ जानता च महाबाहो विदुरेण महात्मना ।

अपने पिता न्यासमुनीसे ऐसा कहकर राजा भृतराष्ट्र फिर शोकसे न्याकुल होकर अपने प्रत्रोंका ध्यान करते हुए मूर्खेंके समान चुप होकर वैठ ग-

राजा धृतराष्ट्रको पुत्रशोकसे व्या-कुल देखकर न्यासमुनि ऐसे वचन

श्रीव्यासमुनि बोले, हे महाराज महावाहु धृतराष्ट्र ! तुम वहे बुद्धिमान हो, तुमने अनेक कथा सुनी है, अब हम त्रमसे जो कहते हैं सो सुनो। हे शत्र-नाशन ! जगत्में ऐसी कोई वस्तु नहीं तम नहीं जानते। इसमें कुछ

सन्देह नहीं है, कि तुम जगत्की अनित्य-ताको जानते हो: हे भारत ! इस अनित्य जीव लोकमें जीव अपने समयतकही निवास करता है तव तुम जीने और मरनेका शोच क्यों करते हो ? हे राजन ! तुम्हारे देखते ही देखते समयके दुर्योग से यह वैर उत्पन्न होगया और दुर्योधन उसका कारण होगये। हे राजन ! जो बात अवस्य होनेवाली होती है, वह कमी नहीं रुक सक्ती है। कुरुकुलमें युद्ध होने ही वाला था, इसलिये तुम शोच क्यों करते हो, उस युद्धमें जो वीर रहे थे सो सब खर्मको गये। हे महाबाहो।

यतितं सर्वयत्नेन शमं प्रति जनेश्वर न च दैवकृतो मार्गः शक्यो भृतेन केनचित्। घटताऽपि चिरं कालं नियन्तुमिति मे मितः ॥ १९॥ देवतानां हि यत्कार्यं मया प्रत्यक्षतः श्रुतम् । तत्तेहं सम्प्रवक्ष्णामि यथा स्थैर्य भवेत्तव पुराऽहं त्वारितो यातः सभामैन्द्रीं जितक्रमः । अपर्यं तत्र च तदा समवेतान्दिवींकसः 11 38 11 नारदप्रमुखाश्चापि सर्वे देवपेयोऽनघ। तत्र चापि मया दृष्टा पृथिवी पृथिवीपते ॥ २२ ॥ कार्यार्थम्पसम्बाहा देवतानां समीपतः। उपगम्य तदा घात्री देवानाह समागतान् यत्कार्यं मम युष्माभिर्द्रिखणः सद्ने तदः। प्रतिज्ञातं महाभागास्तच्छीद्यं संविधीयताम् ॥ २४ ॥ तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा विष्णुलोंकनमस्कृतः। उवाच वाक्यं प्रहस्त् पृथिवीं देवसंसदि धृतराष्ट्स्य पुत्राणां यस्तु ज्येष्ठः दातस्य व । दुर्योधन इति ख्यातः स ते कार्य करिष्यति ॥ २३॥ तं च प्राप्य महीपालं कृतकृत्या भविष्यासि ।

रने शान्तिके लिये वहुत यत्न भी किये, परन्तु कोई मनुष्य वहुत दिनतक वहुत यत्न करनेपर भी प्रारन्धको नहीं रोक सक्ता, हमने जो देवतोंकी बात अपने कानसे सुनी थी सो तुमसे कहते हैं, उसके सुननेसे तुम कुछ सावधान होगे। (१३-२०)

पहिले में एकदिन बहुत शीघ्रतासे सावधान होकर इन्द्रकी समामें गया, वहां जाकर सब देवतोंको इकटे देखा। ह पापरहित ! वहां नारद आदि सव देव ऋषि भी बैठे थे, मेंने वहां प्रश्वीको भी देखा, पृथ्वी कुछ कामके िये देवतोंके यहां गई थी, उमने सम देवतोंसे कहा, तुम लोगोंने जो मेरे काम के लिये कहा था, और धमेंसे जो प्रति ज्ञा की थी, उसे सत्य करो । पृथ्वीके ऐसे वचन सुन देवतोंकी समामें बैठे हुए जगत वन्दित विष्णु हंसकर पृथ्वी से वोले, हे पृथ्वी ! जो ध्वराष्ट्रके सो बेटोंमें वडा दुर्योधन है, वह तुम्होर कामको सिद्ध करेगा, उस ही राजासे

तस्यार्थे पृथिवीपालाः कुरुक्षेत्रसमागताः अन्योन्यं घातियव्यन्ति हतैः शस्त्रैः प्रहारिणः। ततस्ते भविता देवि भारस्य युधि नाशनम् ॥ २८॥ गच्छ शीघं स्वकं स्थानं लोकान्धारय शोभने। य एष ते सतो राजन लोकसंहारकारणात् कलेरंशः समुत्पन्ना गान्धार्या जठरे चप । अमर्षी चपलश्चापि क्रोधनो दुष्पसाधनः दैवयोगात्समुत्पन्ना भ्रातरश्चास्य ताहशाः। शक्कानिमीतुलश्चैव कर्णश्च परमः सखा समुत्पना विनादाार्थं पृथिव्यां सहिता सुपाः। याद्यो जायते राजा ताद्योऽस्य जनो भवेत् ॥३२॥ अधर्मी धर्मतां याति स्वामी चेद्धार्मिको भवेत्। स्वामिनो गुणदोषाभ्यां भृत्याः स्युनीत्रसंशयः ॥३३॥ दुष्टं राजानमासाच गतास्ते तनया दप। एतमर्थं महाबाहो नारदो वेद तत्त्ववित् आत्मापराघात्पुत्रास्ते विनष्टाः पृथिवीपते ।

तुम्हारे सब काम सिद्ध होंगे; उसके लिये सब महाशक्षधारी राजा कुरुक्षेत्रमें इकट्टे होकर एक द्सरेको मारेंगे। हे देवि! उस ही युद्धमें तुम्हारा भार उतरेगा, इसलिये तुम अपने घरको जावो और सब जगत्को घारण करो। हे राजन्! तुम्हारा वेटा दुर्योधन जगत्का नाश करनेके लिये गान्धारीके पेटसे उत्पन्न हुआ था, वह कोधी, चश्रल, किसीकी बातको न माननेवाला और कलियुगका अवतार था, प्रारब्धसे उसके माई, उसका मामा शक्रनी और परमित्र कर्ण मी वैसे ही उत्पन्न होगये थे, जब

जैसा राजा होता है, तब उसके सब मजुष्य भी वैसे ही होजाते हैं। सब राजा जगत्के नाश करनेहीको इकड़े हुए थे। (२१-३२)

जब राजा धर्मात्मा होता है, तब अधर्मी भी धर्मात्मा होजाते हैं, इसमें कुछ सन्देह नहीं, कि खामीके दोष और गुण नौकरमें भी आजाते हैं। हे राजन् ! हे महाबाहो! दुष्ट राजा दुर्योधनके वशमें होकर तुम्हारे सब बेटे मारे गये। कुरुकुः ठका इस प्रकार नाश होगा, यह बात हमसे वेदका तत्व जाननेवाले नारद पहिले ही कह गये थे। हे प्रथ्वीनाथ!

**8993399** मा तान शोचस्व राजेन्द्र न हि शोकेऽस्ति कारणम्॥३५॥ न हि ते पाण्डवाः स्वल्पमपराध्यन्ति भारत। पुत्रास्तव दुरात्मानो यैरियं घातिता मही नारदेन च भद्रं ते पूर्वमेव न संशयः। युधिष्ठिरस्य समितौ राजसूये निवेदितम् 11 30 11 पाण्डवाः कीरवाः सर्वे समासाच परस्परम् । न भविष्यन्ति कौन्तेय यत्ते कृत्यं तदाचर नारदस्य वचः श्रुत्वा तदाऽशोचन्त पाण्डवाः। एवं ते सर्वमाख्यातं देवगुद्धं सनातनम् 11 \$9 11 कथं ते शोकनाशः स्थात्प्राणेषु च द्या प्रभो। स्तेह्य पाण्डुपुत्रेषु ज्ञात्वा देवकृतं विधिम् 11 80 11 एष चार्थी महावाही पूर्वमेव मया श्रुतः। कथिते। धर्मराजस्य राजस्ये कतृत्तमे 11 88 11 यतितं घर्मपुत्रेण मया गुह्ये निवेदिते। अविग्रहे कौरवाणां दैवं तु वलवत्तरम् 11 85 11 अनतिकमणीयो हि विधी राजन्कथञ्चन। कुतान्तस्य तु भूतेन स्थावरेण चरेण च 11 88 11 भवान्धर्मपरो यत्र बुद्धिश्रेष्ठश्च भारत।

तुम्हारे पुत्रोंकि ही देखते नाश हुआ, इसलिये तुम उनका शोक मत करो। क्यों कि शोकसे कुछ होता नहीं। (२३-३५)

हे भारत ! तुम्हारे दुष्ट पुत्रोंने इस जगतका नाश किया, अब भी पाण्डव तुम्हारा कुछ अपराध नहीं करेंगे। हे राजन् ! तुम्हारा क्रल्याण हो। युधिष्टिर-की राजस्य यज्ञमें नारदने ये सब पहिले ही कह दिया था, कि कौरव और पाण्डव परस्पर लडके मर जांयगे,

SECTION OF THE PROPERTY OF THE ली । नारदके ऐसे वचन सुन पाण्डवॉन उस ही समय बहुत ज्ञीच किया था, हमने ये सब गुप्त बात तुमसे कही। अब तुम ये सब प्रारव्धसे हुआ ऐसा विचार कर शोक छोड दो, सब पर कुपा करो। हे महावाहो ! हमने युधिष्टिरके राजस्रय यज्ञमें ये सब समाचार पहिले ही सुना था, जब मैंने यह गुप्त बात युधिष्ठिरसे कही थी, तमीसे उन्होंने शान्तिके लिये बहुत यत्न किया, परन्तु प्रारम्ध बडी ही

मुद्यते प्राणिनां ज्ञात्वा गतिं च।गतिमेव च त्वां तु शोकेन सन्तरं मुखमानं मुहर्मुहः। ज्ञात्वा युधिष्ठिरो राजा प्राणानपि परित्यजेत्।। ४५ ॥ क्रपालुर्नित्यको चीरस्तिर्यग्योनिगतेष्वपि। स कथं त्विय राजेन्द्र कृपां नैव करिष्यति मम चैव नियोगेन विघेश्चाप्यनिवर्तनात्। पाण्डवानां च कारुण्यात्प्राणान्धार्य भारत ॥ ४७ ॥ एवं ते वर्तमानस्य लोके कीर्तिर्भविष्यति। धर्मार्थेः सुमहांस्तात तप्तं स्याच तपश्चिरात पुत्रशोकसमुत्पन्नं हुताशं ज्वलितं यथा। प्रजाऽम्भसा महाभाग निर्वापय सदा सदा ॥ ४९ ॥ वैश्वम्पायन उवाच- तच्छ्रुत्वा तस्य वचनं व्यासस्यामिततेजसः। मुहुर्तं समनुध्यायन्धृतराष्ट्रोऽभ्यभाषत महता शोकजालेन प्रणुत्रोऽसि द्विजोत्तम। नात्मानमवबुध्यामि सुद्यमानो सुहुर्सुहुः इदं तु वचनं श्रुत्वा तव देव नियोगजम् । धारियद्यास्यंह प्राणान् घटिष्ये न तु शोचितुम्॥५२॥

स्थाते प्रा त्वां तु श श्रात्वा यु श्रुपाछुर्नि स कथं तः मम चैव पाण्डवान एवं ते वर्त धर्मार्थः स् पुत्रशोकस् पञ्जशोकस् स्वता, सव चर और अचर या जांयगे,तब तुम ऐसे धर्मात्मा श्रु को प्राणियोंकी गति और जानकर भी ऐसा शोच होता है बार बार शोकसे व्याञ्जल राजा युधिष्ठिर प्राणतक भी हैं। (३६—४५) हे राजेन्द्र! जो बीर राजा सदा पशुजोंपर भी कृपा करते तुम्हारे ऊपर कृपा क्यों न करें भारत! मेरे कहनेसे प्रारुघके स् पाण्डनोंकी कृपास तुम प्राणोंक सकता, सब चर और अचर यमलोकको जांयगे,तब तम ऐसे धर्मात्मा बुद्धिमानों को प्राणियोंकी गति और जानकर भी ऐसा शोच होता है। तुमकी बार बार शोकसे व्याक्रल देखकर राजा युधिष्ठिर प्राणतक भी दे सक्ते

हे राजेन्द्र ! जो बीर राजा युधिष्ठिर सदा पशुवाँपर भी कृपा करते हैं, सो तम्हारे ऊपर कृपा क्यों न करेंगे? है भारत ! मेरे कहनेसे प्रारब्धके वश और पाण्डवोंकी कृपास तुम प्राणोंको धारण

करो । हे तात ! ऐसा करनेसे जगतमें तुम्हारी बहुत कीर्ति होगी । धर्म, अर्थ और तपकी बहुत शृद्धि होगी, तुम इस आगके समान जलते हुए प्रत्रशोककी बुद्धिरूपी पानीसे बुझा देवो।(४६-४९)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महातेजस्वी व्यासके ऐसे बचन सुन राजा धृतः राष्ट्र थोडी देरतक शोच करके ऐसा बोले, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! मैं महाशोकजाल में फसा हूं, इसलिये मुझे कुछ ज्ञान नहीं होता, मैं बार बार मुर्च्छित होता

एतच्छ्रस्या तु वचनं व्यासः सत्यवतीसुतः। घृतराष्ट्रस्य राजेन्द्र तत्रैवान्तरधीयत ॥ ५३ ॥ [२४१]

इतिक्री सहामारते शतसाहरूपां संहितायां वैयासिक्यां स्रीपर्वति सलप्रदानिक खेनि

इत्राष्ट्रिको इक्त्ये रूटनोऽच्यायः ॥ ८ ॥

जनमेज्य उनाच- गते भगवति व्यासे घृतराष्ट्रो महीपतिः। किमचेष्टन विप्रपें तन्मे व्याख्यातुमहिस 11 ? 11 तथेव कौरवो राजा धर्मपुत्रो महामनाः। कुपप्रभृतयञ्जैव किसकुर्वत ते त्रयः। 1) ? 11 अवत्यान्नः भ्रुतं कर्म शापश्चान्योन्यकारितः । वृत्तान्तमुत्तरं वृहि यद्भाषत सञ्जयः 11 🗦 11

वैश्वम्यायन उवाच-हते दुर्योश्वने चैव हते सैन्ये च सर्वशः।

सञ्जयो विगतप्रज्ञो घृतराष्ट्रसुपास्यितः

11811

सञ्जय उदाव- आगम्य नानादेशेभ्यो नानाजनपदेश्वराः।

पितृलोकगता राजन् सर्वे तव सुतैः सह

11911

याच्यमानेन सनतं तव पुत्रेण भारत। घातिता पृथिदी सर्वा वैरस्यान्तं विधित्सना

11 5 11

में होक छोडने और मन सावधान करनेकः यह करंगा । राजा प्रतराष्ट्रके ऐंदे वचन सुन सत्यवतीके पुत्र व्यास मृनि नहीं अन्तर्घान होगये।(५०-५३) की पर्वेमें साठ संस्वाय समात ! [२४१]

प्तच्छ्य राजेन्ड प्तच्छ्य राजेन्ड प्रवच्छ्य राजेन्ड क्ष्म्य र्याच नाते भगवति व्य क्ष्म्य र्याच नाते प्रवच्छ्य स्त्र व्य प्रवच्छ्य स्त्र स् महाराज जनमेजय बोले, हे झाहाण-श्रेष्ठ वैशम्यायन मुने, जब वृत्तराष्ट्रके पास मगवान वेद्व्यास चले गये, तब उन्होंने क्या किया ? कुरुक्क श्रेष्ट महा-त्मा वर्मराज युविष्टिरने तथा वचे हुए कृपाचाये, अस्वत्यामा और कृतवर्माने

और श्रीकृष्णके परस्पर शापकी कथा सुनी इसके पञ्चात् सञ्जयने राजा प्रत-राष्ट्रसे क्या कहा सो कहिये।(१-३)

र्श्रावैशम्यायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब राजा दुर्योधन मारे गये और सब सेनाका नाश हो चका तव सञ्जय ग्रोकसे न्याकुल होकर राजा **ष्ट्रतराष्ट्रके पास आकर कहने** लगे।स**ञ्ज**य बोले, हे राजन् ! अनेक देशोंके राजा इरुश्चेत्रमें इक्टे होकर तुम्हारे पुत्रोंके सहित मारे गये। अनेक बार पाण्डवोंने पृथ्वी मांगी तो भी दुर्योधनने वैरका

. | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998 | 1998

पुत्राणामथ पौत्राणां पितृणां च महीपते। आनुपूर्व्येण सर्वेषां प्रेतकायाणि कारय 11 9 11 वैशम्पायन उवाच- तच्छ्रुरत्वा वचनं घोरं सञ्जयस्य महीपतिः। गतासुरिव निश्चेष्टो न्यपतत्पृथिवीतले 11611 तं शयानमुपागम्य पृथिव्यां पृथिवीपतिम् । विदुरः सर्वधर्मज्ञ इदं वचनमन्नवीत् 11911 उत्तिष्ठ राजन किं शेषे मा शुचो भरतर्षभ। एषा वै सर्वसत्वानां लोकेश्वरपरा गतिः 11 80 11 अभावादीनि भूतानि भावमध्यानि भारत। अभावनिधनान्धेव तत्र का परिदेवना 11 88 11 न शोचन् मृतमन्वेति न शोचन् स्रियते नरः। एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमनुशीचसि 11 88 11 अयुध्यमानो म्रियते युध्यमानस्तु जीवति । कालं प्राप्य महाराज न कश्चिदातिवर्तते 11 83 11 कालः कर्षति भूतानि सर्वाणि विविधानि च। न कालस्य पियः कश्चित्र द्वेष्यः कुरुसत्तम

नाश कराया, अब आप ऋमसे बेटे, पोते, पिता, बन्धु और बान्धवींके प्रेत-कर्भ कीजिये। (४-७)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सञ्जयके ऐसे मयानक वचन कुनते ही राजा ध्वराष्ट्र मरे हुए मनुष्यके समान मू॰ चिछत होकर पृथ्वीमें गिर पडे । राजा-को पृथ्वीमें पडा देख सब धर्म जानने वाले विदुर उनके पास आकर ऐसा वचन कहने लगे, हे भरतकुलश्रेष्ठ महाराज ! आप क्या पृथ्वीमें पडे हैं, उठिये और कुछ शोचन कीजिये। हे लोकनाथ ! जगत्के सब

यही दशा होती है, हे राजन ! जगत पहिले नहीं था, केवल बीचमें हो गया है आर अन्तमें भी नहीं रहेगा, इसलिय उसका शोच क्यों करना ? कोई रोनेसे मरे हुएके सङ्ग नहीं जाता, न रोनेसे मरा हुआ मिलता ही है, इसलिये आप शोच क्यों करते हैं ? (८-१२)

कमी ऐसा होता है, कि मनुष्य विना युद्ध किये ही मर जाता है और कभी युद्ध करनेसे भी बचता है परन्तु काल आनेसे कोई नहीं बचता, कालका कोई मित्र या शत्रु नहीं है, इसलिये वह सबहीका नाश करता है. जैसे

2626262666666666666666666666666666666

यथा वायुस्तृणात्राणि संवर्तयति सर्वतः। तथा कालवर्श यान्ति भृतानि भरतर्पभ 11 85 11 एकसार्थप्रयानानां सर्वेषां तत्र गामिनाम् । यस्य कालः प्रयाखग्रे तत्र का परिदेवना 11 88 11 यांश्चापि निहतान्युद्धे राजंरत्वमनुकाचिस । न शोच्या हि महात्मानः सर्वे ते त्रिदिवं गताः॥१७॥ न यज्ञैर्देक्षिणाचङ्किने तपोभिने विद्यया। तथा खर्गमुपायान्ति यथा ग्र्रास्तनुत्यजः 11 86 11 सर्वे वेदविदः शूराः सर्वे सुचरितव्रताः। सर्वे चाभिमुखाः क्षीणास्तत्र का परिदेवना 11 89 11 शरीराग्निषु शूराणां जुहुबुस्ते शराहुनीः। ह्यमानान शरांश्चेव सेहुस्त्तमपृस्पाः 1 00 1 एवं राजंस्तवाचक्षे खर्ग्यं पन्थानमुत्तमम् । न युद्धादिषकं किश्चित्क्षत्रियस्येह विद्यते 11 38 11 क्षत्रियास्ते महात्मानः श्रुराः समितिशोभनाः। आशिषं परमां माप्ता न शोच्याः सर्व एव हि॥ २२॥ आत्मनाऽऽत्मानमाश्वास्य मा शुचः पुरुपर्पेभ । नाच शोकाभिभृतस्त्वं कार्यमुत्स्रष्टुमईसि॥ २३॥ [२६४] इति श्रीमहामारते० वैशासिक्यां स्त्रापर्वणि जलप्रदानिकः।वीणि विदुरवाक्ये नवमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

यज्ञ, और अनेक तप करनेसे भी नई मिलती। उन वीरानि ग्रञ्जाकी ग्रीरस्पी अग्निमें बाणरूपी आहुती छोडी और तेज वाणों को सहा। हे राजन्! क्षत्रियोंके लिये युद्धसे वचका और कोई स्वर्गका मार्ग नहीं है। सब महात्मा वीर क्षत्री उत्तम स्वर्गको गये इसलिये उनका शोच नहीं करना चाहिये | हे मरत-सिंह! आप अपनी बुद्धिसे अपना घीरज वांधिये, क्यों कि शोचसे व्याकुल होकर

ebecepentandereceptent errobereceptenterberekenterberekenterberekenterberekenterberekenterberekenterberekenter

वैशम्पायन उवाच-विदुरस्य तु तद्वाक्यं श्रुत्वा तु पुरुषषँभः। युज्यतां यानमित्युक्त्वा पुनर्वचनमन्नवीत् **धतराष्ट्र उवाच—शीघमानय गान्धारी सर्वाश्च भरतिस्रयः**। वर्षु क्रुन्तीमुपादाय याश्चान्यास्तत्र योषितः 11 7 11 एवमुक्त्वा स धर्मात्मा विदुरं धर्मवित्तमम्। शोकविप्रहतज्ञानो यानमेवान्वपचत 11 3 11 गान्धारी पुत्रशोकार्ता भर्तुर्वचननोदिता। सह कुन्ला यतो राजा सह स्त्रीभिरुपाद्रवत् ताः समासाच राजानं भृशं शोकसमन्विताः। आमंत्र्यान्योन्यमीयुः सा भृशमुचुकुशुस्ततः ताः समाश्वासयत्क्षता ताभ्यश्चार्ततरः खयम्। अश्रुकण्ठीः समारोप्य ततोऽसौ निर्ययौ पुरात्॥ ६॥ ततः प्रणादः सञ्ज्ञे सर्वेषु कुरुवेरमसु । आक्रमारं पुरं सर्वमभवच्छोककार्दीतम् 11 9 11 अदृष्टपूर्वा या नार्यः पुरा देवगणैरपि । पृथाजनेन दृश्यन्ते तास्तदा निहतेश्वराः 1160

आप कुछ न कर सर्वेगे । (१३-२३) स्त्रीपर्वमें नौ अध्याय समाप्त । [२६४]

स्वीपर्वमें दस अध्याय ।

श्रीवैशम्पायन म्रानि बोले, हे राजन जनमेजय ! विदुरके ऐसे वचन सुन राजा धृतराष्ट्र वाहन तैयार करनेकी आज्ञा देकर फिर ऐसा बोले, गान्धारी और कुन्तीके सहित कुरुकुलकी सब स्त्री और जितनी स्त्रियां वहां हैं उन सबको हमारे पास हे आओ, ऐसा कहकर राजा धृतराष्ट्र शोकसे व्याक्कल होकर सूर्विके समान उठे और विदुरका हाथ पकडके

आज्ञासे पुत्रोंके शोकसे न्याकुल गान्धारी, क्रन्ती आदि सब स्त्रियोंके राजसभामें आई, वे सब बोक्से व्याकुल ही एक दूसरीको पूछती हुई बहुत ऊंचे खरसे रोने लगी, तब विदुर उन्हें समझाने लगे। (१-५)

परन्तु समझाते समझाते आप उनसे भी अधिक शोकसे न्याकल होगए। उन रोती हुई सियोंको वाहनमें विठला कर बाहरको ले चले, तब सब राजमहलेंमिं महा हाहाकार शब्द होने लगा, बालक-से बुढे तक सब शोकसे व्याकुल होगये।

प्रकीर्य केशान् सुशुभान् भूषणान्यवसुच्य च। एकवस्त्रधरा नार्यः परिपेतुरनाथवत् 11911 श्वेतपर्वतस्वेभयो गृहेभयस्तास्त्वपाक्रमत्। गुहाभ्य इव शैलानां पृषत्यो हतयूथपाः तान्यदीर्णीन नारीणां तदा वृन्दान्यनेकदाः । शोकार्तान्यद्रवन् राजन्किशोरीणामिवाङ्गने ॥ ११ ॥ प्रमुख बाह्न कोशन्यः पुत्रान् भ्रातृन्धितृनपि । दर्शयन्तीव ता ह सा युगान्ते लोकसंक्षयम् ॥ १२ ॥ विलपन्यो रुदन्यश्च धावमानास्ततस्ततः। शोकेनोपहतज्ञानाः कर्तव्यं न प्रज्ञिरे बीडां जग्मुः पुरा याः सा सखीनामपि योषितः। ता एकवस्त्रा निर्लेखाः श्वश्रृणां पुरतोऽभवन् ॥ १४॥ परस्परं सुसूक्ष्मेषु शोकेष्वाभ्वासयंस्तदा । ता शोकविद्वला राजन्नवैक्षन्त परस्परम् ताभिः परिवृतो राजा रुदताभिः सहस्रदाः। निर्ययौ नगराद्दीनस्तूर्णमायोधनं प्रति 11 88 11

देखा था, वेही स्वामियोंके मरनेसे साधारण मनुष्यके आगे कुरुक्षेत्रको चलीं, किसीने अपने बाल खोल दिये और कोई अपने गहने उतार उतार कर फेंकने लगीं, सब स्त्री एक एक घोती पहिन-कर अनाथके समान घरसे निकली जैसे हाथियोंके न रहनेसे उनकी हथनी रोती हुई गुफाओंसे निकलती हैं, ऐसे ही सब स्त्री सफोदं पर्वतके ।शिखरके समान घरोंसे निकली।(६-९)

् उस समय रोवी हुई स्नियोंने झुण्ड चारों ओर नगरमें दीखते थे, कोई दूसरी का हाथ पकडकर भाई, बेटे.

आदिको रोती थी। उस समय ऐसा जान पडता था कि जगत्में प्रलय होगया। कोई रोवी थी, कोई चिछावी थी, कोई ज्ञानज्ञत्य होकर इधर उधरको दौडती थी। उस समय उन्हें यह नहीं जान पडता था कि हमें क्या करना चाहिये, जो स्त्री पहिले सिखयोंसे भी लिखत होती थीं, सो निर्लंज होकर एक घोती पहिनकर श्रश्नोंके आगे घूमने लगी, तव एक द्सरीको समझाने लगी और एक दुसरीको देखने लगी।(१०-१५)

राजा उन सहस्रों रोती हुई स्त्रियोंको

<del>}}}}</del>

शिल्पिनो विणिजो वैश्याः सर्वकमींपजीविनः ।
ते पार्थिवं पुरस्कृत्य निर्ययुर्नेगराद्वहिः ॥ १७ ॥
तासां विकोशमानानामार्तानां कुरुसंक्षये ।
मादुरासीन्महान् शन्दो न्यथयन् सुवनान्युत॥ १८ ॥
युगान्तकाले संमाप्ते भूतानां दश्चतामिव।
अभावः स्यादयं प्राप्त इति भूतानि मेनिरे ॥ १९ ॥
भृशसुद्विग्रमनसस्ते पौराः कुरुसंक्षये ।
माकोशन्त महाराज खनुरक्तास्तदा भृशम् ॥ २० ॥[१८४]

. इति श्रीमहाभारते शतसाहस्त्यां सिहितायां वैज्यासिक्यां स्नीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि धतराष्ट्रिनिर्गमने दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

वैशम्पायन उवाच-क्रोशमात्रं ततो गत्वा दहशुस्तान्महारथान् ।
शारद्वतं कृपं द्रौणि कृतवमाणमेव च ॥१॥
ते तु हृद्वेच राजानं प्रज्ञाचक्षुषमीश्वरम् ।
अश्रुकण्ठा विनिःश्वस्य रुद्दन्तमिद्मव्रुवन् ॥२॥
पुत्रस्तव महाराज कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ।
गतः सानुचरो राजन् शक्लोकं महीपते ॥३॥
दुर्योधनवलान्सुक्ता वयमेव त्रयो रथाः ।

शीघ्रता सहित कुरुक्षेत्रको चले, उनके
पीछे शिल्प बनानेवाले बनिये और सब
जीविकाके लोग चले, इस प्रकार महाराज सबको सङ्ग लेकर नगरसे बाहर
निकले, उस समय कुरुकुलका नाश होनेके पश्चात् उन स्त्रियोंके रोनेका घोर
शब्द उटा, उससे सब जगत् कांपने लगा
उस समय ऐसा जान पडता था मानों
सब जगत् भसा हो गया, सब लोग जानते
थे कि जब सब जगत्को नाश हो चुका
उस समय राजमक्त सब नगरवासी
शोकसे अल्यन्त ही व्याकुल थे। (१६-२०)

स्त्रीपर्वमें दस अध्याय समाप्त । [२८४] स्त्रीपर्वमें ग्यारह अध्याय ।

श्रीवैशम्पायन स्निन बोले, हे राजन् जनमेजय! जब महाराज एतराष्ट्र नगरसे निकलके एक कोस पहुंचे तब उन्हें
कृपाचार्य, अञ्चत्थामा और कृतवमी
मिले, अन्धे जगत्के स्वामी राजा एतः
राष्ट्रको देखके ये वीर रोकर कहने लगे,
हे महाराज! आपके पुत्र महा घोर कर्म
करके अपने सब सहायकोंके सहित
इन्द्रलोकको चले गये। हे महाराज दुर्योधनकी सेनासे केवल हम ही तीन वीर

सर्वप्रन्यत्परिक्षीणं सैन्यं ते भरतर्षभ 11811 इत्येवसुक्त्वा राजानं कृपः शारद्वतस्ततः । गान्धारी पुत्रशोकातीमिदं वचनमत्रवीत् 11 4 11 अभीता युध्यमानास्ते व्रन्तः राचुगणान्बहृत्। वीरकमीणि क्रवीणाः प्रत्रास्ते निधनं गताः 11 4 11 धवं संप्राप्य लोकांस्ते निर्मलान् वास्त्रनिर्जितान् । भास्वरं देहमास्थाय विहरन्समरा इव 11011 न हि कश्चिद्धि ज्ञुराणां युद्ध्यमानः पराङ्मुखः। शक्तेण निधनं प्राप्तो न च∯तश्चित्कृताञ्जलिः एवं तां क्षत्रियस्याहुः पुराणाः परमां गतिम्। शस्त्रेण निधनं संख्ये तन्न शोचित्रमईसि 11911 न चापि शस्त्रवस्तेषामृद्धयन्ते राज्ञि पाण्डवाः । शृणु यत्कृतमस्माभिरश्वत्थामपुरोगमैः 11 09 11 अधर्मेण हतं श्रुत्वा भीमसेनेन ते सुतम्। सुप्तं शिविरमासाच पाण्डूनां कदनं कृतम् 11 88 11 पश्चाला निहताः सर्वे घृष्टगुम्नपुरोगमाः। द्रपदस्यात्मजाश्चेव द्रौपदेयाश्च पातिताः 11 22 11

वचे हैं और आपकी सब सेना भर गई, राजा धतराष्ट्रसे ऐसा कहकर पुत्रशोकसे व्याकुल गान्धारीसे क्रपाचार्य ऐसे बोले। हे गान्धारी, तुम्हारे सब पुत्र निर्भय होकर शत्रुवोंका नाश करके अपनी चीर कीवींका जगत्में स्थापन करके युद्धमें मारे गये। (१-६)

अपने निर्मेल देह धारण करके अपने ग्रह्मोंके बलसे उत्तम लोकमें देवतोंके समान विहार करते हैं, उन वीरोंमें ऐसा कोई न था, जो युद्धसे फिरा हो। सब अस्नोंसे मारे गये; किसीने शत्रुऑ़ के आमे हाथ नहीं जोडे अथीत् कोई दीन होकर नहीं मरा, उन महात्माने क्षत्रिः योंके लिये यही गति कही है, शक्से मरना ही परम गति है, इसालिये तुम इनका शोच मत करो। (७-९)

हे रानी, तुम्हारे पुत्रोंके शश्च पाण्डवीं-की भी दृद्धि नहीं होगी; देखो अद्दव-त्थामाकी सहायतासे हम लोगोंने जो कुछ किया है सो सुनो; जब हम लोगों-ने सुना कि तुम्हारे पुत्र राजा दुर्यी-धनको भीमसेनने अधमेसे मारा तब हम लोगोंने डेरोंमें जाकर सबको मार-

तथा विद्यसनं कृत्वा पुत्रराष्ट्रगणस्य ते । प्राद्रवाम रणे स्थातं न हि शक्ष्यामहे त्रयः ते हि शूरा महेष्वासाः क्षिप्रमेष्यन्ति पाण्डवाः। असर्षवशमापन्ना वैरं प्रतिजिहीर्षवः કા દેશ 🛭 ते हतानात्मजान् श्रुत्वा प्रमत्ताः पुरुषर्षभाः। निरीक्षन्तः पदं शुराः क्षिप्रमेव यशास्त्रिनि तेषां तु कद्नं कृत्वा संस्थातुं नोत्सहामहे। अनुजानीहि नो राज्ञि मा च शोके मनः कृथाः॥१६॥ राजंस्त्वमनुजानीहि धैर्यमातिष्ठ चोत्तमम्। दिष्टान्तं पर्य चापि त्वं क्षात्रं धर्मं च केवलम् ॥१७॥ इत्येवसुक्तवा राजानं कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम्। 11 86 11 कृपश्च कृतवमी च द्रोणपुत्रश्च भारत अवेक्षमाणा राजानं धृतराष्ट्रं मनीविणम्। गङ्गामतु महाराज तूर्णमश्वानचोद्यन् 11 89 11 अपकम्य तु ते राजन् सर्वे एव महारथाः। आमंत्र्यान्योन्यमुद्धिग्रास्त्रिधा ते प्रययुस्तदा

डाला । सोते हुए धृष्टसुम्न आदि सब पाञ्चाल हुपदके सन वेटे और द्रौपदीके सब बेटे उसी रातमें मारे गये, इस प्रकार हमने तुम्हारे पुत्रोंके शत्रुका नाश कर दिया। अब हम केवल तीनहीं शेप हैं, इसलिये युद्धमें नहीं खडे हो सकते, अव हम यहांसे भागते हैं, क्यों कि वीर पाण्डव क्रोधसे व्याकुल होकर इधरही-को बहुत शीघ्र आवेंगे, क्यों कि वे लोग वैरको समाप्त करना चाहते हैं; वह यशस्वी लोग हमारे पैरोंके चिन्ह देखते देखते हमारे पीछे आवेंगे और हमने उनका सर्वेनाश कर दिया है.

हम यहां खड़े नहीं हो सक्ते हैं। हे रानी! अब इमको जानेकी आज्ञा दो, इम यहां खडे नहीं हो सकते और तुम भी कुछ शोक मत करो । (१०-१६)

हे राजन ! आप भी कुछ शोक मत की जिये केवल धैर्य धारण की जिये और देखिय कि क्षात्रधर्म केवल मरणही है। ऐसा कहकर उन तीनोंने राजा-को प्रदक्षिणा करके अक्वत्थामा, कृषा-चार्य और कृतवर्मा महाबुद्धिमान राजा धृतराष्ट्रको देखते हुए अपने घोडोंको शीव्र हांकते हुए गङ्गाकी ओरको भागे।

जगाम हास्तिनपुरं कृपः शारद्वतस्तदा ।
स्वमेव राष्ट्रं हार्दिक्यो द्रौणिव्यासाश्रमं पर्या॥ २१ ॥
एवं ते प्रययुर्वीरा वीक्षमाणाः परस्परम् ।
भवाताः पाण्डुपुत्राणामागस्कृत्वा महात्मनाम् ॥२२॥
समेख वीरा राजानं तदा त्वनुदिते रवी ।
विप्रजग्मुर्भहात्मानो यथेच्छकमरिन्द्माः ॥ २३ ॥
समासाचाथ वै द्रौणिं पाण्डुपुत्रा महारथाः ।
व्यजयंस्ते रणे राजन् विकस्य तदनन्तरम् ॥ २४ ॥ [३०८]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां चैयासिक्यां खोपचीण जलप्रदानिकपर्वणि कृपद्गाणिभोजदर्शने एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

वैश्वम्पायन उवाच-हतेषु सर्वसैन्येषु धर्मराजो युधिष्ठिरः ।

शुश्रुवे पितरं वृद्धं निर्योन्तं गजसाह्वयात् ॥१॥
सोऽभ्ययात्पुत्रज्ञोकार्तः पुत्रज्ञोकपरिष्ठतम् ।

शोचमानं महाराज श्रातृभिः सहितस्तदा ॥२॥
अन्वीयमानो वीरेण दाशाहेंण महात्मना ।

युयुधानेन च तथा तथैव च युयुत्सुना ॥३॥

विश्व समेव समेव समेव विश्व के तो का प्राप्त के विश्व करने लगे किर तीनों सुप्रुध के तो अर तीनों सुप्रुध के तो अर वात करने लगे किर तीनों सुप्रुध करने लगे किर उतरे और घरडाकर एक दूसरेसे सम्मती करने लगे फिर तीनों एक दसरेसे पूछकर तीन ओरको चले गये, कृपाचार्य हित्तनापुरको, हृदीकपुत्र कृतवमी अपने देश अर्थात् द्वारकाको और द्रोणाचार्यके पुत्र अश्वत्थामा व्यासम्भनीके आश्रमको चले गये, इस प्रकार ये तीनों वीर महात्मा पाण्डवोंके वैरसे व्याकुल होकर एक दूसरेकी ओर देखते हुए तीन ओर को चले गए, जिस समय ये तीनों वीर राजा धृतराष्ट्रसे मिले थे, उस समय सर्ये अस्त होना चाहते थे। जब अञ्च त्थामा च्यासम्बनिके आश्रम पर

तव ही महारथ पाण्डवोंने अपने बलसे उनको जीत लिया। स्त्रीपर्वमें ग्यारह भध्याय समास। [३०८] स्त्रीपर्वमें बारह अध्याय।

श्रीवैशम्पायन सुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब सब सेना मारी गई तब अश्वत्थामाको जीतके धर्मराज युधिष्ठिरने सुना कि हमारे बूढे पिता हस्तिनापुरसे चले जाते हैं, तब पुत्र-शोकसे न्याकुल राजा युधिष्ठिर, पुत्र शोकसे न्याकुल राजा धृतराष्ट्रके पास-चले, उसके सङ्ग महावीर श्रीकृष्ण साल्यकि और युयुत्सु भी चले, उनके पीले

**26666933333333333333333** 

तमन्वगात्सुदुःखानी द्रौपदी शोककर्शिता। सह पाश्रालयोषिद्धियीस्तत्रासन्समागताः 11811 स गङ्गामनु धृन्दानि स्त्रीणां भरतसत्तम । कुररीणामिवातीनां कोशन्तीनां ददर्श ह 11 4 11 ताभिः परिवृतो राजा कोशन्तीभिः सहस्रशः। अर्ध्ववाहुभिरार्ताभी सदतीभीः प्रियाप्रियैः क नु धमेजता राज्ञः क नु साऽचानृशंसता। यचावधीत्पितृन् भ्रातृन् गुरुपुत्रान् सखीनपि घातियत्वा क्यं द्रोणं भीष्मं चापि पितामहम्। मनस्तेऽभूनमहावाहो हत्वा चापि जयद्रथम् किं नु राज्येन ते कार्यं पितृन् भ्रातृनपद्यतः। अभिमन्युं च दुर्धर्षं द्रौपदेयांश्च भारत अतील ता महावाहुः क्रोशन्तीः कुररीरिव। ववन्दे पितरं ज्येष्ठं धर्मराजो युधिष्ठिरः ततोऽभिवाद्य पितरं धर्मेणामित्रकर्षणः। न्यवेदयन्त नामानि पाण्डवास्तेऽपि सर्वशः ॥ ११ ॥

वदां आई हुई पात्रालदेशके क्षत्रियोंकी स्त्रियोंके सङ्घ शोकसे व्याकुल द्रौपदी भी चली। (१-४)

राजा युधिष्ठिरने क्रररीयोंके समान रीती हुई स्त्रियोंके झुण्डोंको गङ्गाकी और जाते हुए देखा, वे सब ऊपरको हाथ उठाये, राजा युधिष्ठिरकी निन्दा करती, अनेक झुठे और कठोर वचन कहती हुई गङ्गाको जाती थीं। उस समय वे सब स्त्रियाँ ही कहती थी कि, हे महाराज युधिष्ठिर । आपने अपने पिता, माई, गुरुपुत्र और मित्रोंको मारडाला

चली गई, आपने द्रोणाचार्य, भीष्म पितामइ और जयद्रथको मारकर राज लेनेकी कैसी इच्छा करी ? (५—८)

| Particular of the particula हे महाराज! महावलवान् अभिमन्यु और द्रौपदीके पांचो पुत्र आदि बन्धु और बान्धवोंका नाश करके अब राज्य लेके क्या सुख भोगियेगा ? महाराज युधिष्ठिर ! कुरुरीयोंके समान राती हुई उन स्त्रियोंको छोड कर चले और जाकर अपने पिता धृतराष्ट्रको प्रणाम किया। पीछे सब शत्रनाशन पाण्डवोंने अपना अपना नाम लेके महा-

प्रशासिक । १ श्वल्यवानिकर्षयं विता पुत्रवधार्तितः ।

अप्रीयमाणः शोकातिः पाण्डवं परिषक्षके ॥ १२ ॥

प्रमेराजं परिव्वज्य सांत्वियत्वा च मारत ।

दुष्ठात्मा भीममन्वैन्छदिष्ठस्तिय पावकः ॥ १३ ॥

स कोपपावकस्तस्य शोकवायुसमीरितः ।

भीमसेनमयं दावं दिधस्तुरिव दृष्यते ॥ १४ ॥

तस्य सङ्करपम्माणः मीमं प्रवृत्ये भीममायसम्॥ १५ ॥

प्रामेष तु महाबुद्धिर्वृद्धा तस्येष्ट्रितं हरिः ।

संविषानं महाप्राइस्त्रच चके जनादेनः ॥ १६ ॥

तं गृहीत्वैव पाणिभ्यां भीमसेनमयसम्म ।

पञ्च वण्वान् राजा मन्यमानो वृकोद्रम् ॥ १७ ॥

ततः पपात सेदिन्यां तथेव किर्धासितः ।

प्रपुष्टिपताग्रशिखरः पारिजात इव द्वुमः ॥ १९ ॥

पक्तः पपात सेदिन्यां तथेव किर्धासितः ।

प्रपुष्टिपताग्रशिखरः पारिजात इव द्वुमः ॥ १९ ॥

पित महाराज वृत्ताप्ट्रने अपने पुत्रों

के नाग्र करनेवाले पुविष्ठको अपने

सीरे वचनसे द्वान्त करके भीमसेनको

सारोकी इन्छासे दृद्धने लगे, उस समय सोक्ष्रकरी स्वान्त हिर्देश सारोक अलो स्वाराज वृत्ताप्ट्रके शरीरका तेज एसा

दीखता या जैस प्रलक्तिक नेवाद्वा स्वाराज विद्वा साराज विद्व 





प्रत्यगृह्णाच तं विद्वान सूतो गावलगणिस्तदा । मैवमिलब्रवीचैनं शमयन्सांत्वयन्निव स तु कोपं समुत्सुज्य गतमन्युर्महामनाः। हाहा भीमेति चुकोश रूपः शोकसमन्वितः ॥ २१ ॥ तं विदित्वा गतकोधं भीमसेनवधार्दितम्। वासुदेवो वरः पुंसामिदं वचनमब्रवीत् मा शुचो घृतराष्ट्र त्वं नैष भीमस्त्वया इतः। आयसी प्रतिमा होषा त्वया निष्पातिता विभो ॥२३॥ त्वां क्रोधवशमापस्नं विदित्वा भरतर्षभ । मयाऽपक्रष्टः कौन्तेयो सत्योर्देशन्तरं गतः न हि ते राजशार्द्छ बले तुल्योऽस्ति कश्चन। कः सहेत महाबाहो बाह्वोर्विग्रहणं नरः यथान्तकमनुप्राप्य जीवन्कश्चित्र मुच्यते । एवं बाह्य-तरं प्राप्य तव जीवेन्न कश्चन 11 28 11 तस्मात्युत्रेण या तेऽसौ प्रतिमा कारिताऽऽयसी। भीमस्य सेयं कौरव्य तवैवोपहृता मया ॥ २७ ॥

फिर जैसे फला हुना कल्पन्नस पृथ्वीमें गिर जाता है, वैसे ही रुधिरमें भीगे राजा धृतराष्ट्र पृथ्वीमें गिर पढ़े। तब महा विद्वान सञ्जयने उनको पकडा और उनको शान्त करनेके लिये कहने लगे कि आप ऐसा मत कीजि ये। (१७-२०)

तन राजा धृतराष्ट्रका क्रीध शान्त हुआ और शोकसे व्याकुल होकर, हा भीम हा भीम कहके रोने लगे। जब श्रीकृष्णने देखा, अब राजाका क्रीध शांत होगया, तज पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्ण बोले, हे महाराज धृतराष्ट्र! आप कुछ शोच मत कीजिये; आपने मीमसेनको नहीं मारा, आपने यह लोहेकी बनी भीमसेनकी मृतिं तोडी है, हमने आपको कोघके वशमें देखकर अपने हाथसे खींचकर मीमसेनको मृत्युके मुहसे निकाला है। (२१—२४)

हे राजशार्दृत ! जगत्में आपके समान बलवान् कोई नहीं है, जो आपके हाथों के बलको सह सके ऐसा जगत्में कीन है? जैसे यमराजके पास जाकर कोई जीता नहीं वच सक्ता, तैसेहा आपके हाथों के बीचमें आकर कोई नहीं बच सक्ता? हसी लिये हमने राजा दुर्योधनने

पुत्रकोकाभिसन्तप्तं धर्माद्पकृतं मनः। तव राजेन्द्र तेन त्वं भीमसेनं जिघांससि न त्वेतत्ते क्षमं राजन् हन्यास्त्वं यद्वकोदरम्। न हि पुत्रा महाराज जीवेयुस्ते कथश्रन तसायत्कृतमसाभिर्मन्यमानैः शमं प्रति। अनुमन्यस्व तत्सर्वं मा च घोके मनः कृथाः॥३०॥ [३३८]

इति श्रीगहाभारते शतसाहरूवां संहितायां वैयासिक्यां खीपविणि जलश्रदानिकपर्वणि

व्यायसभीमभंगे द्वादशोऽध्याय: ॥ १२ ॥

वैशम्पायन उवाच-तत एनम्रुपातिष्ठन् शौचार्थं परिचारिकाः। कृतशौचं पुनश्चैनं प्रोवाच मधुसूद्रनः 11 8 11 राजन्नधीता वेदास्ते शास्त्राणि विविधानि च। श्रुतानि च पुराणानि राजधमीश्र केवलाः एवं विद्वानमहाप्राज्ञः समर्थः सवलावले । आत्मापराधात्कस्मारवं क्रक्षे कोपमीहशाम उक्तवांस्त्वां तदैवाहं भीष्मद्रोणौ च भारत। विदुरः सञ्जयश्रेव वाक्यं राजन्न तत्क्वधाः 11811

बनाई हुई भीमसेनकी छौदेकी मुर्ति आपके आगे रख दई थी। आपका मन पुत्रोंके शोकसे न्याकुल होगया है, अव आप के मनमें कुछ भी धर्म नहीं रहा. इसलिये भीमसेनको मारना चाहते हैं: आपकी यह शक्ति नहीं है जो भीमसेन-को मार सके। आपके पुत्रोंकी अवस्था नष्ट हो चुकी थी, वह कदापि नहीं जी सक्ते थे, इमने जो पहिले शान्तिके लिये कहा था, उन सबको सारण करके शान्त होहये और शोकको द्र कीजि-ये।(२५-- ३०) [३३८]

स्त्रीपवंमं तेरह अध्याय ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले; हे राजन् जनमेजय ! इसके पंथात् महाराज धृत-राष्ट्रके पास शौच कर्म करानेके लिये बहुत सेवक आये । जब राजा पवित्र हो चुके तब श्रीकृष्ण उनसे बोले, हे राजन्! आपने सब वेद और अनेक शास्त्र पहे हैं, अनेक पुराण सुने हैं और सब धर्म अधर्मको आप जानते हैं इस प्रकार महा बद्धिमान और सब कार्यों में समर्थ होकर भी अपने दोपको विना विचारे ऐसा कोध क्यों करते हैं, हे भारत ! शकुनी,

स्वार्थमाणी नास्माकमकार्षा वैचनं तदा।
पाण्डवानाधिकान् जानन्यले शौरों च कौरव ॥ प्राच्या हिया स्थरप्रज्ञा खयं दोषानवेक्षते।
देशकालिभागं च परं श्रेया स विन्दति ॥ प्रज्ञाति मो हिताहिते।
अपदा समनुप्राप्य स शोचव्यनये स्थितः ॥ प्रज्ञाति मो हिताहिते।
अपदा समनुप्राप्य स शोचव्यनये स्थितः ॥ प्रज्ञात्वेक्षते ॥ प्राच्या समनुप्राप्य स शोचव्यनये स्थितः ॥ प्रज्ञात्वेक्षते स्थात्वेक्षते स्थात्वेक्षते स्थात्वेक्षते ॥ प्रज्ञात्वेक्षते स्थात्वेक्षते स्थात्वेक्षते ॥ प्रज्ञात्वेक्षते स्थात्वेक्षते स्थात्वेक्षते ॥ प्रज्ञात्वेक्षते विच्याया प्रवाद्येक्षते स्थात्वेक्षते स्य ॥ ५ ॥ 11 8 11 11 9 11

नाश कर दिया और केवल दुर्योधनके वशमें पड गये, उसहीके अपराधसे आप इस आपत्तिमें पडे हैं, तब मीमसेनसे वैर क्यों करते हैं ! आप अपने अपराधको सारण करके क्रोधको त्याग कीजिये। जिस दुष्टने द्वेपके वशमें होकर द्रौपदी-को सभामें बुलाया था, भीमसेनने वैर समाप्त होनेके लिये उसे मार डा-

हे राजन्! आप अपने और दुष्ट पुत्रके कर्मका सारण कीजिये आपने अपराध रहित पाण्डवों को निकाल

उवाच देवकीपुत्रं धृतराष्ट्रो महीपतिः 11 83 11 एवमेतन्महाबाहो यथा वद्सि माघव। पुत्रसेहस्तु वलवान्धैयीनमां समचालयत् 11 83 11 दिष्टचा तु पुरुषव्याघो बलवान्सत्यविक्रमः। त्वद्वश्रो नागमत्कृष्ण भीमो बाह्यन्तरं मम 11 88 11 इदानीं त्वहमञ्ययो गतमन्युर्गतज्वरः। मध्यमं पाण्डवं वीरं द्रष्टुमिच्छामि माधव 11 89 11 हतेषु पार्थिवेन्द्रेषु पुत्रेषु निहतेषु च। पाण्डुपुत्रेषु वै दार्भ प्रीतिश्राप्यवातिष्ठते 11 88 11 ततः स भीमं च धनज्ञयं च माद्राश्च पुत्रौ पुरुषप्रवीरौ। पस्पर्श गात्रै। प्ररुद्द् सुगात्रानाश्वास्य कल्याणमुवाच चैतान् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते शतसाहरूत्रां संहितायां वैवासिक्यां खीपवंणि जलप्रदानिकपर्वणि ष्टतराष्ट्कोवविमोचने पाण्डवपरिष्वक्षो नाम त्रयोददो(ऽध्यायः॥ १३ ॥ [३५५]

वैशम्पायन उवाच- धृतराष्ट्राभ्यनुज्ञातास्ततस्ते कुरूपाण्डवाः । अभ्ययुर्ज्ञातरः सर्वे गान्धारीं सह केशवाः ॥ १॥ ततो ज्ञात्वा हतामित्रं युधिष्टिरसुपागतम्।

जनमेजय! श्रीकृष्णके ऐसे सचे वचन सुनकर महाराज घतराष्ट्र श्रीकृष्णसे बोले, हे कृष्ण! जो तुम इस समय कहते हो, सो सब ऐसेही है। परन्तु पुत्रोंका प्रेम बहुत बलवान् है, इससे मेरा घीरज नष्ट होगया था, प्रारव्धहीसे महापराक्रमी पुरुषसिंह भीमसेन आपसे रक्षित होकर मेरे हार्थोंके बीचमें नहीं आये, अब मेरा सब कोष ज्ञान्त होगया और अब मुझे कुछ दुःख भी नहीं रहा। इसलिये अब में महाबलतान् भीमसेन-को देखना चाहता हूं। हे कृष्ण! सब राजा और दुर्योघन आदि अपने बेटोंके

मरनेके पीछे अब मेरा प्रेम पाण्डवासे अधिक वढ गया है, में उनका कल्याण चाहता हूं। (१२---१६)

त्र महाराज धृतराष्ट्रने रोकर सुन्दर शरीरवाले भीमसेन, अर्जुन, नकुरु और वीर सहदेवका शरीर स्पर्श किया। (१७) [३५५]

स्त्रीपर्वमें तेरह अध्याय समाप्त । स्त्रीपर्वमें चौदह अध्याय ।

श्रीवेशम्पायन म्रानि बोले, हे राजन् जनमेजय ! इसके पश्चात् महाराज धृत-राष्ट्रकी आज्ञासे श्रीकृष्णके सहित पांचो पाण्डन गान्धारीके पास गये, तब

वित्रधामहम् ।
वित्रधामहम् । गान्धारी पुत्रशोकार्ती श्रप्तमैच्छद्निन्द्ता तस्याः पापमभिप्रायं विदित्वा पाण्डवान्त्रति । ऋषिः सत्यवतीपुत्रः प्रागेव समबुध्यत स गङ्गायामुपस्पृदय पुण्यगन्धि पया शुचि । तं देशसुपसम्पेदे परमर्षिर्मनोजवः दिच्येन चक्षुषा पर्यम् मनसा तद्गतेन च। सर्वप्राणभृतां भावं स तत्र समबुध्यत स स्तुषामत्रवीत्काले कल्पवादी महातपाः। शापकालमवाक्षिप्य शमकालमुदीरयन् न कोपः पाण्डवे कार्यो गान्धारि श्रममाप्तृहि। वचो निगृह्यतामेतच्छुणु चेदं वचो मम उक्ताऽस्यष्टादशाहानि पुत्रेण जयमिन्छता । जयमाशास्व मे मात्रयुध्यमानस्य शत्रुभिः सा तथा याच्यमाना त्वं काले काले जयैषिणा। उक्तवलसि गान्धारि यतो धर्मस्ततो जयः न चाप्यतीतां गान्धारि वार्च ते वितथासहम्।

व्याकुल निन्दारहित गान्धारीने श्रञ्जरहित युधिष्ठिरको आते हुए देखकर शाप देनेकी करी।(१--२)

पूत्रशेकसे क पुत्रशेकसे वश्चर पुत्रशेकसे वश्चर सान्धारीने वश्चर करी। (१ – २ गान्धारीके म पाप जानकर म च्यास आये। मग् च्यास आये। मग् च्यास आये। मग् समाचार अपने थे, अनन्तर भगवा से भरे गङ्गाजलव समान शिव्र चलव गान्धारीके मनमें पाण्डवींकी ओरसे पाप जानकर भगवान सत्यवती पुत्र व्यास आये। मगवान व्यासने ये सब समाचार अपने आश्रमहीमें ज्ञाननेत्र और शुद्ध मनकी शक्तिसे जान लिये थे, अनन्तर भगवान व्यास पवित्र सुगन्ध से भरे गङ्गाजलको स्पर्श करके मनके समान शिघ्र चलकर उस स्थानमें आए

ने शान्ति करनेके लिये गान्धारीसे ऐसे वचन कहे। (३--६)

हे गान्धारी! तुम ज्ञान्त हो,पाण्डवों-के ऊपर कोध मत करो और हमारे वचन सुनो। जिस समय विजयकी इच्छा-से महाराज दुर्योधनने तुमसे कहा था कि. हे माता ! मैं शत्रुओंसे युद्ध करने-को जाता हूं, तुम हमारे जयकार की बात करो, इस प्रकार १८ वीं बार मांगने पर भी तुमने बार बार यही कहा था? कि जिधर धर्म होगा उधर ही विजय होगी, सो तुम्हारी बात झुठ हुई। तुमको

सारामि तोषमाणायास्तथा प्रणिहिता ह्यसि विग्रहे तुमुले राज्ञां गत्वा पारमसंशयम्। जितं पाण्डुसुतैर्युद्धे नूनं धर्मस्ततोऽधिकः क्षमाशीला पुरा भूत्वा साड्यान क्षमसे कथम्। अधर्म जिह धर्मज्ञे यतो धर्मस्ततो जयः स्वं च धर्मं परिस्मृत्य वाचं चोक्तां मनखिनि । कोपं संयच्छ गान्धारि मैवं भूः सत्यवादिनि ॥ १३ ॥ गान्धार्ष्रवाच--- भगवन्नाभ्यसूयामि नैतानिच्छामि नद्यतः। पुत्रशोकेन तु बलान्मनो विह्नलतीव मे यथैव क्रंत्या कौन्तेया रक्षितव्यास्तथा मया। तथैव धृतराष्ट्रेण रक्षितव्या यथा त्वया द्र्योघनापराधेन शक्कनेः सौबलस्य च। कर्णदुःशासनाभ्यां च कृतोऽयं कुरुसंक्षयः नापराध्यति बीभत्सुर्ने च पार्थी वृकोदरः। नकुरुः सहदेवश्च नैव जातु गुधिष्टिरः 11 89 11 युध्यमाना हि कौरव्याः कृतमानाः परस्परम्।

मान्ध्र मान्य मान्ध्र मान्ध्र मान्ध्र मान्ध्र मान्ध्र मान्ध्र मान्ध्र मान्ध्य मान्ध्र मान्ध्य मान्य मान्य मान्ध्य मान्य मान्य मान्य मान्य मान्य मान्य चाहिये, इस घोर युद्धमें पाण्डवोंने अनेक राजोंको मारकर विजय पाई है, इससे यही निश्रय होता है, कि इस युद्धमें विजयका मूल धर्मही था, तुम पहिले बहुत ही क्षमा करनेवाली थी, सो अब क्षमा क्यों नहीं करती हो ? (७-११)

हे धर्मे जाननेवाली गान्धारी ! हे सत्य वचन कहनेवाली! तुम अधर्मकी छोडो, तुम अपने कहे हुए उस वचनको स्मरण करो कि जहां धर्म है वहां विजय होगी अब तुम क्रोघको छोड दो और ऐसी बुद्धिको दूर करो। (१२-१३)

गान्धारी बोली, हे भगवन् ! में

पाण्डवींकी निन्दा नहीं करती और न उनका नाश करना चाहती हूं, परन्तु मेरा यन पुत्रोंके शोकसे व्याकुल होगया है, इसीसे इतना क्रोध आगया था, जैसे क्रन्तीको पाण्डबोंकी रक्षा करनी चाहिये ऐसे ही पृतराष्ट्र और मुझको भी उनके ऊपर ऋपा करनी चाहिये। दुर्योधन, मेरे माई शक्तनी, कर्ण और दुःशासनके अपराधसे यह कुरुकुलका नाग्र होगया। युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल, अर्जुन और सहदेवने मेरा कुछ अपराध नहीं किया, सब वीर परस्पर लडकर भर नये, इससे मुझे कुछ दुःख नहीं हुआ, परन्तु भीम-

<u>#&</u>eeae¢eaeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee निहताः सहिताश्चान्यैस्तच नास्त्यिवयं मम ॥ १८ ॥ किं तु कर्माकरोद्शीमो वासुदेवस्य पर्वयतः। दुर्योधनं समाह्य गदायुद्धे महामनाः शिक्षयाऽभ्यधिकं ज्ञात्वा चरन्तं बहुधा रणे। अधो नाभ्याः प्रह्वतवांस्तन्मे कोपमवर्धयत् ॥ २०॥ कथं नु धर्म धर्मज्ञैः समुद्दिष्टं महात्मिभः। व्यंजयुराहवे शुराः प्राणहेतोः कथश्रन ॥ २१ ॥ [ ३७६ ] प्टति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासियां खीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि गान्धारीसांखनायां चतुर्देशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

वैशम्पायन उवाच-तच्छ्रुरुत्वा वचनं तस्या भीमसेनोऽध भीतवत् । गान्धारीं प्रत्युवाचेदं वचः सानुनयं तदा 11 9 11 अधर्मी यदि वा धर्मस्त्रासात्तत्र मया कृतः। आत्मानं त्रातुकामेन तन्मे त्वं क्षन्तुमईसि 1121 न हि युद्धेन पुत्रस्ते धम्पेण स महाबलः। न शक्यः केनचिद्धन्तुमतो विषममाचरम् 11 \$ 11 अघर्मेण जितः पूर्व तेन चापि युधिष्ठिरः। निकताश्च सदैव सा ततो विषममाचरम् 11811

सेनने दुर्योधनको गदायुद्धमें बुलाकर अनेक प्रकारसे युद्ध करते और अपनेसे अधिक विद्वान देख के उनकी नामी के नीचे गदा मारी और श्रीकृष्ण भी उस अधर्मको देखते रहे, इसहीको स्मरण करके मुझे नहुत क्रोध आता है और यह भी शोच आता है, कि महात्मा धर्म जाननेवाले ग्रुखीर केवल प्राणके भयसे धर्मको कैसे छोड देते हैं।(१४-२१) ् स्तीपवेमें चौदह अध्याय समाप्त । [३५६ ]

स्त्रीपर्वमें पंदरह अध्याय। श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय ! गान्धारीके ऐसे वचन सन-कर दरते हुए भीमसेन उनके पास गये और कहने लगे कि मैंने यह कर्म चाहे धर्मसे किया, चाहे अधर्मसे किया, केवल दुर्योधनके डरसे अपनी रक्षा करनेके लिये ऐसा किया है: सो तम क्षमा करो । दुर्योधन महाबलवान था, उसे युद्धमें धर्मसे कोई नहीं जीत सक्ता था, इस ही लिये यह अधर्म मैंने किया दुर्योधनने पहिले महाराज युधिष्ठिरको अधर्महीसे जीता था, और हम लोगोंको

| \$999 <del>99</del> 99999 | <del>33333333333333456666666666666666666666</del> | ••••     |  |
|---------------------------|---------------------------------------------------|----------|--|
|                           | सैन्यस्यैकोऽचिशछोऽयं गदायुद्धेन वीर्घवान् ।       |          |  |
|                           | मां हत्वा न हरेद्राज्यमिति वै तत्कृतं मया         | 11 9 11  |  |
|                           | राजपुत्रीं च पाश्चालीमेकवस्त्रां रजखलाम्।         |          |  |
|                           | भवला विदितं सर्वेषुक्तवान्यत्सुतस्तव              | 11 & 11  |  |
|                           | सुयोधनमसंगृह्य न शक्या भूः ससागरा।                |          |  |
|                           | केवला भोक्तुमसाभिरतश्चैतत्कृतं मया                | 11 0 11  |  |
|                           | तथाऽप्यवियमसाकं पुत्रस्ते समुपाचरत्।              |          |  |
|                           | द्रौपचा यत्सभामध्ये सन्यसूरुमदर्शयत्              | 11 2 11  |  |
|                           | तदैव वध्यः सोऽसाकं दुराचारश्च ते सुतः।            |          |  |
|                           | धर्मराजाज्ञया चैव स्थिताः सा समये तदा             | ॥९॥      |  |
|                           | वैरमुद्दीपितं राज्ञि धुन्नेण तव तन्महत् ।         |          |  |
|                           | क्केशिताश्च वने निखं तत एतत्कृतं मया              | 11 of 11 |  |
|                           | वैरस्यास्य गताः पारं हत्वा दुर्योधनं रणे।         |          |  |
|                           | राज्यं युधिष्ठिरः प्राप्तो वयं च गतमन्यवः         | H 99 ii  |  |
| गांघार्युवाच —            | न तस्येष वधस्तात् यत्प्रशंसिस मे सुतम्।           |          |  |
|                           | कृतवांश्रापि तत्सर्वं यदिदं भाषसे भिय             | 11 22 11 |  |

यह अधर्म किया। अपनी सन सेनामेंसे केनल नलनान दुर्योधनही बच गये थे, ये अब हमको न मार डाले इसलिये मेंने यह अधर्म किया। राजपुत्री रजस्वला द्रीपदीको समामें चुलाकर जो कुछ वचन कहा था, सो सब तुम जानती हो; इस लिये मैंने ये अधर्म किया। दुर्योध्याको सिना जीते हम समुद्र पर्यन्त पृथ्वीके राजा नहीं बन सकते, इसलिये मैंने यह अधर्म किया। (१-७)

द्रौपदीको अनेक वचन कहनेपर भी दुर्योघन शान्त न हुआ और उसने सभाके वीचमें द्रौपदीको अपनी बाही जांघ दिखलाई, उस दुष्टको हम चारों भाई उस ही समय मार डालते, परन्तु धर्मराज युधिष्ठिरकी आज्ञाके नशर्मे होकर कुछ न कर सके। हे रानी! इस घोर वैरको दुर्योधनहींने बढाया, देखो हम लोगोंने वनमें कैसे कैसे दुःख उठाये इसलिये मैंने अधर्म किया। दुर्योध्यान सरनेसे युधिष्ठिरको राज्य मिला और हम चारों माई भी वैर समाप्त करके शान्त हुए। (८—१९)

गान्धारी बोली, हे प्यारे भीमसेन ! तुम जो हमारे पुत्रकी प्रशंसा करते हो और कहते हो कि हमने उसको मारा

हताश्वे नकुले यत्तु वृषसेनेन भारत। अपिनः शोणितं संख्ये द्वाशासनशरीरजम् ॥ १३ ॥ सद्भिविगहितं घोरमनार्यजनसोवितम्। क्रं कर्माकृथास्तस्मात्तद्युक्तं वृकोद्र भीमसेन उवाच— अन्यस्यापि न पातव्यं रुधिरं किं पुनः स्रकम्। यथैवात्मा तथा भ्राता विशेषो नास्ति कश्चन ॥ १५॥ रुधिरं न व्यतिकामदन्तोष्ठाद्म्य मा ग्रुचः। वैवस्त्रतस्तु तद्वेद इस्तौ मे रुधिरोक्षितौ हताश्वं नकुलं हट्टा घृषसेनेन संयुगे। भ्रातृणां संप्रहृष्टानां त्रासः सञ्जनितो मया केशपक्षपरामर्शे द्रौपद्या चृतकारिते। कोधायद्व्रुवं चाहं तच मे हृदि वर्तते 11 28 11 क्षत्रधर्माच्च्युतो राज्ञि भवेषं शाश्वतीः समाः। प्रतिज्ञां तामनिस्तीर्थे ततस्तत्कृतवानहम् न मामहीस गान्धारि दोषेण परिशक्तितम ।

सो तुमने इतना ही अपराध नहीं किया। जिस समय वृषसेनने नक्कके घोडे मार डाले थे, तब तुमने दुःशासनके शरीरसे निकालकर रुधिर पिया। सजनोंने निन्दित, उस घोर दृष्ट अनायोंके करने योग्य अयुक्त कर्म तुमने किया (१२-१४) भीमसेन बोले, अपने शरीरमें और

माईके शरीरमें कुछ भेद नहीं होता, जगतमें कोई मनुष्यका रुधिर नहीं पी मक्ता और अपने रुधिरकी कथा ही तो क्या है। हे माता ! दुःशासनका रुधिर मेरे दातोंसे भीतर नहीं गया था, अथौत् मैंने केवल औठ हीसे लगाकर छोड दिया था. तुम इसका कुछ

करो, केवल मेरे हाथ ही रुधिरसे भीगे थे; इस सत्यको केवल यमराज ही जानते हैं । जिस समय युद्धमें वृषसेनके वाणोंसे नकलके घोडे मारे गये और तुम्हारे पुत्र बहुत प्रसन्न हुए तब मैंने उनको डरानेके लिये ही यह कर्म किया था, जिस समय जुना खेलनेके पीछे दःशासनने द्रौपदीके बाल पकडकर खींचे थे, और मैंने क्रोधसे भरकर प्रतिज्ञा कर दी थी, वहीं बात मेरे हृद्य में बनी रही। मैं उस प्रतिज्ञाको विना पूर्ण किये सदाको क्षत्रियोंके धर्मसे नष्ट हो जाऊंगा, इसलिये मैंने यह कर्म

| 998899888888888888888888888888888888888                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                              |                                          |  |  |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|------------------------------------------|--|--|
| अनिगृह्य पुरा पुत्रानः                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                               | स्राखनपकारिषु ।                          |  |  |
| अधुना किं नु दोषेण                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | परिशाङ्कितुमहंसि ॥ २०॥                   |  |  |
| गान्धार्युवाच- बृद्धस्यास्य कातं पुत्रा।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | न्निन्नंस्त्वमपराजितः ।                  |  |  |
| कसान्न शेषयेः किश्चि                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                 | चेनाल्पमपराधितम् ॥ २१ ॥                  |  |  |
| सन्तानमावयोस्तात                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | वृद्धयोर्ह्हतराज्ययोः ।                  |  |  |
| कथसन्धद्वयस्यास्य य                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  | ष्टिरेका न वर्जिता ॥ २२ ॥                |  |  |
| शेषे स्ववस्थिते तात                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  | पुत्राणामन्तके त्वधि।                    |  |  |
| न मे दुःखं भवेदेतच                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | दि त्वं धर्ममाचरेः ॥ २३॥                 |  |  |
| वैश्वम्यायन उवाच-एवसुक्तवा तु गान्धा                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                 | री युधिष्ठिरमपृच्छत ।                    |  |  |
| क स राजेति सकोधा                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | । पुत्रपौत्रवधार्दिता ॥ २४ ॥             |  |  |
| अनिगृद्ध पुरा पुत्रानसाखनपकारिषु । अञ्चन किं न दोषेण परिचाङ्किनुमहीसे ॥ २०॥ गान्धार्युवाच हृद्धस्पास्य चातं पुत्राजिन्नसंस्त्रमपराजिताः । कस्मान्न चोषयेः किञ्चिद्यान्तराज्ययोः । कथनन्षद्वप्रस्थास्य पष्टिरेका न वर्जिता ॥ २२॥ चोषे द्वावस्थिते तात पुत्राणामन्तकं त्विषः । न मे दुःखं अवेदेतचादि त्वं धर्ममाचरेः ॥ २३॥ वैश्वग्पायन उवाच-एवसुक्त्वा तु गान्धारी युधिष्ठरमपुच्छत । क स राजेति सकोधा पुत्रपीत्रवधादिता ॥ २४॥ विश्वग्पायन उवाच-एवसुक्त्वा तु गान्धारी युधिष्ठरमपुच्छत । क स राजेति सकोधा पुत्रपीत्रवधादिता ॥ २४॥ पुत्रहन्ता चंद्रासोऽहं तव देवि युधिष्ठरः । चापाईः पृथिवीनाशो हेतुभूतः चापख माम् ॥ २६॥ न हि मे जीवितेनाधों न राज्येन घनेन वा । ताद्यात सुद्धदो हत्वा मुदस्यास्य सुद्धदुहः ॥ २७॥ हे गान्धारी ! तुमने पहिले अपने पुत्रोंको हतारा अपराध करते देखकर भी न रोका और अव हमपर दोष लगाती हो, सो यह दोष लगाना व्या है । (२०) गान्धारी बोली, हे मीम ! तुमने वृदे राजाके सौ पुत्रोंको मार डाला, जिसने तुम्हारा कम अपराध किया था, उस एकको भी क्यों न छोडा, इम दोनों वृद्ध और अन्धोंका राज्य मी छिन गया और लाठोंके समान एक सन्तान भी न रही । यदि तुम धमेसे मेरे सव पुत्रोंको भारकर मेरे पास आते, तो सुन्न इतना स्वर्वत्वा स्वर्वते सरेनेक पीछे राज्य, |                                          |  |  |
| युधिष्ठिरस्तिवदं तत्र                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                | मधुरं वाक्यमब्रवीत् ॥ २५॥                |  |  |
| पुत्रहन्ता नंशसोऽहं                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  | तव देवि युधिष्ठिरः।                      |  |  |
| शापाईः पृथिवीनाशे                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                    | हेतुभृतः रापस्त माम् ॥ २६॥               |  |  |
| न हि मे जीवितेनाथे                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | नि राज्येन घनेन वा।                      |  |  |
| ताह्यान सुहदो हत                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | वा मूढस्यास्य सुद्धद्रहः ॥ २७ ॥          |  |  |
| है गान्धारी । जाने गरिने जाने                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | 1 717 7 77 1 (05 07 )                    |  |  |
| व गान्यासा । धुनव मावल अपव                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                           | दुःख न हाता । ( ५१-५२ )                  |  |  |
| भी स रोका और अस स्थाप क्षेत्र                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | अवशम्पायन म्रान बाल, प्रिरं व            |  |  |
| ना प रामा जार जम हमपर दाप                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                            | आर पाताक शाकस व्याकुल गान्धारा           |  |  |
| है। (२०)                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | कार्यम मरकर पूछा का राजा ग्राधाध         |  |  |
| गान्धारी बोली हे भीम ! नमने नने                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                      | कहा है ? ( २४)                           |  |  |
| राजाके सा पत्रोंको मार हाला जिल्हे                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | तव राजाक महाराज शुर्थाष्ठर ७९            |  |  |
| तिस्हारा कम अवसाध किया भा ज्या                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       | कापत हुए हाथ जाडकर उनक पा                |  |  |
| एकको भी क्यों न छोड़ा इस होनों                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       | वेय आर इस प्रकार माठ पचन बार             |  |  |
| बुढे और अन्धोंका राज्य भी छित्र ग्राम                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                | ह साता । तुन्हार धुत्राका नारवदार        |  |  |
| और लाठीके समान एक सन्तान भी                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          | सम जनत्त नाम करनका भूल कार               |  |  |
| न रही। यदि तुम धर्मसे मेरे सब पन्नोंको                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                               | अवाशिर न हा हुं। तथ्य हा न तुना          |  |  |
| मारकर मेरे पास आते. तो मुझे इतना                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | जनरावा हू, इसालय मुझ शाप दी, मु          |  |  |
| ;eeeeeeeeeeeeeeee;                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | eccessessessessessessessessessessessesse |  |  |

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, फिर बेटे और पोतोंके शोकसे व्याकुल गान्धारीने कोधमें भरकर पूंछा की राजा युधिष्ठिर कहां हैं ? (२४)

तमेवं वादिनं भीतं संज्ञिकर्षगतं तदा। नोवाच किश्चिद्वान्धारी निःश्वासपरमा भृशम् ॥ २८ ॥ तस्यावनतदेहस्य पादयोर्निपतिष्यतः। युधिष्ठिरस्य चपतेर्धर्मज्ञा दीर्घदर्शिनी 11 28 11 अङ्ग्रल्यग्राणि दहशे देवीपहान्तरेण सा । ततः स क्रनखीभूतो दर्शनीयनखो तृपः 11 30 11 तं रष्ट्रा चार्जुनोऽगच्छद्वासुदेवस्य पृष्ठतः। एवं सञ्चेष्टमानांस्तानितश्चेतश्च भारत 11 38 11 गान्धारी विगतकोधा सांत्वयामास मातृबत्। तया ते समनुज्ञाता मातरं वीरमातरम् ॥ ३२ ॥ अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः। चिरस्य दृष्टा पुत्रान् सा पुत्राधिभिरभिष्ठुता बाह्यमाहारयदेवी वस्त्रेणावृत्य वै मुखम् । ततो बाष्पं समुत्सुज्य सह पुत्रैस्तदा पृथा ा। ३४ ॥ अपर्यदेतान् रास्त्रीयैषेद्वया क्षतविक्षतान् । सा तानेकैकशः पुत्रान् संस्पृशन्ती पुनः पुनः ॥ ३५॥

और जीनेसे कुछ प्रयोजन नहीं है, में बड़ा मूर्ख और मित्रोंका द्रोही हं। (२५-२७)

| Participants | Pa राजा युधिष्ठिरको डरे देख और उनके ऐसे वचन सुन गान्धारीने कुछ न कहा, केवल स्वास लेने लगी। जिस समय महाराज युधिष्ठिर डरसे कांपते हुए उनके पैरोंपर गिर पडे, तब धर्म जाननेवाली गान्धारीने उन्हें अपने कपडोंके भीतरसे अंगुली दिखाई, उसी समय सुन्दर नख्नवाछे महाराज युधि-ष्टिरके नखून विगड गये, महाराजकी

जाकर छिप गये। पाण्डवींको इधर उधर छिपते देख गान्धारीका क्रोध शान्त हुआ। फिर उनको माताके समान समझने लगे ! (२८-३२)

फिर गान्धारीकी आज्ञा लेकर ये सब बीर माता क्रन्तीके पास गये, जिस समय वीर पाण्डव अपनी माताके पास गये तव प्रत्रोंके दुःखसे न्याक्तल बहुत दिनों से पुत्रोंसे छूटी क्रन्ती, अपने आंसुओंको कपडेसे पोंछती हुई आई और बार बार उनके शरीरोंको स्पर्ध करके अनेक प्रकारके अस्त्रोंसे कटे हुए शरीरोंको

अन्वज्ञोचत दुःखार्ता द्रौपदीं च हतात्मजाम्। रुद्तीमथ पात्रालीं ददर्श पतितां सुवि आर्थे पुत्राः क ते सर्वे सीभद्रसहिता गताः। द्रीपद्यवाच--न त्वां तेऽद्याभिगच्छन्ति चिरं हट्टा तपिखनीम्॥ ३७॥ किं नु राज्येन वै कार्य विहीनायाः सुतैर्भम। तां समाश्वासयामास पृथा पृथुललोचना उत्थाप्य याञ्चसेनीं तु रुद्तीं शोककर्शिताम् । तयैव सहिता चापि पुत्रैरनुगता रूप 11 38 11 अभ्यगच्छत गान्धारीमार्तामार्ततरा खयम । वैश्वम्पायन उवाच-तामुचाचाथ गान्घारी सह वध्वा यशस्विनीम्॥४० ॥ मैवं प्रत्रीति शोकार्ता पश्य सामपि दुःखिताम्। मन्ये लोकविनाशोऽयं कालपर्याय नोदितः अवइयभावी सम्प्राप्तः स्वभावाह्योमहर्षणः । इदं तत्समनुप्राप्तं विदुरस्य वचो महत् असिद्धानुनये कृष्णे यदुवाच महामतिः। तिसन्नपरिहार्येऽथें व्यतीते च विशेषतः मा शुचो न हि शोच्यास्ते संग्रामे निघनं गताः।

द्रौपदी शोच करने लगी, फिर भूमिमें पडी और रोती हुई द्रौपदीको देखा। द्रौपदी बेाली, हे माता! अभिमन्युके सहित तुझारे सब पोते कहां चले गये? तुमको बहुत दिनके पीछे यहां आई हुई देकखर भी वे तुसारे पास अभी तक क्यों नहीं आते? विना पुत्रोंके मैं इस राज्यको लेकर क्या करूंगी? (३३-३७) ंरोती हुई शोकसे व्याक्कल द्रौपदीको उठाकर बडे बडे नेत्रवाली क्रुन्ती सम-झाने लगी। फिर अपने पुत्र और

द्रीपदीके सिहत रोती हुई क्वन्ती, रोती

हुई गान्धारीके पास गई। (३८-३९) श्रीवैशम्पायन म्रानि बोले, यशस्त्रिनी कुन्तीको द्रोपदीके सहित रोते हुए देख गान्धारी बोली, तुम कुछ शोच मतकरो। देखों मैं भी कैसे शोकमें पड़ी हुई हूं, मयानक समय खमावहीसे आगया था. महाबुद्धिमान विदुरने जैसे कहा था, सो सब वैसे ही हुआ, यह कर्म अवस्य होनेवाला था, सो समाप्त होगया। वे सब युद्धमें मारे गये, उनका सोच करना अब वृथा है, जैसे शोकमें तम पडी हो

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्त्यां संहितायां वैयासिक्यां छीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि

पृथावुत्रदर्शने पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

समाप्तं जलपदानिकं पर्व । अथ स्त्रीविलापपर्व ।

वैशम्पायन उवाच एवसुक्तवा तु गान्धारी क्रारूणामवकर्तनम् ।

अपर्यत्तत्र तिष्ठन्ती सर्वं दिव्येन चक्षुषा ॥१॥ पतिव्रता महाभागा समानव्रतचारिणी। उग्रेण तपसा युक्ता सततं सखवादिनी ॥२॥

वरदानेन कृष्णस्य महर्षेः पुण्यकर्मणः। दिव्यज्ञानवलोपेता विविधं पर्यदेवयतः॥ ३॥

दिव्यज्ञानवलोपेता विविधं पर्यदेवयत् ॥ ददर्श सा बुद्धिमती द्राद्पि यथान्तिके।

रणाजिरे चवीराणामुहुतं लोमहर्षणमः ॥ ४॥

अस्थिकेदावसाकीर्णं जोणितीघपरिष्ठतम् । द्यारीरैर्बेहुसाइस्त्रेविंनिकीर्णं समन्ततः॥ ५॥

गजाश्वरथयोधानामाष्ट्रतं रुधिराविलैः।

मुझमें कोई मेद नहीं है और अब तुम्हें हमें समझाने और कीन आवेगा। मेरे ही अपराधसे इस कुलका नाश हु-आ। (४०-४४) [४२०]

श्री वर्वमें पंदरह अध्याय समास । [१५] जलप्रदानिक वर्ष समास ।

(२) स्त्री विलाप पर्व।

कायवेंमं सोवह भवाय। श्रीवैश्वम्पायन मुनि वोले, हे राजा जनमेजय! ऐसा कहके गान्धारी जुप हो गई. फिर उसने वहीं बैठे बैठे अपनी

हो गई, फिर उसने वहीं बैठे बैठे अपनी ज्ञान दृष्टिते उस युद्धभूमिको देखा, सदा सत्य बोलनेवाली पितवता महाभाग्य-वती तपिखनी धर्मात्मा महाभ्रानि व्यासकी कृपासे उस युद्ध स्मिको देखा। बुद्धिमती गान्धारीने उस वीरोंको युद्ध-स्मिको द्रसे इस प्रकार देखा जैसे कोई अपने घरकी वस्तुको देखता है, उस भयानक युद्धसृमिको देखकर वीरोंके मी रोये खडे होते थे, उस युद्धस्मिमं हर्दी, बाल, चर्ची, रुधिर, और शरीर मरे हुए थे, उस समय उस युद्धस्मिमं मरे हुए हाथी, घोडे, रथ और योद्धा इधिरसे मरे हुए दिखाई देते थे, किसी-

शरीरेरशिरस्कैश्र विदेहैश्र शिरोगणैः 11911 गजाश्वनरनारीणां निःस्वनैरभिसंवृतम्। सुगालबककाकोलकङ्ककाकनिषेवितम् 11 9 11 रक्षसां पुरुषादानां मोदनं क्ररराकुलम्। अशिवाभिः शिवाभिश्च नादितं गृधसेवितम् ॥ ८॥ ततो व्यासाभ्यनुज्ञातो धृतराष्ट्री महीपतिः। पाण्डुपुत्राश्च ते सर्वे युधिष्ठिरपुरोगमाः वासुदेवं पुरस्कृत्य हतवन्धुं च पार्थिवम् । कुरुस्त्रियः समासाच जग्मुरायोधनं प्रति समासाय कुरुक्षेत्रं ताः स्त्रियो निहतेश्वराः । अपरयन्त् हतांस्तत्र पुत्रान् भ्रातृन्पितृन्पतीन् ॥ ११ ॥ कव्यादैर्भक्ष्यभाणान्वै गोमायुवलवायसैः। भूतैः पिशाचै रक्षोभिर्विविधैश्र निशाचरैः 11 88 11 रुद्राक्रीडनिभं दृष्ट्वा तदा विश्वसनं स्त्रियः। महाहेंभ्योऽथ यानेभ्यो विकोशंखो निपेतिरे ॥ १३ ॥ अदृष्टपूर्व पद्यंखो दुःखाती भरतस्त्रियः। शरीरेष्वस्वलन्नाः पतत्यश्चापरा सुवि 118811

के शरीरका पता भी नहीं था, वह युद्ध भूमि हाथी, घोडे, मनुष्य और स्त्रियोंके शब्दसे भर गई, चारों ओर शियार वगुले और गिद्ध आदि मांस खानेवाले प्राणी दीखने लगे, मनुष्योंका मांस खानेवाले राक्षस क्रुरुरी भयानक सियारी और गिद्ध उस युद्धभूमिको देखकर

तव मगवान् व्यासकी आज्ञासे महा-राज, धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव, श्रीकृष्ण आगे करके कुरुक्कलकी स्त्रियोंको सङ्ग लेकर युद्धभूमिमें गये। (९-१०)

क्ररु क्षेत्रमें जाकर पतिरहित स्त्रियों ने मरे हुए अपने अपने पति, पिता, पुत्र और भाइयोंको देखा। और देखा की वहां उनके शरीरके मांसको कौवे, सियार, गिद्ध, भूत,पिशाच और राश्वस खा रहे हैं, उस समय उस युद्धभूमिको स्त्रियोंने महाकालके अखाडेके समान देखा, फिर अनेक बहुत मृल्यवाले वाहनोंसे रोती हुई उत्तरी। जिन कुरु स्त्रियोंने दुःख कभी नहीं देखा

ा २०॥

२०॥

२०॥

२०॥

२०॥

३१॥

३१ ।।

३१ ॥

३३ प्रताको सुन्य स्वर्ग स्वरंग स् श्रान्तानां चाप्यनाथानां नासीत्काचन चेतना । पाश्चालकुरुयोषाणां कृपणं तदभून्महत् दुःखोपहताचित्ताभिः समन्तादनुनादितम् । हष्ट्वाऽऽयोधनमत्युग्रं धर्मज्ञा सुवलात्मजा ततः सा पुण्डरीकाक्षमामंत्र्य पुरुषोत्तमम्। कुरुणां वैशसं स्ट्रा इदं वचनमन्नवीत् पश्येताः पुण्डरीकाक्ष स्तुषा मे निहतेश्वराः । प्रकीणकेशाः क्रोशन्तीः क्ररंरीरिव माधव अमुस्त्वभिसमागम्य स्मरंखो भर्तृजान् गुणान् । पृथगेवाभिधावंत्यः पुत्रान्भ्रातृन्पितृन्पतीन् वीरस्भिर्महाराज हतपुत्राभिराष्ट्रतम् । कचिच वीरपत्नीभिईतवीराभिरावृतम् शोभितं पुरुषव्याद्यैः कर्णभीष्माभिमन्युभिः। द्रोणद्रपदशाल्येश्च ज्वलद्भिरिव पावकैः काश्चनैः कवचैर्निष्कैर्मणिभिश्च महात्मनाम् । अङ्गदैईस्तकेयुरैः स्रिभेश्च समलंकृतम् वीरवाहाविसृष्टाभिः शक्तिभिः परिधैरपि।

था, वे दुःखसे व्याकुल होकर पृथ्वीमें लोटने लगीं। (११--१४)

मान से हैं। समान समान से हैं। उस समय नाथ रहित, रोती हुई, चेतना रहित, दुःखसे च्याक्रल, दुखित पांचाल और कीरवोंकी खियोंके शब्दसे वह युद्ध भूमि पूरित हो गई। उस युद्ध भूमिको देखकर धर्म जाननेवाली सुवल गान्धारी महात्मा श्रीकृष्णका वुलाकर ऐसे वचन बोली। हे कमल नेत्र कृष्ण ! हे माधव ! देखो हमारे बेटोंकी स्त्री विधवा होकर वाल खोले कुररीके समान रो रही हैं, ये अपने अपने पति-

योंके गुण सारण करके रो रही हैं, ये अपने अपने पति प्रत्र और पिताको दृंढ रही हैं। ये युद्धमूमिमें अनेक चीर माता और अनेक वीरोंकी स्त्री अपने अपने पुत्र और पतियोंको देख रो रही हैं।(१५---ं१०)

ये देखो पुरुषसिंह कर्ण, मीध्म, अभिमन्यु, द्रोचाणार्य, महाराज द्वपद और महाराज श्रल्य आदि वीर, जलती हुई अग्निके समान मरे हुवे पडे हैं। यह युद्धभूमिमें सोनेके कवच, निष्क्रमाण, वीरोंके बाजवन्द, अङ्गठी, माला,वीरों-

खड़ैश्च विविधेस्तीक्ष्णैः सशरैश्च शरासनैः 11 23 11 कव्यादसङ्केर्सदितैस्तिष्ठद्भिः सहितैः कचित्। कचिदाकीडमानैश्च दायानैश्चापरैः कचित् ॥ २४ ॥ एतदेवंविधं वीर सम्पर्यायोधनं विभो। पश्यमाना हि दह्यामि शोकेनाहं जनार्दन ॥ २५ ॥ पश्चालानां क्ररूणां च विनाशे मधुसूद्न। पत्रानामपि भूतानामहं वधमचिन्तयम् ॥ २६॥ तान्सुपर्णाञ्च गृधाञ्च कर्षयंत्यसुगुक्षिताः। विगृह्य चरणैर्ग्रघा भक्षयन्ति सहस्रशः ॥ २७॥ जयद्रथस्य कर्णस्य तथैव द्रोणभीष्मयोः। अभिमन्योर्विनाशं च कश्चिन्तयितुमहित ॥ २८॥ अवध्यकल्पान्निहतान् गतसत्वानचेतसः। गृधकङ्कवटइये नश्वसृगालाद् नीकृतान् 11 99 11 अमर्षवशमापन्नान् दुर्योधनवशे स्थितान्। पर्यमान्पुरुषव्याद्यात् संशान्तान्पावकानिव ॥ ३०॥ श्चामा ये पुरा सर्वे मृद्नि शयनानि च।

के हाथसे टूटे हुये सांगी, परिघ, खड़ अनेक प्रकारके वाणवान धनुष पहे

प्रश्न कर्म स्ट्रेस क्रिस कर्म स्ट्रेस कर्म स्ट्रेस कर्म स्ट्रेस कर्म स्ट्रेस क्रिस कहीं मांस खानेवाले पक्षी प्रसन्त होकर बैठे हैं, कहीं खेल रहे हैं और कहीं सुखसे सो रहे हैं। हे वीर! हे भगवन् ! हे जनादेन ! उनको देखकर मेरा हृदय श्रोक्से जला जाता है। इस पाञ्चाल और कुरुकुलके नाशसे हमें ऐसा जान पडता है, कि सब जगत्का नाश हो गया। देखो इन वीरोंके रुधिरमें भीगे श्रीरोंको सहस्रों गिद्ध आदि पक्षी

वीरका पेर खींचे लिये जाते हैं।(२४—२७)

जयद्रथ, कर्ण, भीष्म और अभिमन्यु आदि वीरोंके मृत्यु देखकर किसे शोच न होगा । जिनको कोई नहीं मार सका था, आज उनको चैतन्यरहित निरख-कर, मनुष्यके समान मरा हुआ देखकर कौवे, सियार और गिद्ध खा रहे हैं। ये सब बीर क्रोधके वशमें होकर दुर्योधनकी आज्ञासे युद्धमें मारे गये, ये पुरुषसिंह वीर इस समय जलती हुई अग्निके समान पृथ्वीमें पहे हैं। (२८-३०)

विपन्नास्तेऽच वसुधां विवृतामधिशेरते 11 38 11 बन्दिभिः सततं काले स्तुवद्भिरभिनन्दिताः। शिवानामशिवा घोराः श्रुण्वान्त विविधा गिरः॥३२॥ ये पुरा शेरते वीराः शयनेषु यशस्त्रिनः। चन्दनागुरुदिग्धाङ्गास्तेऽद्य पांसुषु दोर्ते 11 33 11 तेषामाभरणान्येते गृधगोमायुवायसाः । आक्षिपन्ति शिवा घोराः विनदंत्यः पुनः पुनः ॥३४॥ बाणान्विनिश्चितान्पीतान्निश्चिश्चान् विमला गदाः। युद्धाभिमानिनः सर्वे जीवन्त इव विभ्रति 11 39 11 सुरूपवर्णा बहवः ऋष्यादैरवघटिताः। ऋषभप्रतिरूपाश्च शेरते हरितस्रजः 11 35 11 अपरे प्रनरालिङ्गच गदाः परिघवाहवः। शेरतेश्भिमुखाः शुरा द्यिता इव योषितः बिभ्रतः कवचान्यन्ये विमलान्यायुधानि च। न धर्षयन्ति कव्यादा जीवन्तीति जनार्दन .क्रच्यादैः क्रष्यमाणानामपरेषां महात्मनाम् । शातकौरभ्यः स्रलश्चित्रा विप्रकीणीः समन्ततः॥३९॥

थे सो आज पृथ्वीमें मुह फैलाये पहें हैं, पहिले जो सदा माटोंके मुखसे स्तुति सुनकर प्रसन्न होते थे, वे आज अनेक प्रकारके मयानक सियारियोंके शब्द सुन रहे हैं। जो पहिले यशस्वी वीर शरीरमें चन्दन और अगर लगा-कर पलक्षपर सोते थे, सो आज पृलमें लोटते पृथ्वीमें पहे हैं। उनके भूपणोंको योर शब्द करते युद्धमें सियार और कींचे इधर उधर खींच रहे हैं, ये अमि-मानी वीर अब तक भी तेजवान खड़ग और निर्मल गदा इस प्रकार ले रहे हैं जैसे जीते हुए लिये रहते थे, अनेक सुन्दर वीरोंके हाथोंको मांस खानेवाले जन्तु इधर उधर लिये घूमते हैं, इस समय भी उनका तेज सूर्यके समान दिखाता है, कोई परिषके समान सुन्दर हाथवाले वीर गदाको छातीसे लगाये युद्धकी ओर मुख किये इस प्रकार सोते हैं, जैसे अपनी प्यारी खीके सङ्ग सोते थे। किसी वीर को कवच, विमल शख् धारण किये देख और उन्हें जीता जान कोई मांस खानेवाला जन्तु उनके पास

एते गोमायवो भीमा निहतानां यशाखिनाम्। कण्ठान्तरगतान्हारानाक्षिपन्ति सहस्रदाः सर्वेष्वपररात्रेषु या ननन्दन्त यन्दिनः। स्ततिभिश्च पराद्याभिरूपचारैश्च शिक्षिताः तानिमाः परिदेवन्ति दुःखार्ताः परमाङ्गनाः । कृपणं वृष्णिद्यार्द्छ दुःखद्योकार्दिता भृजम् ॥ ४२ ॥ रक्तोत्पलवनानीव विभानित रुचिराणि च। म़खानि परमस्त्रीणां परिद्युष्काणि केशच रुदिताद्विरता होता ध्यायंत्यः सपरिच्छदाः। कुरुस्त्रियोऽभिगच्छन्ति तेन तेनैव दुःखिताः ॥ ४४ ॥ एतान्यादिखवणीनि तपनीयनिभानि च। रोपरोदनताम्राणि वक्त्राणि क्ररुयोपिताम् ॥ ४५॥ इयामानां वरवर्णानां गौरीणामेकवाससाम् । द्यीधनवरस्त्रीणां पश्य वृन्दानि केशव ॥ ४६ ॥ आसामपरिपूर्णार्थं निशस्य परिदेवितम्। इतरेतरसंकन्दान्न विजानन्ति योपितः 11 89 11

वीरको मांसमक्षी वीर खिच रहे हैं और उनकी सोनेकी माला इघर उधर फैली जाती है। ये देखो, ये भयानक सियार महात्मा वीरोंके गलेसे हार निकालकर इधर उधर खींचे फिरते हैं। (३१-४०)

जो स्नी पहिले समयमें रात्रिके पिछले पहरमें भाटोंके ग्रुखसे स्तृति सुनकर जागती थी और जो अनेक प्जा और शिक्षांसे युक्त थी, वेही आज शोक और दु:खसे व्याकुल होकर वीर स्नीके समान रो रही हैं, हे केशव ! हे शृध्णिकुल-शार्द्ल! इन सुन्दर स्त्रियोंके सखते हुवे कोमल मुख इस समय लाल कमलके समान दीखते हैं, ये कुरुकुलकी स्त्री रोना वन्द करके अपने अपने पित्रोंके पास वैठी हैं, ये दुःख और कोधसे व्याकुल कौरवोंकी स्त्रियोंके मुख प्रातः कालके स्र्यसे सोना और तिबेके समान लाल होगये हैं। (४१-४५)

हे कृष्ण ! ये गोरे रङ्गवाली सोलह वर्षकी दुर्योधनकी उत्तम खियोंके अण्ड एक साडी पहिने दुःखसे व्याकुल हो रही हैं, इनका भयानक रोना सुनकर और एक द्सरीको पुकारते देखकर मेरा हृदय फटा जाता है। ये यहुत समय

एता दीघीमवीच्छ्वस्य विक्रुइय च विलप्य च। विस्पन्दमाना दु। खेन वीरा जहित जीवितम् ॥ ४८ ॥ यहयो दृष्ट्वा शारीराणि क्रोशन्ति विलपन्ति च। पाणिभिश्चापरा ब्रन्ति शिरांसि सृदुपाणयः ॥ ४९॥ शिरोभिः पतितैईस्तैः सर्वागैर्युथशः कृतैः। इतरेतरसम्प्रक्तराकीर्णा भाति मेदिनी विशिरस्कानथो कायान् हष्ट्रा ह्यताननिन्दितान् । मुश्चन्त्रनुगता नार्यो विदेहानि शिरांसि च शिरः कायेन सन्धाय प्रेक्षमाणा विचेतसः। अपर्यन्यो परं तत्र नेदमस्येति दुःखिताः ॥ ५२ ॥ वाहुरुचरणानन्यान् विशिखोन्मधितान्पृथक्। सन्दधस्योऽसुखाविष्ठा मूर्छन्त्येताः पुनः पुनः ॥ ५३ ॥ उत्कृत्य शिरसञ्चान्यान्विजग्धानमृगपक्षिभिः। दृष्ट्रा काश्चित्र जानान्ति भर्तृत् भरत योषितः॥ ५४ ॥ पाणिभिश्चापरा ब्रन्ति शिरांसि मधुसूद्न । प्रेक्ष्य भ्रातृन्पितृन्युत्रान्पतींश्च निहतान्परैः याहुभिश्व सर्वद्गेश्व शिरोभिश्व सञ्जण्डलैः।

तक रोकर अंचे सांस लेकर और दुःख-से च्याकुल होकर इस प्रकार पृथ्वीमें पडी हैं, मानों अभी मर जांयगी।(४६-४८)

कोई अपने पितयोंका शरीर देखकर रोति है, कोई कोमल हार्थोसे शिर पीट रही है। इस समय यह युद्धभूमि कटे हुए शिर, हाथ और शरीरोंसे पूर्ण दीखती है। ये देखों ये स्त्री शरीररहित शिर और शिररहित शरीरोंको देखकर मूर्चिछत हो रहीं हैं। कहीं कोई स्त्री दु।खसे च्याकुल होकर शरीरमें शिर लगाकर देखती है और कहती है कि यह शिर इनका नहीं है । कोई बाणें से कटे हुवे हाथ, पैर और जांघ मिलाकर दुःखसे न्याकुल होरहीं हैं । कोई कुरु-कुलकी स्त्री स्थार और पक्षियों से खाये हुवे शिर हाथमें लेकर अपने पितयोंको नहीं पहिचानती । (४९–५४)

हे मधुसद्दन ! कोई शशुओं के हाथसे मरे भाई, पुत्र और पितयों को पृथ्वी में पडा देख हाथों से शिर पीट रही हैं। इस समय यह रुधिर और मांसके की चड से भरी, कटे हुवे खड़्न के सहित, हाथ और क्रण्डल सहित शिरों से ऐसी

अगम्यकल्पा पृथिवी मांसशोणितकर्दमा 11 48 11 बभूव भरतश्रेष्ठ प्राणिभिर्गतजीवितै।। न दुःखेपूचिताः पूर्वं दुःखं गाहन्त्यनिन्दिताः॥ ५७ ॥ भातृभिः पतिभिः पुत्रैरुपाकीर्णा वसुन्धरा । युथानीव किशोरीणां सुकेशीनां जनार्दन 11 40 11 स्तुषाणां घृतराष्ट्रस्य परुय वृन्दान्यनेकदाः। इतो दु।खतरं किन्तु केशव प्रतिभाति मे 11 48 11 यदिमाः क्ववेते सर्वा रूपमुचावचं स्त्रियः। नुनमाचरितं पापं मया पूर्वेषु जन्मसु या पद्यापि हतान्तुत्रान पौत्रान् ञ्चातृंश्च माधव । एवमाती विलपती समाभाष्य जनादेनम् । गान्धारी पुत्रकोकार्ता ददर्श निहतं सुतम् ॥ ६१ ॥ [४८१]

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्यां संहितायां वैयासिक्यां खीपर्वाण खीविकापपर्वाण आयोधिनदेशीने पोडशोऽध्यायः॥ १६ ॥

वैश्वम्पायन उवाच–दुर्योधनं हतं दृष्ट्वा गान्धारी ज्ञोककर्शिता । सहसा न्यपतद्भूमौ छिन्नेव कद्ली वने 11 8 11

शोणित पूर्ण हो गई है कि जानने

अगम्यक्ति एं बभूव भरतश्रेष्ठ न दुःखेपृचिताः श्रातृभिः पतिः यथानीव किशोः स्नुषाणां घृतराष्ट् हतो दुःखतरं वि यदिमाः कुवेते नूनमाचरितं पा या पश्यापि हत एवमातां विलुप गान्धारी पुत्रशो हति श्रीमहामारते शक्साहस्यां भाग्य नहीं रही। (५५-५६) हे यहुकुलश्रेष्ठ! यह भूमि मरे हु शरीरोंसे मर गई है, ये निन्दारहितः दुःख मोगने योग्य नहीं थी, पर दुःख मोग रही हैं। यह युद्धभूमिः समय इन मरे हुए शरीरोंसे ऐसी प् शाष्ट्रके वेटोंकी थोडी अवस्थावाली अ सन्दर वालांवाली स्त्रियेंक अनेक इ इससे अधिक दुःख और क्या होगां हे यदुक्तल श्रेष्ठ ! यह भूमि मरे हुए श्वरीरोंसे भर गई है, ये निन्दारहित स्त्री दुःख भोगने योग्य नहीं थी, परन्तु दुःख भोग रही हैं। यह युद्धभूमि इस समय इन मरे हुए शरीरोंसे ऐसी पूर्ण होगई जैसे तारागणसे रात्रिमें आकाश पूर्ण होता है। इस समय महाराज छत-राष्ट्रके बेटोंकी थोडी अवस्थावाली और सुन्दर बालोंबाली स्त्रियोंके अनेक झंड इघर उधर घूमते फिरते हैं, मेरे लिये इससे अधिक दश्व और क्या होता ? तें

जो इन स्त्रियों के ऐसे रूप देखती हूं इससे निश्रय होता है कि मैंने पहिले जन्ममें महा अपराध किया है। (५७-६०)

हे कुष्ण ! मेरे सब बेटे और सब पोते मारे गये और इससे और अधिक दुःख क्या होगा ? श्रीकृष्णसे ऐसा कहकर गान्धारी रोने लगी और उसने मरे हुवे बेटेको देखा।(६१) [ ४८१ ]

खीपचेंमें सोलह अध्याय समास्। स्तीपर्वमें सतरह अध्याय।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! दुर्योधनको मरा हुआ देख-

श्र कांण्यं।

विकार प्राचित्र प्राच सा तु लब्ध्वा पुनः संज्ञां विकुद्य च विलप्य च। दुर्योधनमभिप्रेक्ष्य श्रयानं रुधिरोक्षितम् परिष्वज्य च गान्धारी कृपणं पर्यदेवयत् । हा हा पुत्रेति शोकार्ता विललापाक्रलेन्द्रिया सुग्हजञ्जविपुलं हारानिष्काविभाषितम्। वारिणा नेत्रजेनोरः सिश्चन्ती शोकतापिता समीपस्यं हृषीकेशमिदं वचनमत्रवीत्। उपस्थितेऽसिन्संग्रामे ज्ञातीनां संक्षये विभो मामयं पाह वार्ष्णेय प्राञ्जालिईएसत्तमः। अस्मिन् ज्ञातिसमुद्धें जयमम्बा ब्रवीत मे इत्युक्ते जानती सर्वेमहं खव्यसनागमम्। अञ्चवं पुरुषच्याघ्र यतो धर्मस्ततो जयः यथा च युध्यमानस्त्वं न वै मुह्यसि पुत्रक। ध्रुवं शस्त्रजितान् लोकान् प्राप्स्यस्यमरदत्प्रभो ॥ ८॥ इत्येवमञ्जवनपूर्वं नैनं शौचामि वै प्रभो। धृतराष्ट्रं तु शोचामि कृपणं हतवान्धवम्

सा तु लब्ध्य च दुर्योधनमि परिष्वचय च हा हा पुत्रेति सुगृहजन्जन्निः चारिणा नेत्र समीपस्यं हु। उपस्थितऽसि मामयं पाह असिन् ज्ञाति इत्युक्ते जान अन्नुवं पुरुषव यथा च युध्य ध्रुवं शस्त्रजित इत्येवमञ्जवन् ध्रुतं श्रुत्र कर गिर पडता है, भीगे हुए दुर्योधनको उठाकर हा हा पुत्र! कह कर गोने लगी। इस गान्धारीकी सब इन्द्री शोकसे व्य द्येत ह्रयको आसुओंसे मिगोती शोकसे व्याकुल होकर पास खडे श्रीकृष्णसे ऐसे वचन बोली।(१-४ हे कृष्ण! जब ये क्षत्रियोंका करनेवाला युद्ध होनेवाला था, तब राजोंमें श्रेष्ठ दुर्योधनने हाथ जो इस प्रकार पृथ्वीमें गिर पड़ी जैसे केले-का वृक्ष टूट कर गिर पडता है, फिर थोडे समयमें चैतन्य होकर रुधिरसे भीगे हुए दुर्योधनको उठाकर हा पुत्र! हा पुत्र ! कह कर रोने लगी । इस समय गान्धारीकी सब इन्द्री शोकसे न्याकुल हो रही थीं, फिर हार आदि भृषणोंसे युक्त हृदयको आसुओंसे भिगोती हुई शोकसे व्याकुल होकर पास खडे हुए श्रीकृष्णसे ऐसे वचन बोली।(१-४)

हे कृष्ण ! जब ये क्षत्रियोंका नाश करनेवाला युद्ध होनेवाला था, तब सब

अमर्षणं युधां श्रेष्टं कृतास्त्रं युद्धदुमेदम् । श्यानं वीरशयने पश्य माधव मे सुतम् 11 80 11 योऽयं सूर्घावसिक्तानामग्रे याति परन्तपः। सोऽयं पांसुषु शेतेऽच पर्य कालस्य पर्ययम् ॥ ११ ॥ ध्रवं दुर्योधनो वीरो गतिं सुलभतां गतः। तथा ह्यभिमुखः शेते शयने वीरसेविते 11 22 11 यं पुरा पर्युपासीना रमयन्ति वरस्त्रियः। तं वीरशयने सुप्तं रमयंत्यशिवाः शिवाः ॥ १३ ॥ यं पुरा पर्युपासीना रमयन्ति महीक्षितः। महीतलखं निहतं गृधास्तं पर्युपासते 11 88 11 यं पुरा व्यजनै रम्पैरुपवीजन्ति योषितः। तमच पक्षव्यजनैरुपवीजन्ति पक्षिणः 11 24 11 एष शेते महाबाहुर्वलवान सत्यविकमः। सिंहेनेव द्विपः संख्ये भीमसेनेन पातितः 11 88 11 पदय दुर्योधनं कृष्ण शयानं रुधिरोक्षितम्। निहतं भीमसेनेन गदां सम्मृज्य भारत 11 20 11

हे कृष्ण ! ये देखों महा वलवान् सब शस्त्र विद्या जाननेवाले महा क्रोधी वीर श्रेष्ठ दुर्योधन आज पृथ्वीमें सोते हैं। देखो समयकी गति कैसी कठिन है कि जो शञ्जनाशन दुर्योधन पहिले राजोंके आगे चलते थे, सो आज धृलमें लिपटे हुए पृथ्वीमें पडे हैं। हमें यह निश्रय होता है कि बीर दुर्योघन साधा-रण गतिको नहीं प्राप्त हुवे, ये अवस्य ही स्वर्ग लोकको गये, क्योंकि इस समय तक भी युद्धहीकी ओर मुख करके सोते हैं। जिस चीरके पास पहिले

वीर श्रव्यापर सोते हुए देख भयानक सियारी पास बैठी हैं। जिसके पास पहिले राजा लोग बैठते थे, आज उसही मरे हुए पृथ्वीमें पड़े दुर्योधनके पास गिद्ध बैठे हैं। पहिले समयमें उत्तम पह्वोंसे हवा की जाती थी, आज उस हीको कौने अपने पंखोंकी हवासे शीतल कर रहे हैं। ये महा बलवान् सत्य पराक्रमी महावाह दुर्योधनको युद्धमें भीमसेनने ऐसे मारा जैसे सिंह हाथींको मार डालता है। (१०-१६)

हे कृष्ण ! ये देखो वीर दुर्योधन मीमसेनक हाथसे मरकर गदा लिये

अक्षौहिणीर्महाबाहुर्दशचैकां च केशव। आनययः पुरा संख्ये सोऽनयानिधनं गतः एप दुर्योघनः शेते महेध्वासो महाबलः। शार्द्छ इव सिंहन भीमसेनेन पातितः 11 88 11 विदुरं द्यवमन्यैप पितरं चैव मन्दभाक्। वालो बृद्धावमानेन मन्दो मृत्युवशं गतः निःसपत्ना मही यस्य त्रयोदशसमाः स्थिता। स शेते निहतो भूमौ पुत्रो मे पृथिवीपतिः अपर्यं कृष्ण पृथिवीं धार्तराष्ट्रानुशासिताम् । पूर्णी हस्तिगवाश्वैश्च वाष्णीय न तु तचिरम् तामेवाच महावाहो पश्याम्यन्यानुशासिताम्। हीनां हस्तिगवाश्वेन किं नु जीवामि माधव ॥ २३॥ इदं कष्टतरं पद्य पुत्रस्यापि वधान्मम । यदिमाः पर्युपासन्ते हतान श्रुरान् रणे स्त्रियः ॥ २४ ॥ प्रकीर्णकेशां सुश्रोणीं दुर्योधनशुभाङ्गगाम्। रुक्मवेदीनिभां पर्य कुष्ण लक्ष्मणमातरम् ॥ २५ ॥ नृनमेषा पुरा वाला जीवमाने महीसुजे।

रुधिरमें भींगे पृथ्वीमें सोते हैं; देखो किसी दिन ग्यारह अक्षीहिणी सेना इनके सङ्घ थी सो आज मर कर पृथ्वीमें पडे हैं। जो महा धतुपधारी महा बलवान् दुर्योधन भीमसेनके हाथसे मर कर इस प्रकार पृथ्वीमें पडे हैं जैसे सिंहके डरसे शार्दूल । इस मूर्ख वालकने विदुर और महाबाहु धृतराष्ट्रका निरादर किया था, इससे इस अवस्थाको पहुंचा। जिसके वश्रमें शञ्चरहित पृथ्वी तेरह वर्ष तक रही थी, वही महाराज दुर्योधन आज पुछवीमें पडे हैं। (१७-२१)

₩ ਸ਼ිපපෙට සෙමෙම පමළුව සහම පමණුව පමණුව පමණුව පමණුව සහම පමණුව සහම පමණුව සහම පමණුව සහම පමණුව සහම පමණුව පමණුව පමණුව පමණ हे कृष्ण । थोडे ही दिन हुए कि हाथी, घोडे और गाडीसे मरी पृथ्वी राजा दुर्योधनकी आज्ञामें चलती थी, से। आज दाथी, घोडे और बलसे हीन होकर दूसरेकी आज्ञामें चलती है। अब हमें जीनेसे क्या सुख है। देखों अनेक स्त्रियां मरे हुए वीरके पास वैठी हुई रोरहीं हैं। ( २२-२४ )

हे कृष्ण ! ये देखो उत्तम बाल और पतली कमरवाली लक्ष्मणकी दुर्योधनको गोद्में लिये सोनेकी देवीके

भुजावाश्रिल रमते सुभुजस्य मनस्विनी ॥ २६ ॥ कथं तु ज्ञातधा नेदं हृद्यं मम दीर्घते। पश्यन्खा निहतं पुत्रं पौत्रेण सहितं रणे 11 20 11 पुत्रं रुधिरसंसिक्तसुपिजघत्यनिन्दिता। दुर्योधनं तु वामोरूः पाणिना परिमार्जती किं नु शोचित भतीरं पुत्रं चैषा मनस्विनी। तथा ह्यंबस्थिता भाति पुत्रं चाप्यभिवीक्ष्य सा॥२९॥ स्विज्ञरः पश्चकाखाभ्यामभिहत्यायतेक्षणा । पतत्युरसि वीरस्य क्षरुराजस्य माधव 11 30 11 पुण्डरीकनिभा भाति पुण्डरीकान्तरप्रभा। मुखं विमृज्य पुत्रस्य भर्तुश्चैव तपस्विनी 11 38 11 यदि सलागमाः सन्ति यदि वै श्रुतयस्तथा। ध्रुवं लोकानवांप्तोऽयं चपो वाहुवलार्जितान् ॥ ३२ ॥ [५१३]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां दैयासिक्यां खीपवीण खीविकापपवीण

दुर्योधनदर्शने सहदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

गान्धायुँगाच- पर्य माधव प्रज्ञानमे रातसंख्यान जितक्कमान्। गद्या भीमसेनेन भूयिष्ठं निहतान् रणे इदं दुः खतरं मेऽच यदिमा सुक्तमूर्धजाः।

के कि स्टूर्ण क थे, तब यह सुन्दरी उनके पास बैठ कर विलास करती थी । मैं अपने बेटे पोते-को मरा हुवा देखती हूं तो भी मेरे हृदयके सौ हुकड़े नहीं होते, ये देखो निन्दारहित लक्ष्मणकी माता अपने पुत्रका माथा संघती हैं और दुर्योधनको हाथसे पोछती हैं। ये इस समय अपने पति और पुत्रका सोच कर रही हैं। ये वहे नेत्रवाली रानी अपने दोनों हाथोंसे शिर पीटती है और दुर्योधनके

गिरी दूसरे कमलके समान दिखती है कभी अपने पुत्रको पूंछती है। यदि वेद और श्रुति सब सत्य है तो राजा दुर्योधनने अवश्यही अपने बाहु वलसे खर्गको जीत लिया।(२५-३२)[५१३] खीपर्वमें सतरह अध्याय समाक्ष ।

खीपवेंमें अठारह अध्याय। गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये देखो मीमसेनकी गदासे मरे हुवे परिश्रम रहित मेरे सौ वेटे पृथ्वीमें पडे हैं, इससे

स्वापाय १८]

हत्युत्रा रणे चालाः परिधावित से स्नुषाः ॥ २ ॥
प्राप्तावतलचारिण्यश्ररणे भूषणान्वितः ।
अापन्ना यत्रपुत्रान्तीमां किषराद्रां वसुन्धराम् ॥ ३ ॥
कृञ्लादुत्सारयन्ति स्म गृप्त्रमोमागुवायसान् ।
दुःलेनाता विघूणिन्त्यो मत्ता इव चरन्त्युत्त ॥ ४ ॥
एवाऽन्या त्वनवचाङ्गी करसंमितमध्यमा ।
घोरमागोधनं दृष्ट्वा निणतत्यतिद्वःखिता ॥ ५ ॥
धानृश्चान्याः पिनृश्चान्याः पुत्रांश्च निहतान् सृिव ।
दृष्ट्वा मे पार्थिवसुतामेनां लक्ष्मणमातरम् ॥ १ ॥
भानृश्चान्याः पिनृश्चान्याः पुत्रांश्च निहतान् सृिव ।
दृष्ट्वा परिपतन्त्येताः मगुद्ध सुमहासुजान् ॥ ७ ॥
मध्यमानां तु नारीणां चृद्धानां चापराजित ।
आकृत्वं हत्यन्युनां दासणे वैद्यसे गृणु ॥ ८ ॥
स्वस्य चन्धोः शिरः कृष्ण गृहित्वा पृत्रय तिष्ठतीम् ॥१०॥
अन्यां चापहृतं कायाचास्कुण्डलसुन्नस् ।
स्वस्य चन्धोः शिरः कृष्ण गृहित्वा पृत्रय तिष्ठतीम् ॥१०॥
स्वस्य चन्धोः शिरः कृष्ण गृहित्वा पृत्रय तिष्ठतीम् ॥१०॥
सेरे बेटेकी ही और अपने पित और
पृत्रोक्तं स्वा दृष्ट च च च छोले
ह्यर तथर दीत रही है। जो पहिले भूपण
पहिन कर छत पर टहलती थी, सो आज
रुधसे मीगी पृथ्वीमें लोट रही है, वे
सन बंढ करसे गिद्ध, सियार और कैवेको हटाती है और दुःखसे व्याकुल
होकर पागलके समान इधर छधर घूम
रही है । (१—४)
वे देखो दूसरी सुन्दर धरीखाली
ह्या हस युद्धभूमिको देखकर दु।खसे
व्याक्त होकर पृथ्वीमें पढी है।हे कृष्ण! कही ह्या अपने वन्धुका
होकर प्रथ्वीमें पढी है।हे कृष्ण!
ह्याक्त होकर पृथ्वीमें पढी है।हे कृष्ण!
होकर पागलके समान इधर छधर घूम
रही है । (१—४)
वे देखो दूसरी सुन्दर धरीखाली
ह्या हस युद्धभूमिको देखकर दु।खसे
व्याक्त होकर पृथ्वीमें पढी है।हे कृष्ण!
होकर पागलके समान इधर छधर घूम
रही है। (१—९)
हे कृष्ण! किहि ह्यी अपने वन्धुका

स्री इस युद्धभूमिको देखकर दुःखसे

रोरही है। (५-९)

पूर्वजातिकृतं पापं मन्ये नाल्पभिवानघ। एताभिर्निरवद्याभिर्मया चैवाल्पमेधया 11 88 11 यदिदं धर्मराजेन घातितं नो जनार्दन। न हि नाशोऽस्ति वार्ष्णेय कर्मणोः शुभपापयोः। प्रत्यग्रवयसः पर्य द्शेनीयक्रवाननाः कुलेषु जाता हीमला कुष्णपश्माक्षिमूर्धजाः ॥ १३॥ हंसगद्गदभाषिण्यो दुःखद्योकप्रमोहिताः। सारस्य इव वार्शासः पतिताः पर्य माधव फ़्रह्मपद्मप्रकाशानि प्रण्डरीकाक्षयोषिताम् । अनवद्यानि वक्त्राणि तापयत्येष रिक्सवान् ॥ १५॥ इंप्रेणां सम पुत्राणां वासुदेवावरोधनम् । मत्तमातङ्गदर्भाणां पश्यन्त्यच पृथग्जनाः शतचन्द्राणि चर्माणि ध्वजांश्चादित्यवर्चसः। रौक्माणि चैव वर्माणि निष्कानपि च काञ्चनान्॥१७॥ शीर्षत्राणानि चेतानि पुत्राणां मे महीतले । पश्य दीप्तानि गोविन्द पावकान्सुहुतानिव 11 28 11 एष दुःशासनः शेते शूरेणामित्रघातिना । पीतशोणितसर्वाङ्गो युधि भीमेन पातितः 11 99 11

कटा हुआ कुण्डल समेत शिर हाथमें लेकर रोरही है, हमें यह निश्रय होता है कि मैंने और सब स्त्रियोंने पहिले जन्ममें कोई महा पाप किया था, इसीसे धर्मराजने इस वंशका नाश किया। हे कृष्ण ! पहिले किये हुए पुण्य और पापका अवश्य ही फल होता है। ये देखो बढ़े बढ़े कुलमें उत्पन्न हुए काले बालोंवाली लजावती हंसके समान सुन्दर बोलोंवाली स्त्री शोक और दु:खसे व्याकुल सारसीके समान रोरही

## है।(१०-१४)

हे कृष्ण ! ये देखो इन स्त्रियों के ग्रुखको स्त्रें अपने किरणें से तपा रहा है। हे कृष्ण ! ये देखो महा अभिमान नी मतनाले हाथियों के समान बलवान मेरे बेटों के अनेक चन्द्रमायुक्त बाल स्र्यं के समान सोने के कवच सोने की माला पृथ्वीमें इस प्रकार पढ़े हैं जैसे जलती हुई अग्नि। हे कृष्ण ! ये देखो यञ्चनायन वीर मीमसेन के हाथसे मर कर पृथ्वीमें सोते हैं। मीमसेन ने

गद्या भीमसेनेन पर्य माधव मे सुतम्। च्तक्केशाननुस्मृत्य द्रौपदीनोदितेन च 11 20 11 उक्ता सनेन पात्राली सभायां चूतनिर्जिता। प्रियं चिकीर्षता भ्रातुः कर्णस्य च जनार्दन 11 28 11 सहैव सहदेवेन नक्कलेनार्जुनेन च। दासीभूताऽसि पाञ्चालि क्षिप्रं प्रविश नो गृहान्॥२२॥ ततोऽहस्रव्रदं कुष्ण तदा दुर्योधनं रूपम्। सत्युपारापरिक्षिप्तं शक्कानिं प्रज्ञ वर्जय 11 23 11 नियोधनं सुदुर्वेद्धिं मातुलं कलहाप्रियम्। क्षिपमेनं परित्यन्य पुत्र शाम्यस्य पाण्डवैः ॥ २४ ॥ न बुद्ध्यसे त्वं दुर्बुद्धे भीमसेनममर्पणम्। वाङ्नाराचैस्तुद्ंस्तीक्ष्णैकलकाभिरिव कुञ्जरम् ॥ २५ ॥ तानेवं रहसि कुद्धो वाक्शल्यानवधारयत्। उत्ससर्ज विषं तेषु सर्पी गोवृषभेष्विव 11 25 11 एष दुःशासनः शेते विक्षिप्य विपुर्ली भुजौ। निहतो भीमसेनेन सिंहेनेव महागजः 11 29 11

इनके सब ग्रारिका रुधिर पी लिया, भीमसेनने इसे ज्येमें जीती हुई द्रौपदी के वचनसे मार डाला ! (१५-२०)

हे कृष्ण । इसने कर्ण और दुयों-धनको प्रसन्न करनेके लिये छुवेमें जीती हुई द्रीपदीसे कहा था की, हे पाश्चाली! तू नक्कल, सहदेन, और अर्जुनके सहित हमारी दासी होगई। अब हमारे घरमें जाकर दासीके काम कर। हे कृष्ण ! मैंने उस ही समय राजा दुर्योधनसे कहा था कि, हे पुत्र ! इस मृत्यु कि फांसमें पढ़े हुवे लडाईके प्यारे दुर्नुद्धि अपने मामा शक्कनीको त्याग कर पाण्डवोंसे सिन्ध कर ले, अरे दुर्बुद्धे ! तू क्रोधी मीमसेनको नहीं जानता, जैसे कोई मसाल जलाकर हाथीको क्रोधित करता है ऐसे ही तू अपने बचन रूपी तेज बाणोंसे मीमसेनको क्रोध दिलाता है। मैंने एक बार क्रोध करके अपने प्रुत्रोंको ऐसे ही समझाया था, परन्तु उन्होंने न माना, इसीसे पाण्डवोंने उन्हें इस प्रकार नष्ट कर दिया जैसे विषेला सांप अपने विपसे बैलोंका नाश करता है, ये दुःशा-श्चन अपने बढे बढे हाथ फैलाये बलवान इस प्रकार प्रथ्वीमें पढे हैं जैसे सिंहसे मर कर हाथी, महा कोधी

11 7 11

अत्यर्थमकरोद्रौद्रं भीमसेनोऽत्यमर्षणः।

दुःशासनस्य यत्कुद्धोऽपिवच्छोणितमाहवे ॥ २८ ॥ [५४१]

इति श्रीमहाभारते० स्त्रीपर्वणि स्त्रीविलापपर्वणि गांधारीवाक्ये अष्टादशोऽध्याय: ॥ १८ ॥

गान्धार्युवाच— एष माधव पुत्रो मे विकर्णः प्राज्ञसम्मतः।

भूमौ विनिहतः शेते भीमेन शतधाकृतः 11 8 11

गजमध्ये हतः शेते विकर्णी मधुसूदन ।

नीलमेघपरिक्षिप्तः शरदीव निशाकरः

अस्य चापग्रहेणैव पाणिः कृतिकणो महान् ।

कथंचिच्छियते गृधैरत्तुकामैस्तलत्रवान् 11311

अस्य भार्योऽऽमिषप्रेप्सून् गृधकाकांस्तपस्तिनी।

वारयत्यनिशं वाला न च शक्नोति माधव 11811 युवा बृन्दारकः शूरो विकर्णः पुरुषर्षभ ।

सुलोषितः सुलाईश्च शेते पांसुषु माधव 11911

कर्णिनालीकनाराचैभित्रममीणमाहवे।

अद्यापि न जहात्येनं लक्ष्मीर्भरतसत्तमम् 11 \$ 11

एष संग्रामशूरेण प्रतिज्ञां पालियध्यता ।

दुर्मुखोऽभिमुखः शेते हतोऽरिगणहा रणे 11011

भीमसेन ये महा घोर कर्म किया जो द्राशासनका रुधिर पिया। (२१-२८) स्रीपर्वमें भटारह अध्याय समाप्त । (५४१)

स्त्रीपर्वमें उनीस अध्याय ।

गान्धारी बोली हे कृष्ण ! ये देखो मेरे पुत्र महापण्डित विकर्ण भीमसेनके वाणोंसे सौ इकडे हुए पृथ्वीमें पडे

में प्राप्त के मान्य कि कि कार्य कि का हे मधुद्धदन ! ये हाथियोंके झण्डमें पडे हुए विकर्ण ऐसे शोभित होरहे हैं, जैसे गरदकालके मेघोंके बीचमें चन्द्र-मा, ये देखो इसके धनुषाँको

हाथके मांस खानेके लिये गिद्ध काट रहे हैं। हे कृष्ण ! इसकी तपिस्त्रनी स्तीं मांस खानेवाले गिद्धोंको बहुत कष्टसे हटाती है, परन्तु हटा नहीं सकती। हे कृष्ण ! जो विकर्ण सुखसे सोने योग्य था, सो आज धृलमें लपटा हुआ पृथ्वी में पड़ा है, इसके सब मर्भस्थान बाणोंसे कट गये हैं, तौभी तेज नष्ट नहीं ह-आ। (२-६)

हे कृष्ण ! ये शत्रुनाशन दुर्भुख युद्धकी ओर मुख किये प्रतिज्ञापालक भीमसेनके हाथसे मरे हुए पडे हैं, उन-

तस्येतद्वदनं कृष्ण श्वापदैरर्धभक्षितम्। विभाखभ्यधिकं तात सप्तम्यामिव चन्द्रमाः श्रारस्य हि रणे कृष्ण पश्याननमथेदशम्। स कथं निहतोऽसित्रैः पांसून् ग्रसति मे सुतः ॥ ९॥ यस्याहवमुखे सौम्य स्थाता नैवोपपद्यते। स कथं दुर्मुखोऽमित्रैईतो विव्यलोकजित् 110911 चित्रसेनं हतं भूमौ शयानं मधुसुद्न। धार्त्तराष्ट्रमिमं पर्य प्रतिमानं धनुष्मताम् 11 88 11 तं चित्रमाल्याभरणं युवत्यः शोककर्षिताः। कव्याद्सङ्गैः सहिता स्ट्लः पर्युपासते 11 88 11 स्त्रीणां रुदितनिर्घोषः श्वापदानां च गर्जितम्। चित्ररूपियं कृष्ण विचित्रं प्रतिभाति मे 11 23 11 युवा वृन्दारको नित्यं प्रवरस्त्रीनिषेवितः। विविंशतिरसौ शेते ध्वस्तः पांसुषु माधव 1 88 11 शरसंकत्तवमीणं वीरं विशसने हतम्। परिवार्यासते गुष्टाः पश्य कृष्ण विविंशतिम् ॥ १५॥ प्रविद्य समरे शुरः पाण्डवानामनीकिनीम्।

का आधा मुख सियार खा गये हैं, तो भी वह ऐसा दीखता है, जैसे सप्तमीका चन्द्रमा, इस वीरका मुख अभीतक शोमासे नष्ट नहीं हुआ, तो भी न जाने यह शत्रुओंके हाथसे मरकर घूलमें क्यों पडा है ? जिस वीरके आगे युद्धमें कोई भी वीर खडान हो सक्ता था, जो अपने बलसे स्वर्गको भी जीत सकता था, वह दुर्मुख शृञ्जोंके हाथसे कैसे मारा गया ? (७-१०)

हे कुंच्ण ! जगत्में बीर जिस धनुष-धारीकी उपमा देते थे, वह

बेटा चित्रसेन आज मरकर पृथ्वीमें सोता है। उस विचित्र मालाधारीके पास मांस खानेवाले जन्तओं के सहित खडी हुई सुन्दर स्त्रियोंके रोनिसे और मांस खानेवाले जन्तुओं के शब्दसे यह युद्ध-भूमि इस समय विचित्रं दीखती है। (११-- १३)

हे कृष्ण ! ये अपनी स्त्रियोंके बीचमें पडे कटे तरुण विधिशति धुल्में सोते हैं। इस बाणोंसे कटे हुए बीरके पास सहस्रों गिद्ध वैठे हैं, जिसने पाण्डवोंकी

recebearanderecebearanderecebearanderecerocraces and services and services and a services and services are services and services are se

स वीरशायने शेते परः सत्प्रह्योचिते 11 28 11 सितोपपन्नं सुनसं सुञ्जु ताराधिपोपमम् । अतीव शुभ्रं वदनं कृष्ण पर्य विविंशतेः ॥ १७॥ एनं हि पर्युपासन्ते बहुधा वरयोषितः। क्रीडन्तमिव गंधर्वं देवकन्याः सहस्रशः 11 38 11 हन्तारं परसैन्यानां शूरं समितिशोभनम्। निबईणममित्राणां दुःसहं विषहेत कः 11 28 11 दुःसहस्यैतदाभाति शरीरं संवृतं शरैः। गिरिरात्मगतैः फुल्लैः क्रणिंकारैरिवाचितः ज्ञातकौरुभ्या स्रजा भाति कवचेन च भाखता। अग्निनेव गिरिः श्वेतो गतासुरपि दुःसह ॥ २१ ॥ [५६२] इतिश्रीमहाभारते स्रोपर्वाण स्त्रीविलापपर्वाण गांघारीवाक्षे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

गात्थार्धुवाच— अध्यर्धगुणमाहुर्यं बले शौर्ये च केशव ।

पित्रा त्वया च दाशाई हमं सिंहमिवोत्कटम् ॥१॥

यो बिभेद चसूमेको मम पुत्रस्य दुर्भिदाम् ।

स भूत्वा ऋत्युरन्येषां खयं सृत्युवशं गतः ॥२॥

तस्योपलक्षये कृष्ण काष्णेरमिततेलसः ।

आज महात्माके योग्य शय्यापर सोता
है, इसका इंसता हुआ सुन्दर नाक और
सुन्दर मोंहनाला मुख चन्द्रमाके समान
दीख रहा है, इसकी स्त्री इसके पास
ऐसी वैठी है, जैसे कीडा करते हुए
गन्धनोंके पास देवतोंकी सहस्रों कन्या।
ये देखो शञ्जओंकी सेनाके नाश करनेवाले
महावीर दु: सहका श्रीर लगे हुए वाणोंसे ऐसा दीखता है, जैसे फले हुए
कचनारके इक्षोंसे पर्वत, सोनेकी माला
और चमकते हुए कवचसे इसकी शोभा
ऐसी दीखती है, जैसे जलती हुई अग्नि-

के सिंहत सफेद पर्वत की । (१४-२१) चीवर्वमें उन्नीस अध्याय समाछ। [५६२.] स्त्रीपर्वमें वीस अध्याय।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! जिसको जगत्में मनुष्य बल और तेज में आपसे छोटा कहते थे, जो सिंहके समान बल-वान था, उस अकेलेने दुर्योधनके मया-नक चक्रव्यूहको तोड दिया था, सो अमिमन्यु चल्लाओंके लिये मृत्यु होकर आप मर गये। (१-२)

हे कृष्ण ! उस महातेजस्वी अर्जुन-पुत्रका तेज मरनेपर मी अभीतक शान्त

काश्र सहामात ।

क्षित्र क्षेत्र स्वाप्त स्वाप ा १२ ॥ ॥ १३॥ 11 88 11 आर्यामार्ये सुभद्रां त्विममांश्च त्रिद्शोपमान्॥ १५॥ तस्य शोणितदिग्धान्वै कैशानुचम्य पाणिना ॥ १६॥ 11 60 11 11 86 11 11 99 11 क्यं तु पाण्डवानां च पञ्चालानां तु पर्यताम् ॥ २० ॥

उत्तरा पूछती है कि तुम अर्जुनके वेटे और साक्षात् श्रीकृष्णके भानजे थे, सो युद्धमें कैसे मारे गये ? पाप कर्म करने-वाले कृपाचार्य, कर्ण, जयद्रथ, द्रोणा-चार्य और अध्वत्थामाको धिकार है. जिन्होंने मुझे विधवा कर दिया। जिस समय उन सबने अकेले वालक तुमको मिलकर मारा था, उनका मन कैसा होगया था ? पाश्चाल और पाण्डवों के देखते देखते तुम्हे सनाथ होनेपर भी

प्रथाय २० ] ११ खीयर्ष । ७००

प्रभाव २० ] ११ खीयर्ष । ७००

प्रभाव २० ] इप्ता वहाभिराकृत्वे निह्नते त्वां पिता तव ॥ २१ ॥ विरः पुरुषशार्षृष्ठः कणं जीवति पाण्डवः । न राज्यलामो विग्रुलः काञ्जाणां च पराभवः ॥ २२ ॥ प्रीतिं धास्यति पार्थोनां त्वामृते पुष्करेक्षण । तव श्रस्त्रजिताँ छोकान् घमेण च दमेन च ॥ २३ ॥ क्षिममन्वाणीमध्यामि तच्च मां प्रतिपालय । पुर्मेषु पुनरप्राप्ते काले भवति केनाचित्त ॥ २४ ॥ यदहं त्वां रणे दृष्टा हतं जीवामि दुर्मेणा । कामिदानीं नरच्याच स्वस्त्रणा सिन्नया गिरा ॥२५ ॥ पितृलोके समेत्यान्यां मामिवामन्त्रयिष्यसि ॥ २६ ॥ परमेण च रूपेण गिरा च सिनतपूर्वया । पप्तावानिह संवाचो विहित्तत्ते मया सह ॥ २८ ॥ परमेण च रूपेण गिरा च सिनतपूर्वया । पप्तावानिह संवाचो विहित्तत्ते मया सह ॥ २८ ॥ परमासान्त् सप्तमे मासि त्वं वीर निचनं गता । इत्युक्तवचनामेतामपकर्षत्ति दुःखिताम् ॥ २९ ॥ परमासान्त्र सप्तमे मासि त्वं वीर निचनं गता । इत्युक्तवचनामेतामपकर्षत्ति दुःखिताम् ॥ २९ ॥ उत्तरां मोघसङ्करणां मत्त्यराजकुलक्तियः ।

कैसे मारहाला १ तुमको मरा हुआ देख स्वर्गे मरस्यराजकुलक्तियः ।

कैसे मारहाला १ तुमको मरा हुआ पोन्ति विह्नतः स्वर्गे मरोगी वाणीसे मेरे समान्त्र विद्वा पाण्डव विजय और राज्य पान्तर मेरी शि वाणीसे भेरे समान्त्र पान्तर मेरी प्रमुत्व । केवल पान्तर मेरी विद्वा पाण्डव विजय और राज्य पान्तर मेरी वाणीसे अपस्ता कर्म करो गिर वाणीसे अपस्ता करात्रे स्वर्गे मोरी वाणीसे अपस्ता करात्रे स्वर्गे मोरी वाणीसे स्वर्गे मार्ते वाणीसे अपस्ता करात्रे सहीरा मेरी वाणीसे स्वर्गे मोरी वाणीसे सेरे समान्त्र पान्तर मेरी जित्रे सुम्हासा संग क्षा व्यव्य स्वर्गे करोगे । तुम अपने वृग्य सुम्हामा स्वर्ग विद्वार स्वर्गे स्वर्गे स्वर्गे स्वर्गे सुम्हासा संग लिखा था, सारवे महीनेमें तुम सर्ते हु युद्धे मार हुवा देखकर भीं जी- व्याक्ति ऐसे वचन सुनकर ये विराट-व्याक्ति होत्रे सुर्गे स्वर्गे सुम्हासा संग हित्रे वुम स्वर्गे मेरी वाणीसे सेरे स्वर्गे सुनकर ये विराट-व्याक्ति स्वर्गे सेरे वचन सुनकर ये विराट-व्याक्ति सेरे वचन सुनकर ये विराट-व्याक्ति सुन्तर स्वर्गे सेरे वचन सुनकर ये विराट-व्याक्ति स्वर्गे सेरे स्वर्गे सुनकर ये विराट-व्याक्ति सुन्तर स्वर्गे स्वर्गे सुनकर वे विराट-व्याक्ति सुन्तर सुनकर स्वर्गे सुनकर सुनकर ये विराट-व्याक्ति सुन्तर सुनकर सुनकर सुनकर सुनकर सुनकर स

<del>233333333333333333333333333333333333</del> उत्तरामपकृष्यैनामातीमार्ततराः खयम् विराटं निहतं दट्टा क्रोशन्ति विलपन्ति च। द्रोणास्त्रशरसंकृतं शयानं रुधिरोक्षितम् विरादं वितुदन्त्येते गृधगोमायुवायसाः। वित्रुचमानं विह्नगैर्विराटमसितेक्षणाः न शक्तुवन्ति विहगान्निवारियतुमातुराः। आसामातपतप्तानामायासेन च योषिताम अमेण च विवर्णानां वक्त्राणां विद्वतं वपुः। उत्तरं चाभिमन्युं च काम्योजं च सुदक्षिणम्॥ ३४ ॥ शिशूनेतान् इतान्पर्य लक्ष्मणं च सुदर्शनम् । आयोधनिश्रोमध्ये शयानं पर्य माधव । ३५॥ [५९७]

eeeeeeeeeeeeeeeeeeeee

इति श्रीमहाभारते० स्त्रीपर्वणि स्त्रीविरुापपर्वाणे गांघारीवास्ये विश्वतितमोऽध्याय: ॥ २० ॥

गान्धार्युवाच - एव वैकर्तनः द्येते महेच्वासो महारथः। ज्वलितानलवत्संख्ये संशांतः पार्धतेजसा पद्य वैकर्तनं कर्ण निहत्यातिरथात बहुत्। शौणितौघपरीताइं शयानं पतितं सुवि अमर्षी दीर्घरोपश्च महेब्वासो महावलः। रणे विनिहतः शेते शूरो गाण्डीवधन्दना

इलकी स्त्री उन्हें पकडती हैं, फिर आप ही विराटको रुधिरमें भीगे और दोणा-चार्यके बाणसे कटे पृथ्वीमें पढे देख वे आप ही रोती हैं, ये सियार, कीवे और गिद्ध उनका मांस खारहे हैं। ये उनकी स्त्री मांस खानेवालोंको हटा नहीं सकती। और ये सब रानी घाम और परिश्रमसे व्याकुल होरही हैं इनके मुख द्ध कर पीले होगये हैं। हे कृष्ण! ये उत्तरा अभिमन्यु, काम्बोजदेशी सदक्षिण लक्ष्मण और सदर्शन आदि बालक मरे

पढे हैं। ( २९-३५ ) [५९७] खीपर्वमें वीस अध्याय समाप्त । स्रीपर्वमें इकीस अध्याय ।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये दि-कर्तन प्रत्र महा घतुषधारी महारथ कर्ण जलती हुई अग्निके समान अर्जनके ही वाणरूपी जलसे शान्त होकर पढ़े, उन्होंने अनेक महारथोंको युद्धमें भारा था, सो आज ये रुधिरमें भीगकर युद्धमें मरे पडे हैं। ये महा क्रोधी महा धतुप-

पंस्त पाण्डवसंत्रासान्मम पुत्रा महारथाः।
प्रायुध्यन्त पुरस्कृत्य मातङ्गा ह्व यूथपम् ॥ ४॥
शाद्रुष्यन्त पुरस्कृत्य मातङ्गा ह्व यूथपम् ॥ ४॥
शाद्रुष्यन्त पुरस्कृत्य मातङ्गा ह्व यूथपम् ॥ ४॥
शाद्रुष्यन्त पुरस्कृत्य मातङ्गा ह्व यूथपम् ॥ ४॥
समेताः पुरुष्ट्या निहतं श्रुसाह्वे।
प्रकीणिमूर्षजाः पत्न्यो रुद्रत्यः पर्युपासते ॥ ६॥
सक्तिणीमूर्षजाः पत्न्यो रुद्रत्यः पर्युपासते ॥ ६॥
उद्विप्तः सततं यसाद्धमराजो युधिष्ठिरः।
त्र्याद्यसमा निद्रां चिन्तयन्नाध्यगच्छत ॥ ७॥
अनाधृष्यः पर्रेपुद्धे राद्यभिम्यवानिव ।
युगान्ताप्तिरिवार्चिष्मान् हिमवानिव निश्चलः ॥ ८॥
स मृत्वा शरणं वीरो धार्तराष्ट्रस्य माषव ।
भूमो विनहतः शेते वातभग्न हव हुमः ॥ ९॥
स मृत्वा शरणं वीरो धार्तराष्ट्रस्य मातरम्।
लालप्यमानां करुणं रुद्रतीं पतितां मुवि ॥ १०॥
अवाधिशापोऽनुगतो धुवं त्वां यद्यस्वक्रमिदं धरित्री।
ततः शरेणापहतं शिरस्ते धन्त्रयेनाहवशोभिना युघि॥ ११॥
हा हा धिगेषा पतिता विसङ्गा समीक्ष्य जाम्वृतद्यद्वस्त्रसम्।
सरकर पृथ्वीमें सोते हैं। जिस कर्णके
आत्रयसे हमारे महारथ पुत्रोने पाण्डवोंसे इस प्रकार युद्ध किया था, जैसे
हाथिगांका झण्ड अपने राजाको आगे
करके छदता है, उस ही कर्णको अर्छवांद्रिक्तो । अथवा सत्वाला हाथी
हार्थोको । (१-६)
जिस कर्णके भयसे सदा धर्मराज
सुधिष्ठिर वस्त्व विस्ते थे, जिसके हस्ते
सुधिष्ठे रुप्ति तुम्हारे रुप्ताने स्वर्ध प्रकृति सुद्रा सुद्र्य सुद्र्य सुद्र्य सुवर्धे तुम्हारे रुप्ताने प्रकृति सुवरे सुव

था, जो जलती हुई प्रलय कालकी अ-विके समान तेजस्वी इन्द्रके समान वीर और हिमाचल पर्वतके समान स्थिर था, सो वीर कर्ण धतराष्ट्र पुत्र दुर्योधनको शरण देकर आज मर कर, इस प्रकार पृथ्वीमें पडे हैं; जैसे वायुसे टूटा हुआ वृक्ष, ये देखो वृषसेनकी मा कर्णकी स्त्री पृथ्वीमें पड़ी हुई रोरही है और कहती है, कि तुम्हारे गुरुने जो शाप दिया था इसहीसे पृथ्वीने तुम्हारे रथका पहिया पकड लिया, उसही समय वीर अर्जुनने

कर्णं महावाहुमदीनसत्वं सुवेणमाता रुदती भृशाती ॥ १२ ॥ अल्पावशेषोऽपि कृतो महात्मा शरिभक्षेः परिभक्षयद्भः । अल्पावशेषोऽपि कृतो महात्मा शरिभक्षेः परिभक्षयद्भः । द्रष्टुं न नः प्रीतिकरः शशीव कृष्णस्य पक्षस्य चतुर्दशाहे॥१३॥ सा वर्तमाना पतिता पृथिन्यासुत्थाय दीना पुनरेव चैषा। कर्णस्य वक्त्रं परिजिन्नमाणा रोक्ष्यते पुत्रवधाभितसा॥१४॥ [६११]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्यां स्त्रीपर्वणि स्त्रीविरूपपर्वणि कर्णदर्शनो नामैकविदातितमोऽध्यायः॥ २१ ॥

गान्वार्युवाच आवन्त्यं भीमसेनेन भक्षयन्ति निपातितम् ।
गृथ्रगोमायवः ग्रूरं बहुवन्धुमवन्धुवत् ॥१॥
तं पर्य कदनं कृत्वा ग्रूराणां मधुसूदन ।
श्वायानं वीरशयने रुषिरेण समुक्षितम् ॥२॥
तं स्गालाश्च कङ्काश्च कव्यादाश्च पृथिग्वधाः ।
तेन तेन विकर्षन्ति पर्य कालस्य पर्ययम् ॥३॥
श्वायानं वीरशयने ग्रूरमाकन्दकारिणम् ।
आवन्त्यमभितो नार्यो रुद्त्यः पर्युपासते ॥४॥
प्रातिपेयं महेष्वासं हतं भन्नेन वाह्निकम्।

ये सुषेणकी माता महापराक्रमी
महावीर कर्णको सोनेका कवच पहिने
पृथ्वीमें पहे देख मूच्छी खाकर गिर
पडी है। देखो मांस खानेवालोंने महातमा कर्णका शरीर थोडा ही छोडा है,
इस समय ये ऐसे भयानक दीखते हैं,
जैसे कृष्णपक्षका चन्द्रमा। यह उनकी
स्त्री उठकर और कर्णका सुख देखकर
रोती है और अपने पुत्रके शोकसे च्याकुल होगई है। (१२-१४) [६११]

स्त्री पर्वमें बाईस सध्याय।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये देखो

आवन्ती नगरीके मरे हुने राजाको गिद्ध और सियार खारहे हैं। जगत्में इनके अनेक बन्धु थे, परन्तु इस समय बन्धु-रहित मजुष्यके समान मीमसेनके हाथ-से मोरे गये, इस नीरने अनेक नीरोंको युद्धमें मारा था, सो आज आप मर कर और रुधिरमें मीगकर नीर शय्यापर सोते हैं। आज उन्हें ही मांस खानेवाले सियार कीने आदि पक्षी इधर उधर खींचे फिरते हैं। समय बहा कठोर है, आज इस ही नीरकी स्त्री इसके चारों ओर बैठी रोरही है। (१-४)

हे कृष्ण ! ये देखो महा धनुषधारी

996666666666666666 प्रसुप्तमिव शाद्रेलं पद्य कृष्ण मनाविनम् || & || अतीवमुखवर्णोऽस्य निहतस्यापि शोभते। सोमस्येवाभिपूर्णस्य पौर्णमास्यां समुद्यतः 11 6 11 पुत्रशोकाभितसेन प्रतिज्ञां चाभिरक्षता । पाकशासनिना संख्ये वार्धक्षत्रिर्निपातितः 1101 एकाद्राचसूर्भित्वा रक्ष्यमाणं महात्मभिः। सत्यं चिकीर्षता पर्य हतमेनं जयद्रथम् 11611 सिन्धुसौवरिभर्तारं दुर्पपूर्णं मनस्विनम्। भक्षयन्ति शिवा गृश्रा जनाद्नेन जयद्रथम् 11911 संरक्ष्यमाणं भार्याभिरतुरक्ताभिरच्युत। भीषयन्त्यो विकर्षन्ति गहनं निम्नमन्तिकातः ॥ १०॥ तमेताः पर्युपासन्ते रक्ष्यमाणं महाभुजम् । सिन्धुसौवीरभर्तारं काम्वोजयवनस्त्रियः 11 88 11 यदा कृष्णामुपादाय पाद्रवत्केकयैः सह। तदैव वध्यः पाण्डूनां जनादेन जयद्रथः दुःशलां मानयद्भिस्तु तदा मुक्तो जयद्रथः। कथमद्यनतां कृष्ण मानयन्ति साते पुनः सैषा मम सुता बाला विलपन्ती च दुःखिता।

यग्नसी बाह्निक समान गणसे मरे उनके मरनेपर देखा देखा देखा । देखा । प्रतिज्ञा पालक अ जयद्रथ पडे हुने हैं रक्षा करने परभा अ कर सत्यपालन क था, ये महायग्नस्थ उन्हर्स स्थालन क यग्रखी बाह्निक सोते हुए शार्द्छके समान गणसे मरे हुवे पृथ्वीमें पडे हैं। उनके मरनेपर भी मुख ऐसा सुन्दर दीखता है जैसे पूर्णमासीका चन्द्रमा। हे कृष्ण ! देखो पुत्रके शोकसे व्याक्तल प्रतिज्ञा पालक अर्जुनके हाथसे मरे हुवे जयद्रथ पडे हुने हैं। महात्मा द्रोणाचार्यके रक्षा करने परभी अक्षोहिणीका व्युह तोड कर सत्यपालन करनेके लिये इन्हें मारा था, ये महायशस्त्री महाअभिमानी ज

आज उन्हेंही सियार और गिद्ध खारहे हैं। यद्यपि इनकी भक्त स्त्री उनकी रक्षा कर रहीं हैं तौ भी इनको डराकर गिद्ध और सियार उन्हें खींच कर बनमें ले जाना चाहते हैं। परन्तु काम्बोज बन देशकी स्त्री उनकी रक्षा कर रहीं हैं। जिस समय कैकेयदेशके क्षत्रियोंके समेत द्रौपदीको जयद्रथ ले भागे थे, उसी समय पाण्डव उन्हें मार डालते। परन्तु उस समय उन्होंने दु।शलाका मान रखनेके लिये

आत्मना हन्ति चात्मानमाकोशन्ती च पाण्डवान्॥१४॥ किं नु दुःखतरं कृष्ण परं मम भविष्यति। यत्सता विधवा बाला स्तुषाश्च निहतेश्वरा ॥ १५॥ हा हा घिरदु:शलां पश्य वीतशोकभयामिव । शिरो भर्तुरनासाच धावमानामितस्ततः 11 23 11 वारयामास यः सर्वान्याण्डवान्युत्रगृद्धिनः। स हत्वा विप्रलाः सेनाः खयं मृत्युवदां गतः ॥ १७ ॥ तं मत्तिव मातङ्गं वीरं परमदुर्जयम् । परिवार्थ रुदन्त्येताः स्त्रियश्चन्द्रोपमाननाः ॥ १८ ॥ [६२५]

इति श्रीमहाभारते० स्तीपर्वणि स्तीविकापपर्वणि गांघारीवाक्ये द्वाविंशोऽध्याय: ॥ २२ ॥

गान्धार्ष्रवाच एष दाल्यो हतः होते साक्षान्नकुलमातुलः। धर्मज्ञेन इतस्तात धर्मराजेन संयुगे यस्तवया स्पर्धते नित्यं सर्वत्र पुरुषर्भभ । स एष निहतः शेते मद्रराजो महाबलः 1171 येन संगृह्णता तात रथमाधिरथेर्युधि ।

आज दुःशलाको क्यों बिसरा दिया । आज वही हमारी पुत्री दुःशका अपने पतिको मरा हुआ देख पाण्डचोंको गाली देती है, अपना शिर और छाती पीटती है और रोती है। (५-१४)

मान्धाः प्राच्याः प्राचः प्राच्याः प्राच्याः प्राच्याः प्राच्याः प्राच्याः प्राच्याः हे कृष्ण ! इससे अधिक मेरे लिये और क्या दुःख होगा जो मेरी पुत्री और वेटोंकी वह विधवा होकर रो रही हैं । ये देखो दुःशला अपने पतिका शिर न पाकर शोक और भयसे रहित मत-ष्यके समान चारों ओर दौडती है। अकेले जयद्रथने अभिमन्युकी रक्षा कर-नेके लिये आते हुवे सब पाण्डवेंकि। रोक दिया था, जिसने पाण्डवोंकी बहुत

सेनाका नाश कर दिया था, सोई जय-द्रथ आज मरे हुए पडे हैं उस महा योद्धा वीरके चारों ओर रोती हुई चन्द्र-माके समान मुखवाली स्त्री इस प्रकार बैठी हैं जैसे मतवाले हाथीके पास हथिनी । (१५-१८) [६२९]

स्वीपर्वमें बाइस अध्याय समाप्त । स्रोपर्वमें तेइस अध्याय।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये सा-क्षात नकुलके मामा शल्य धर्म जानने-वाले युधिष्ठिरके हाथसे मर कर पृथ्वीमें पडे हैं। ये मद्र देशके महा बलवान राजा सदा अपनेको तुम्हारे समझते थे, इन्होंने

जयार्थं पाण्डुपुत्राणां तदा तेजोवधः कृतः अहो धिक्पइय शल्यस्य पूर्णचन्द्रसुद्रशनम् । मुखं पद्मपलाञाक्षं काकैराद्ष्यम् वर्णम् 1180 अस्य चामीकराभस्य तप्तकाञ्चनसप्रभा। आस्याद्विनिःसृता जिह्वा भक्ष्यते कृष्णपक्षिभिः॥५॥ युधिष्ठिरेण निहतं शल्यं समितिशोभनम्। रुदत्यः पर्युपासन्ते मद्रराजं क्रलाङ्गनाः 11 \$ (1 एताः सुसूक्ष्मवसना मद्रराजं नरर्षभम्। कोशंत्योध्य समासाय क्षत्रियाः क्षत्रियर्षभम् ॥७॥ श्चाल्यं निपतितं नार्यः परिवार्याभितः स्थिताः । वासिता गृष्ट्यः पङ्के परिमग्नमिव द्विपम् श्चल्यं शरणदं शूरं पश्येमं वृष्णिनन्दन । श्रायानं वीरशयने शरैविंशकलीकृतम् 11 8 11 एष शैलालयो राजा भगदत्तः प्रतापवान् । गजांककाषरः श्रीमान् शेते सुवि निपातितः॥ १०॥ यस्य रुक्ममयी माला शिरस्येषा विराजते। श्वापदैर्भक्ष्यमाणस्य शोभयन्तीव मूर्घजान् ॥ ११ ॥

विजयके लिये कर्णका तेज नाश किया था, आज उसही शल्यके पूरे चन्द्रमाके समान सुन्दर और कमलके समान नेत्र-यक्त मुखको कीवे खा रहे हैं। (१-४)

जयाश अही प्रस्य अस्य अस्य प्राप्त को कार ये का प्राप्त को कार ये प्राप्त को कार ये प्राप्त के लिये का को के से प्राप्त के लिये का को के से प्राप्त के कार के लिये का प्राप्त के का प्राप्त के कार के लिये का प्राप्त के का प्राप्त के का प्राप्त के लिये का प्राप्त के का प्राप्त इसके ग्रुखसे जो सोनेके समान जीम निकल आई है उसे पक्षी खा रहे हैं। युधिष्टिरके हाथसे मरे हुए मद्रराज श्चरपके चारों ओर वैठी हुई स्त्री रो रही हैं। ये उत्तम क्षत्री कुलमें उत्पन्न हुए पत्ला कपडा पहिननेवाली स्त्री पुरुप सिंह क्षत्रिय श्रेष्ठ शल्यको देख रो रही हैं। शुल्यके चारों ओर वैठी स्नी इस प्रकार

रीती हैं, जैसे कीचडमें फसे हाथीके चारी और खडी उसी समयकी व्याई हाथिनी, ये ही श्रह्य शरण आयेकी शरण देते थे, वही वीर शल्य बाणोंसे कटे पडे हैं। (५-९)

हे कृष्ण ! ये पर्वत वासी महा प्रता-पवान श्रीमान राजा मगद्त हाथीका अंक्रश हाथमें लिये हुए पृथ्वीमें पहे हैं। जिसके शिर पर ये सोनेकी माला विराजमान है उसे ये मांस खानेवाले खाय रहे हैं। इस समय राजा मगदत्तके एतेन किल पार्थस्य युद्यासीतसुदारूणम् । रोमहर्षणमत्युत्रं शक्तस्य त्वहिना यथा ॥ १२ ॥ योवयित्वा महावाहुरेप पार्थ वनञ्जयस्। संशयं गर्मीयस्वा च क्रुन्तीयुत्रेण पातितः ॥ १३ ॥ यस्य नास्ति समो लोके शौर्ये वीयें च कश्चन । स एप निहतः शेते भीषमो भीष्मकृदाहवे ॥ १४ ॥ पर्य शान्तनवं कृष्ण शयानं सूर्यवर्चसम्। युगान्त इव कालेन पतितं स्र्यमस्यरात् एष तप्ता रणे राज्य राम्ब्रतापेन वीर्यवास्। नरतृयोंऽस्तमभ्येति तृयोंऽस्तमिव केशव ॥ १६ ॥ शरतस्यगतं भीष्ममृथ्वरेतसमच्युतम्। शयानं वीरशयने पर्य श्रुतियेविते 11 03 11 कर्णिनालीकनाराचैरास्तीर्य शयनोत्तमम् । आविद्य दोते भगवान् स्कन्द्रः दारवर्ण यथा। १८॥ अतृत्रपूर्णं गाङ्गेयित्रिभिर्वाणैः समन्वितम् । उपाघायोपघानारन्यं दत्तं गाण्डीवघन्वना 11 29 11 पालयानः पितुः शास्त्रमृध्वेरेता महायशाः।

ACPROVED A COMPANY OF A COMPANY बहुनके पह इसका चौर युद्ध हुआ था उस युद्रको देखकर बीरोंके रीये खडे होते थे। इन दोनीका ऐसा युद्ध हुआ था, जैसे इन्द्रके सङ्ग इत्राहरका; जन्तमें सहावाह्य मगद्त अर्छनके हाथसे सारे गये अपने बलसे अर्जुनके हृदयमें सन्देह कर दिया था। (१०--१३)

हे इपा! बगद्रें जिसके समान कोई देजस्ती बलवान् और वीर्यवान कोई नहीं है वह भी इस समय मरे पहे हैं। ये नहातेजस्त्री इस समय ऐसे शोमित

गिरे हुए दूर्य। अपने वापह्मी किरणोंसे शबुबोंको तपा कर अब अस्त होना चाहते हैं, उन्होंने जन्म भर अपना बीर्य नष्ट नहीं किया, सो आज बीर शर शब्यापर सो रहे हैं, नार्लाक आदि नाणोंकी शब्यापर सोते हुए भीष्मकी शोभा इस समय ऐसी दीखती है जैसे सरकण्डीके वनमें सोते हुए भगवान् कार्तिकेयकी । वाणीं-की शब्दापर भीष्म सोते हैं, अर्जुनने एक वाणका विकया भी इनकी दिया इन्होंने अपने पिताकी आज्ञासे

एप ज्ञान्तनवः शेते माधवाप्रतिमो युधि धर्मात्मा तात सर्वज्ञः पारादर्थेण निर्णये। अमर्खे इव मर्त्यः सन्नेष प्राणानधारयत् नास्ति युद्धे कृती कश्चिन्न विद्वान पराक्रमी। यत्र ज्ञान्तनवो भीष्मः शेतेऽच निहतः शरैः॥२२॥ खयमेतेन शूरेण पृच्छमानेन पाण्डवैः। धर्मज्ञेनाहवे मृत्युरादिष्टः सत्यवादिना ॥ २३॥ प्रनष्टः कुरुवंशश्च पुनर्धेन समुद्धतः। स गतः कुरुभिः सार्थं महावुद्धिः पराभवम् ॥ २४ ॥ धर्मेषु क्करवः कं तु पुरि प्रक्ष्यन्ति माधव । गते देवव्रते खर्ग देवकल्पे नर्पभे ॥ २५ ॥ अर्जुनस्य विनेतारमाचार्यं सात्यकेस्तथा । तं पदय पतितं द्रोणं क्करूणां गुरुमुत्तमम् अस्रं चतुर्विषं वेद यथैव त्रिदशेश्वरः। भागवो वा महावीर्यस्तथा द्रोणोऽपि माधव ॥ २७॥ यस्य प्रसादाद्वीभत्सुः पाण्डवः कर्म दुष्करम् । चकार स हतः शेते नैनमस्त्राण्यपालयन्

आज शर शब्यापर सोते हैं, इनके समान जगतमें कोई चीर नहीं है, ये धर्मज्ञ सब विद्या जाननेवाले सब विषयोंका निर्णय करनेवाले भीष्म देवतींके समान प्राण घारण कर रहे हैं, इनके समान कोई त्रिद्यमान्, पराक्रमी और धर्मीत्मा कोई नहीं है, सो आज शर शय्यापर सोते हैं, जब पाण्डवींने इनको बुलाकर पूछा था कि आपकी मृत्यु कैसे होगी, त्रव सत्यवादी महात्मा धर्मजाननेवालेने अपनी मृत्यु पहिले ही वता दी थी।

उद्धार किया था, सोई महाबुद्धिमान इस दशाको प्राप्त गए।(१४-२४)

हे कृष्ण ! जब देवतोंके समान भी-ष्म ही खर्गको चले गये तब कौरव लोग हस्तिनापुरमें जाकर क्या करेंगे। हे कृष्ण ! सात्यकीके गुरू और अर्जुन आदि कौरवोंके गुरू द्रोणाचार्य मर पडे हैं। ये महावलवान् परश्चराम और इन्द्रके समान शस्त्रविद्याको जानते थे, इन्हींके प्रतापसे अर्जुनने ऐसे ऐसे घोर कर्म

यं पुरोघाय कुरव आह्वयन्ति सा पाण्डवान् । सोऽयं शस्त्रभृतां श्रेष्ठो द्रोणः शस्त्रैः परिक्षतः॥ २९॥ यस्य निर्देहतः सेनां गतिरग्नेरिवाभवत्। स भूमौ निहतः दोते ज्ञांतार्चिरिव पावकः ॥ ३०॥ धनुर्मुष्टिरशीर्णेश्च हस्तावापश्च माधव। द्रोणस्य निहतस्याजौ दश्यते जीवतो यथा वेदा यसाच चत्वारः सर्वाण्यस्त्राणि केशव । अनपेतानि वै शूराचथैवादौ प्रजापतेः वन्दनाहीविमौ तस्य वन्दिभिर्वन्दितौ शुभौ। गोमायवो विकर्षन्ति पादौ शिष्यशतार्चितौ ॥ ३३ ॥ द्रोणं द्रुपद्युत्रेण निहतं मधुसूद्न । क्रपी क्रपणमन्वास्ते दुःखोपहतचेतना ॥ ४४ ॥ तां पर्य रद्वीमार्तां मुक्तकेशीमधोमुखीम्। हतं पतिसुपासन्तीं द्रोणं शस्त्रभृतां वरम् ॥ ३५ ॥ बाणैभिन्नतनुत्राणं घृष्टसुन्नेन केशव। उपास्ते वै मुधे द्रोणं जिटला ब्रह्मचारिणी 11 35 11 वेतक्रत्ये च यतते कृषी कृपणमातुरा।

हैं, शस्त्रोंने भी उनकी रक्षा नहीं करी। इन्होंके आश्रयसे कौरव लोग पाण्डवों-को युद्ध करनेके लिये ललकारते थे, वेही श्रस्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य आज शस्त्रींसे कटे हुए पृथ्वीमें पडे हैं। जिन्हींने अग्निके समान तेज धारण करके पाण्ड-वोंकी सेनाको असा किया था. वेही द्रोणाचार्य आज बुजती हुई आप्रेके समान मरे हुए पृथ्वीमें पहे हैं। इस समय भी उनके घतुषकी मुठी नहीं खुळी और करहरथीं भी नहीं छुटी, ये अभी भी जीते इएके समान दीखते हैं। ये ब्रह्माके

समान चारों वेद और शस्त्र विद्याकों जानते थे, देखों जिन द्रोणाचार्यके चरणोंमें सैकडों शिष्य प्रणाम करते थे उन्हीं प्रणाम करने योग्य सुन्दर चरणोंको सियार खींचते किरते हैं, ये देखों, धृष्टद्युम्नके हाथसे द्रोणाचार्यके पास दुःखसे मरी हुई कृपी बैठी है, देखों शक्तधारियोंमें श्रेष्ठ अपने पित मरे हुए द्रोणाचार्यके पास बाल खोले नीचा सुख करे रोती हुई कृपी बैठी है, धृष्टद्युम्न के बाणोंसे शरीरका कवच कट गया है अब जटाधारिणी अझचारिणी, सुकु-

क्रिकान क्रिया सार्वे सुकुमारी यज्ञ सिनी ॥ ३०॥ अग्रीनाथाय विधिविच्यां प्रज्ञालय सर्वतः । द्रोणमाथाय गायन्ति त्रीणि सामानि सामगाः ॥३८॥ अर्वेन्ति च चितामेते जिटला ब्रह्मचारिणः । धनुर्भिः शक्तिभिश्चेव रथनीडिश्च माथव ॥ ३९॥ शर्वेश्च विविधेरन्येर्थस्यते भूरितेजसम् । इति द्रोणं समाधाय शंसन्ति च रुद्दित च ॥ ४०॥ सामभिश्चिभिरन्तस्येरनुशंसन्ति च रुद्दित च ॥ ४०॥ सामभिश्चिभिरन्तस्येरनुशंसन्ति च रुद्दित च ॥ ४०॥ सामभिश्चिभिरन्तस्येरनुशंसन्ति च रुद्दित च ॥ ४१॥ अग्राविंशं समाधाय द्रोणं हुत्वा हुताशने ॥ ४१॥ गच्छन्त्यभिमुखा गङ्गां द्रोणशिष्या द्विजातयः । अपसव्यां चितिं कृत्वा पुरस्कृत्व कृतीं च ते ॥ ४२॥ [६७१] इति श्रीमहाभारते जीवर्वण क्रीविकाणपर्वणि गांधारीवचने श्रवीविकाष्यायः ॥२३॥

गान्धार्षुवाच सोमदत्तस्रतं पर्य युयुधानेन पातितम् ।
विद्यमानं विहगैर्षहाभिर्माधवान्तिके ॥१॥
पुत्रशोकाभिसन्तशः सोमदत्तो जनार्द्ग ।
युयुधानं महेष्वासं गईयन्निव दृश्यते ॥२॥
असी हि भूरिश्रवसो माता शोकपरिष्ठता ।
आश्वासयति भतीरं सोमदत्तमनिन्दिता ॥३॥

मारी, यश्चिनी कृपी अपने पितका प्रेत कर्म करनेको कहती हैं, ये जटा-धारी ब्रह्मचारी द्रोणाचार्यके ब्राह्मण शिष्य धनुप शक्ति रथोंके पहिले और अनेक प्रकारके वाणोंसे चिता बना रहे हैं, अब उन्होंने चितामें आग लगाकर द्रोणाचार्यको जला दिया। ये सामवेद जाननेवाले द्रोणाचार्यके शिष्य रो रहे हैं। और अपने गुरुकी प्रशंसा कर रहे हैं, अब ये चिताकी प्रदक्षिणा करके और कृपीको आगे करके गङ्गा स्नानको जाते हैं। (२५-४२) [६७१] स्त्रीपर्वमें तेईस अध्याय समाप्त। स्त्रीपर्वमें चोवीस अध्याय।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये सोम-दत्त पुत्र भूरिश्रवा सात्यकीके हाथसे मरे हुए पडे हैं। देखो अनेक प्रकारके पक्षी इनका मांस खा रहे हैं, ये देखो पुत्रके घोकसे न्याकुल सोमदत्त महाध-तुपधारी सात्यकीकी निन्दा कर रहे हैं, जो निन्दारहित भूरिश्रवाकी माता घोकसे न्याकुल होकर अपने पतिको

दिष्ट्या नैनं महाराज दारुणं भरतक्षयम्। क्ररुसंक्रन्दनं घोरं युगान्तमनुपरुषधि 11811 दिष्ट्या यूपध्वजं पुत्रं वीरं भूरिसहस्रदम् । अनेकक्रतुयज्वानं निहतं नानुपश्यसि 11911 दिष्टया स्तुषाणामाऋन्दे घोरं विलिपतं बहु। न श्रृणोषि महाराज सारसीनामिवार्णवे 11 4 11 एकवस्त्रार्थसंवीताः प्रकीणी सितसूर्धजाः। स्तुषास्ते परिधावन्ति हतापत्या हतेश्वराः 11011 श्वापदैर्भक्ष्यमाणं त्वसहो दिष्ट्या न पर्यास । छिन्नबाहुं नरव्याघमर्जुनेन निपातितम् 1611 शलं विनिहतं संख्ये मृरिश्रवसमेव च। स्तुषाश्च विविधाः सर्वो दिष्ट्या नाचेह पर्यसि ॥९॥ दिष्ट्या तत्काञ्चनं छत्रं यूपकेतोर्भहात्मनः। विनिकीर्णं रथोपस्थे सौमदत्तेन पर्यसि 11 90 11 अमृस्तु सूरिश्रवसो भार्याः सात्यिकना हतम्। परिवार्यानुकोचन्ति भर्तारमसितेक्षणाः एता विलप्य करूणं भर्तृशोकेन कर्शिताः। पतन्त्रभिमुखा भूमौ कृपणं वत केशव 11 22 11

बहुत समझा रही है, कहती हैं, हे महा-राज ! अपने प्रारब्धहीसे इस भयानक कुरुकुल नाशको देखा, अपने प्रारब्धहीसे अनेक यज्ञ करनेवाले अपने पुत्र भृरि-श्रवाकी मृत्यु न देखी, अपने प्रारव्ध-हीसे सारसियोंके समान रोती हुई अपने बहुओंके शब्द नहीं सुनते हैं, महाराज ये आपके बेटेकी बहू एक साडी पहिने, बाल खोले, अनाथ होकर इधर उधर रोती फिरती हैं, अपने प्रारब्धहीसे सि-यारोंसे खाये जाते हुए अर्जुनके वाणसे

हाथ कटे भूरिश्रवाकी नहीं देखते, आप प्रारब्धहीसे राती हुई बहु स्त्रीका शब्द नहीं सुनते । अपने प्रारब्धहीसे महात्मा भृरिश्रवाका शोकका भरा हुवा छत्र रथसे गिरता हुआ न देखा। (१-१०)

ये मुन्दर नेत्रवाली भूरिश्रवाकी स्त्री अपने मरे हुवे पतिके चारों ओर वैठी सोच कर रही है, जो पतिके शोकसे व्याकुल दीन स्वरसे रोती हुई भूरिश्रवा-की स्त्री पृथ्वीमें गिरती हैं। और कहती

<u>| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 1966| 196</u>

वीभत्सुरतिवीभत्सं कर्मेदमकरोत्कथम् । प्रमत्तस्य यदच्छैत्सीद्वाहुं शूरस्य यज्वनः ततः पापतरं कर्म कृतवानिप सालकः। यसात्प्रायोपविष्टस्य प्राहार्षीत्संशितात्मनः ॥ १४ ॥ एको द्वाभ्यां हतः शेषे त्वमधर्मेण धार्मिक। किं नु वक्ष्यति वै सत्सु गोष्टीषु च सभासु च ॥१५॥ अपुण्यमयशस्यं च कमेंदं सात्यकिः स्वयम्। इति यूपध्वजस्यताः स्त्रियः कोशन्ति माघव ॥ १६॥ भार्या यूपध्वजस्यैषा करसम्मितसध्यमा। कृत्वोत्सङ्गे सुजं भर्तुः कृपणं परिदेवति 11 29 11 अयं स इन्ता शूराणां मित्राणामभयप्रदः। प्रदाता गोसहस्राणां क्षत्रियान्तकरः करः 11 86 11 अयं सरसनोत्कर्षी पीनस्तनविमर्देकः। नाभ्युरुजघनस्पर्शी नीचीविस्रंसनः करः 11 28 11 वासुदेवस्य सान्निध्ये पार्थेनाक्किष्टकर्मणा । युध्यतः समरेऽन्येन प्रमत्तस्य निपातितः 11 20 11 किं नु वक्ष्यसि संसत्सु कथासु च जनार्दन। अर्जुनस्य महत्कर्म स्वयं वा स किरीटभृत् इस्रेवं गईचित्वैषा तृष्णीमास्ते वराङ्गना । तामेतामनुशोचन्ति सपत्न्यः स्वामिव स्नुषाम्॥२२॥

जो यज्ञ करनेवाले आपका हाथ छलसे काट लिया। इससे भी अधिक पाप कर्म सात्यकीने किया जो शस्त्रराहित आपका शिर काट लिया है, परन्तु आप एकले को अधर्भसे दो दो मनुष्यने मिलकर मारा, इस यशनाशक अधर्म मरे कर्मको करते सात्यकी समा और महात्मार्वोके बीचमें क्या कहेंगे ? इस प्रकार जो भरिश्रवाकी स्त्री रो रही है. ये

वाकी पटरानी स्त्री अपने पातिका हाथ गोदमें लेकर कहती है कि यदि वीर क्षत्रियोंका नाश करनेवाला, मित्रोंको अमय दान देनेवाला और सहस्रों जी-वोंको दान करनेवाला आपका हाथ वीर अर्जुनने कृष्णके देखते देखते दूसरे के सङ्ग युद्ध करते हुए विना कहे काट दिया, अब ऐसा पाप कर्म करके कृष्ण

<del>9999999999999999999999999</del>

गान्धारराजः शक्कानिवेलवान् सत्यविक्रमः। निहतः सहदेवेन भागिनेयेन मातुलः ॥ २३ ॥ यः पुरा हेमदण्डाभ्यां व्यजनाभ्यां सा वीज्यते । स एव पक्षिभिः पक्षैः शयान उपवीज्यते यः स्वरूपाणि क्रुस्ते शतशोऽथ सहस्रशः। तस्य मायाविनो माया दग्धाः पाण्डवतेजसा ॥२५॥ मायया निकृतिप्रज्ञो जितवान् यो युधिष्ठिरम्। सभायां विपुरुं राज्यं स पुनर्जीवितं जितः ॥ २६॥ शक्तन्ताः शक्तनिं कृष्ण समन्तात्पर्युपासते । कैतवं मम पुत्राणां विनाशायोपशिक्षितम् एतेनैतन्महदूरं प्रसक्तं पाण्डवैः सह। वधाय मम पुत्राणामात्मनः सगणस्य च यथैव मम पुत्राणां लोकाः शस्त्रजिताः प्रभो। एवमस्यापि दुर्बुद्धेर्लीकाः शस्त्रेण वै जिताः कथं च नायं तत्रापि पुत्रानमे आतृभिः सह । विरोधयेहजुशज्ञानरुजुर्भधुसूद्न ॥ ३० ॥ ७०१] इति श्रीमहाभारते० खोपर्वणि स्नोविकापपर्वणि गांधारीवाक्ये चतुर्विशोऽध्याय: ॥ २४ ॥

ये रानी चुप होगई हैं, भृरिश्रवाकी स्त्री सब रोरही हैं। (११-२२)

जो महापराक्रमी शकुनी अपने भानजे सहदेवके हाधसे मरे हुए पहे हैं. पहिले अनेक मनुष्य सोनेके दण्डेवाले पह्नासे हवा करते थे, आज उनको ही कोवे अपने पह्वोंसे हवा कर रहे हैं, जो अपनी मायासे सेकडों सहस्रों रूप बनाता था, उस छलीकी माया सहदेवके वेजसे मस होगई, जिस छलीने समामें युधिष्ठिरको जीता या और उनका सब राज्य है लिया था. वही शक्कनी आज मर

पृथ्वीमें पडा है, जिस छलीने मेरे पुत्रों का नाश करनेहीके लिये छ% सीखा था सोई उस ही छलसे शक्रनीको आज गिद्ध और कैंवे खा रहे हैं, इस ही दुष्टके कारणसे मेरे पुत्र और पाण्डवोंमें वैर हुआ था, इसहीसे मेरे पुत्र और बान्धवोंके सहित मारा गया। जैसे मेरे ·पुत्र शक्तोंसे मरकर स्वर्गको गये हैं, ऐसे ही यह दुईद्धि मरकर स्वर्गको गया।ऐसा नहीं कि यह दुष्टबुद्धि वहां भी कोमल ब्रद्धिवाले मेरे वेटोंमें वैर करादे। २३-३०)

– काम्बोजं पदय दुर्धर्षं काम्बाजास्तरणोचितम् । रायानमृषभस्कन्धं हतं पांसुषु माधव 11 8 11 यस्य क्षतजसन्दिग्धौ वाह चन्दनभूषितौ। अवेक्ष्य करूणं भार्या विलपत्यतिदुः विता 11 9 11 इमौ तौ परिधप्रख्यौ बाह्र शुभतलाङ्गुली। ययोर्विवरमापन्नां न रातिमां पुराऽजहात् 11 3 11 कां गतिं तु गमिष्यामि त्वया हीना जनेश्वर। इतबन्धुरनाथा च वेपन्ती मधुरस्वरा 11811 आतपे क्षाम्यमानानां विविधानामिव स्रजाम । क्कान्तानामपि नारीणां न श्रीर्जहित वै तनुः 11 4 11 श्चानमभितः शूरं कालिङ्गं मधुसूद्व ! पर्य दीर्शागद्यगप्रतिनद्धमहासुजम् 11 4 11 मागधानामधिपतिं जयत्सेनं जनार्दन। आवार्य सर्वतः पत्न्यः प्रस्तृत्यः सुविह्नलाः 11 19 11 आसामायतनेत्राणां सुस्वराणां जनार्दन । मनः श्रुतिहरो नादो मनो मोहयतीव मे 11611 प्रकीणवस्त्राभरणा रुदसः शोककर्शिताः ।

स्तीपर्वमें पंचीस अध्याय।

a -correspondences and the correspondences and the correspondences are also and the correspondences and a -correspondences and a -correspondences are also and a -correspondences and a -correspondences are also are also and a -correspondences are also are also also are also a गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये देखो. द्रशालेकी शब्यापर सोने योग्य, बैलके समान कन्धे वाला महापराऋमी काम्बो-ज देशका राजा मरके धृलमें सोता है। जिसके चन्दन लगने योग्य हाथोंको रुधिरमें भीगे हुए देख उसकी स्त्री रोरही है, उसकी दुःख भरी स्त्री ऐसा कह रही है कि जो सुन्दर उजली अंगुली वाले परिचके समान दढ आपके यही हाथ हैं जिनके संगमें विहार करती

नाथ ! अब मैं आपके विना अनाथ होकर कहां कांपती और रोती फिर्डंगी? इन स्त्रियोंकी शोभा बिलक्कल नष्ट हुई जैसे फूल मालाएँ धूपमें रहनेसे नष्ट होती है। (१-५)

हे कृष्ण! ये देखो सब प्रकार समान सोनेके वाजवन्द पहिने कलिङ्गदेशका वीर राजा मरा पडा है। हे कृष्ण ! ये जयसेन नामक मगधदेशके राजाकी स्ती अपने मरे हुवे पतिके चारों ओर खडी हुई व्याक्तल होकर रोरहीं है। हे कृष्ण!

<del>9999999999999</del>9999999999999999999

द्रोणेन द्रुपदं संख्ये पश्य माधव पातितम्। महाद्विपमिवारण्ये सिंहेन महता हतम् पाञ्चालराज्ञो विमलं पुण्डरीकाक्ष पाण्डुरम् । आतपत्रं समाभाति शरदीव निशाकरः एतास्तु द्रुपदं वृद्धं स्तुषा भार्याश्च दुःखिताः। दध्वा गच्छन्ति पाञ्चालयं राजानमपसब्यतः ॥ १९॥ धृष्टकेतुं महात्मानं चेदिपुङ्गवमङ्गनाः। द्रोणेन निहतं शुरं हरन्ति हृतचेतसः 11 20 11 द्रोणास्त्रसभिहस्यैष विमर्दे मधुसूद्न । महेष्वासो हतः शेते नचा हत इव द्रुमः एष चेदिपतिः श्रुरो धृष्टकेतुर्महारथः। श्रोते विनिहतः संख्ये हत्वा शत्रून् सहस्रशः॥ २२॥ वितुद्यमानं विहगैस्तं भार्याः पर्युपाश्रिताः । चेदिराजं हृषीकेश हतं सबलवान्धवम् ॥ २३ ॥ दाशाईपुत्रजं वीरं शयानं सत्यविक्रमम्। आरोप्याङ्के रुदन्त्येताश्चेदिराजवराङ्गनाः 11 88 11 अस्य पुत्रं हृषीकेश सुवक्त्रं चारुकुण्डलम्।

करते हैं। हे कृष्ण ! जैसे वनमें सिंहसे मरकर मतवाला हाथी मिरता है, ऐसे ही द्रोणाचार्यके बाणोंसे मरे हुए महा-राज द्रुपद पृथ्वीमें पडे हैं। महाराज द्रुपदका कमलके समान सफेद छत्र ऐसा दीखता है, जैसे घरद कालमें चन्द्रमा। दुःखसे मरी वृद्धे राजा द्रुपदकी स्त्री और वेटोंकी बहू राजा द्रुपदकी जलाकर और उनकी चिताकी प्रदक्षिण करके लीटी आती हैं। (१५-१९)

हे कृष्ण ! ये देखो चन्दनीक राजा धृष्टकेतुकी स्त्री अपने वीर पतिको द्रोणाचार्यके नाणोंसे मरा हुआ देख रो रही है। इस हीने महाघनुषघारी द्रोणा-चार्यके नाणोंको नाश किया था, अन्तमें उनहींके नाणोंसे इस प्रकार मारे गये, जैसे नदी बढनेसे दृश्व दृट जाता है, इस ही महारथने युद्धमें सहस्रों वीरोंको मारा था, इस समय उसे पक्षी खारहे हैं, और इसकी स्त्री भी पास बैठी है। जो महापराऋमी चीर तुम्हारी फूफीका पीता था, सो आज नान्धन और सेनाके सहित मारा गया। इसकी स्त्री इसे गोदमें ठेकर रोरही है। हे कुष्ण! ये

<del>eeee 666666666666666666666666666666</del> द्रोणेन समरे पदय निकृत्तं बहुधा शरैः ॥ २५ ॥ पितरं नूनमाजिस्थं युध्यमानं परेः सह। नाजहात्पितरं वीरमचापि मधुसृदन ॥ २६॥ एवं ममापि पुत्रस्य पुत्रः पितरमन्वगात्। द्योंधनं महावाहो लक्ष्मणः परवीरहा 11 20 11 विन्दानुविन्दावावन्यौ पतितौ पश्य माधव। हिमान्ते पुष्पितौ शास्त्रौ मस्ना गलिताविव ॥ २८ ॥ काञ्चनाङ्गद्वर्माणौ वागखड्डधनुर्धरौ। ऋषभपतिरूपाक्षी शयानी विमलस्रजी 11 26 11 अवध्याः पाण्डवाः कृष्ण सर्वे एव त्वया सह । ये मुक्ता द्रोणभीषमाभ्यां कर्णाद्वैकर्तनात्क्वपात् ॥३०॥ दुर्योधनार् द्रोणसुनात्सैन्धवाच जगद्रधात । सोमदत्ताद्विकर्णाच ग्रुराच कृतवर्मणः 11 \$8 11 ये हत्युः शस्त्रवेगेन देवानपि नरर्षभाः। त इमे निहताः संख्ये पदय कालस्य पर्ययम् ॥ ३२॥ नातिभारोऽस्ति दैवस्य ध्रुवं माधव कश्चन।

देखो सुन्दर इण्डल और सुन्दर मुख-वाला धृष्टकेतुका पुत्र द्रोणाचार्यके बाणोंसे कटा हुआ पृथ्वीमें पढा हुआ है। इसने शत्रुवोंसे युद्ध करते हुए अपने पिताको अभीतक नहीं छो॰ डा। (२०—२६)

हे कृष्ण ! ऐसे ही मेरा पोता लक्ष्म-ण मी अपने पिताके सहित खर्मको चला गया। हे कृष्ण ! ये सोनेके बाज्-बन्द और कवच पहिने बाण, खड़ घारण किये, निर्मेल माला पहिने हुए बेलके समान आंख और रूपवाले उजन निवासी बिन्द और अनुविन्द इस प्रकार पृथ्वीमें पढे हैं, जैसे वसंत ऋतुमें वायुसे टूटे हुए कचनारके वृक्ष। हे कृष्ण! युधि-ष्टिर, मीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव और तुमको कोई जगत्में नहीं मार सक्ता। जो भीष्म, द्रोणाचार्य, कर्ण, कृपाचार्य, दुर्योघन, अरबत्थामा, सि-म्युराज जयद्रथ, सोमदच, विकर्ण, और वीर कृतवर्माके हाथसे तुम सब बच गये। (२७—२१)

हे कृष्ण! समयकी गति वडी कठि-न है। जो पुरुषसिंह वीर अनेक वाणोंसे देवता और गन्धवाँको भी मार सकते ये, सोही आज मरकर पृथ्वीमें पढे हैं.

पदिमें निः तदैव निह पदैवाकृतः यदैवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाकृतः यदेवाक्ताऽ तयोहिं दः अचिरेणैव देखोपहत ततः कोपप जगाम शौ। यान्धाप्रवाच पाण्डवा धा उपेक्षिता । यसान्वया पतिशुश्रूप्र कालके लिये कोई कर्म कठिन देखो सब बीर मारे गये। हे कृष्ण समय तुम सन्धि करानेको आ और विना काम सिद्ध हुये ली थे, तब ही मेरे वलवान पुत्रोंक हो चुका था, उसी दिन भीष युद्धिमान विदुरने मुझसे कहाः युद्धमान विदुरने मुझसे कहाः यदिमे निहताः शूराः क्षत्रियैः क्षत्रियर्षभाः ॥ ३३ ॥ तदैव निहताः कृष्ण मम पुत्रास्तरस्विनः। यदैवाकृतकामस्त्वमुपष्ठव्यं गतः प्रनः 11 88 11 शन्तनोश्चेव पुत्रेण प्राज्ञेन विदुरेण च। तदैवोक्ताऽिक मा स्नेहं कुरुव्वात्मस्रुतेब्विति॥ ३५॥ तयोहिं दर्शनं नैतन्मिथ्या भवितुमहित । अचिरेणैव मे पुत्रा भसीभृता जनादेंन 11 35 11 वैशम्पायन उवाच इत्युक्त्वा न्यपतद्भूमौ गान्धारी शोकमूर्छिता । दुःखोपहतविज्ञाना धैर्धमुतस्रुच भारत 11 20 11 ततः कोपपरीताङ्गी पुत्रशोकपरिष्ठता । जगाम शौरिं दोषेण गान्धारी व्यथितेन्द्रिया ॥ ३८ ॥ गान्वार्धुवाच- पाण्डवा घात्तराष्ट्राश्च दग्धाः कृष्ण परस्परम् । उपेक्षिता विनइयन्तस्त्वया कस्माजनार्दन शक्तेन बहुभृत्येन विपुत्ते तिष्ठता वले। उभग्न समर्थेन श्रुतवाक्येन चैव ह 11 80 11 इच्छतोपेक्षितो नाशः क्ररूणां मधुसूदन। यसान्वया महाबाहो फलं तसादवाप्रुहि ા ૪૪ ા पतिशुश्रूपया यन्मे तपा किंचिदुपार्जितम्।

कालके लिये कोई कर्म कठिन नहीं है देखो सब बीर मारे गये। हे कृष्ण! जिस समय तुम सन्धि करानेको आये थे, और विना काम सिद्ध हुये सौट गये थे, तब ही मेरे वलवान पुत्रोंका नाश हो चुका था, उसी दिन भीष्म और बुद्धिमान विदुरने मुझसे कहा था, कि "अब तुम अपने पुत्रोंसे प्रेम मत करो।" उनका ज्ञान झुठा नहीं हुआ, थोडे ही दिनमें मेरे महापराक्रमी पुत्र मसा होगये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,

राजन जनमेजय! ऐसा कहकर गान्धारी धीरजको छोड कर शोकसे व्याक्रल होकर पृथ्वीमें गिर पड़ी। फिर पुत्रोंके बोकसे न्याकल होकर उठी और कोषसे कृष्णको दोप लगाने लगी। (३२-३८) गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! जब कौरव और पाण्डव दोनों परस्पर लडके नष्ट होते थे, तब तुमने उन्हें मना क्यों नहीं किया ? तुमने सबके वचन सुने थें, तुम समर्थ बलवान और बहुत

हिलाविक्या विकास के स्वास के

## अथ श्राद्धपर्व । श्रीमगवानुवान् उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गान्धारि मा च क्षोके मनः क्रथाः। तवैव ह्यपराधेन क्ररवो निधनं गताः 11 8 11 यत्त्वं पुत्रं दुरात्मानमीर्षुमत्यन्तमानिनम्। दुर्योधनं पुरस्कृत्य दुष्कृतं साधु मन्यसे निष्ट्ररं वैरपुरुषं ष्टुद्धानां शासनातिगम्। कथमात्मकृतं दोषं मय्याषातुमिहेच्छासि 11 \$ 11 मृतं वा यदि वा नष्टं योऽतीतमनुकोचित । दुःखेन लभते दुःखं द्वावनथौँ प्रपचते 11811 तपोर्थीयं ब्राह्मणी घत्त गर्भ गौर्वीहारं घावितारं तुरङ्गी। शुद्धा दासं पशुपालं च वैश्या वधार्थीयं क्षत्रिया राजपुत्री॥५॥ वैशम्पायन उवाच तच्छ्रुरुत्वा वास्तुदेवस्य पुनरुक्तं वचोऽप्रियम् । तुष्णीं बभूव गान्धारी शोकव्याक्करलोचना धृतराष्ट्रस्तु राजिंनिंगृद्यावुद्धिजं तमः।

पर्यपृच्छत धर्मज्ञो धर्मराजं युधिष्ठिरम्

मेरे सिवाय देवता और दानव मी नहीं मार सकते। वे परस्पर लडके नष्ट हो जांयगे। श्रीकृष्णके ऐसे वचन सुन पाण्डवोंने घवडाकर अपने जीनेकी आशा छोड दी। (४७-५०) [७५१] स्त्रीपर्वमें पचीस अध्याय समाप्त । स्त्रीविलापपर्वे समाप्त ।

(३) श्राद्धपर्वे । श्रीकृष्ण बोले, हे गान्धारी ! अब तुम उठो शोक मत करो; ये कुरुवंशका नाश तुम्हारे ही अपराधसे हुआ है, तुमने पहिले महाअभिमानी दुरात्मा निष्ठर लडाईके प्यारे और बुढोंकी आज्ञा

स्त्रीपर्वमें छन्त्रीस अध्याय ।

न माननेवाले दुर्योधनको न रोका, अब मुझे दोष क्यों देती हो, जो मरे हुए मतुष्य अथवा नष्ट हुए कामका शोच करता है, उसे कुछ लाम नहीं होता और सदा दु:खहीमें पडा रहता है, ब्राह्मणी तपस्वी, गाय बोझ ले चलने-वाले, घोडी दौडानेवाले, शूद्रा दास, वैदय पशुपालनेवाले और राजपुत्री क्षत्रियाणी मनुष्यको मारनेवाले पुत्रको उत्पन्न करती हैं। श्रीवैशम्पायन सुनि बोले, श्रीकृष्णके दूसरी बार ऐसे कठोर वचन सुनकर गान्धारी शोकसे व्याकुल होकर चुप होगई। (१-६)

11911

में स्टू में पूर्व के प्राप्त के स्टू में पूर्व के स्टू में से में से मारे प्राप्त के से में से मारे प्राप्त के मारे के मारे प्राप्त के मारे के मारे के मारे प्राप्त के मारे जीवतां परिमाणज्ञः सैन्यानायसि पाण्डव। हतानां यदि जानीषे परिमाणं वदस्व मे 11611 युधिष्ठिर उपाच-द्ञायुतानामयुतं सहस्राणि च विंशतिः। कोट्यः षष्टिश्च षट् चैच श्वस्मिन् राजन् मधे हताः॥९॥ अलक्षितानां चीराणां सहस्राणि चतुर्देश । दश चान्यानि राजेन्द्र शतं पष्टिश्र पश्च च 11 80 11 धृतराष्ट्र उवाच-युधिष्टिर गतिं कां ते गताः पुरुषसत्तम । आचक्ष्व मे महावाहो सर्वज्ञो ह्यासि मे मतः ॥ ११ ॥ युधिष्ठिर उवाच- यैर्हुतानि शारीराणि हृष्टैः परमसंयुगे । देवराजसमाँ छोकान् गतास्ते सत्यविकमाः ये त्वहृष्टेन सनसा मर्तव्यामिति भारत। युद्धयमाना हता। संख्ये गन्धर्वैः सह सङ्गताः ॥ १३ ॥ ये च संग्रामसूमिष्ठा याचमानाः पराङ्मुखाः। शस्त्रेण निधनं प्राप्ता गतास्ते ग्रह्मकान्प्रति पालमानाः परैर्ये तु हीयमाना निरायुधाः। हीनिषेवा महात्मानः परानिभम्ना रणे छिचमानाः शितैः शस्त्रैः क्षत्रधर्मपरायणाः । गतास्ते ब्रह्मसद्नं न मेऽत्रास्ति विचारणा 11 84 11

अपनी दुर्बुद्धि दूर करके युधिष्ठिरसे बोले, हे पाण्डव ! तुम युद्धसे बची हुई सेनाकी गिन्ती जानते हो। यदि सरे हुवों की गिन्ती जानते ही तो हमसे कही। युधिष्टिर बोले, हे राजन् ! इस युद्धमें छाछट करोड एक लाख तीस इजार मनुष्य मारे गए, इनके सिवाय जिन वीरोंको कोई नहीं देख सक्ता था, ऐसे चौबीस हजार एकसौ पैसठ मारे गये। महाराज भृतराष्ट्र बोले, प्ररुपश्रेष्ठ प्रधिष्ठिर ! मेरी बुद्धिमें तुम सर्वज्ञ हो, इसलिये हमसे कहो वे वीर कौन कौन गतिको प्राप्त मन ये। (७---११)

Secretare and the secretare and a secretare an महाराज युधिष्टिर गोले, जो इस युद्धमें प्रसन्न होकर मरे हैं वे सब महा-वीर इन्द्रलोकको गये, जो युद्धमें विना प्रसन्न होकर युद्ध करते करते भरे हैं वे गन्धर्व लोकको गए, जो भागते और प्राणदान मांगते हुये युद्धमें शक्कसे मारे गये, वे गुह्यक लोकका गये, जो गिरे हुए शस्त्रहीन लजासे भरे युद्धकी

ये त्वत्र निहता राजन्नन्तरायोधनं प्रति। यथा कथाश्चित्युरुवास्ते गतास्तूत्तरान् कुरून् धृतराष्ट्र उवाच – केन ज्ञानवलेनैवं पुत्र पदयसि सिद्धवत् । तन्मे वद महाबाही श्रोतव्यं यदि वै मया युधिष्ठिर उवाच- निदेशाद्भवतः पूर्वं वने विवरता मया। तीर्थयात्राप्रसङ्गेन संप्राप्तोऽयम्स्यहः 11 28 11 देवर्षिलीमको दष्टस्ततः पाप्तोऽसम्पनुसमृतिम्। दिव्यं चक्षरपि प्राप्तं ज्ञानयोगेन वै पुरा ध्तराष्ट्र उवाच - अनाथानां जनानां च सनाथानां च भारत। कचित्तेषां शरीराणि धक्ष्यसे विधिपूर्वकम् न येषामस्ति संस्कर्ता न च येऽत्राहिताग्रयः। वयं च कस्य क्रयीमा बहुत्वात्तात कर्मणाम् ॥ २२ ॥ यान्सुपर्णाश्च गृश्राश्च विकर्षन्ति सतस्ततः। तेषां तु कर्मणा लोका भविष्यन्ति युधिष्ठिर ॥ २३॥ वैश्वम्पायन उवाच-एवमुक्तो महाराज क्रुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः। आदिदेश सुधर्माणं घीम्यं सूतं च सञ्जयम् ॥ २४॥ विदुरं च महावुद्धिं युयुत्सुं चैव कौरवम्।

मुख दिये वीर क्षत्री धर्मसे मरे हैं, वे नि।सन्देह ब्रह्मलोकका गए, जो डरोंके भीतर मारे गए उनका जन्म उत्तर क्रस्टेशमें होगा। (१२--१७)

राजा धृतराष्ट्र बोले, हे पुत्र ! तुम कौनसे ज्ञानके बलसे सिद्धके समान उन्हें देख रहे हो। महाराज युधिष्ठिर बोले. हे राजन् ! में जब आपकी आज्ञासे वनमें घुमता था, तब तीर्थवात्राके समय देवर्षि लोमश मेरे पास आये थे. उन्हींकी कुपा और योगसे यह शक्ति होगई है। महाराज धतराष्ट्र बोले, हे

ଅବକେଟ କେଟେ ଓ ଅଟନ୍ୟ ଉପକେଷ୍ଟରଙ୍କ କରେଉପକେଷ୍ଟର୍ଗର ଜଣେଗରେ ଉପକରେ ଅନ୍ତର୍ଜଣ କରେ ଅନ୍ତର୍ଜଣ ଅନ୍ତର ଅନ युधिष्ठिर ! अब तुम विधिपूर्वक अनाथ और सनाथ श्वत्रियोंके शरीर जलावोगे ना ? जिनका संस्कार करनेवाला कोई नहीं है और जो आहितापि नहीं हैं एसे ही बहुत हैं। जिन्हें गिद्ध और सियार खींच रहे हैं, उनकी गति कर्मके अनु-सार होवे। (१८-२३)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महा-राज । धृतराष्ट्रकी ऐसी आज्ञा सुन क्रन्तिपुत्र युधिष्ठिरने दुर्योधनके पुरोहित सुधर्मी, अपने पुरोहित घौम्य, सञ्जय, हन्द्रसेनसुलांश्रेव मुलात सुतांश्र सेवदाः ॥ २५ सवन्तः कारयन्त्वेषां प्रेतकार्याण्यशेषतः ॥ २६ शासनाद्धर्मराजस्य क्ष्तचा सुत्रश्र सङ्ग्राः ॥ २६ शासनाद्धर्मराजस्य क्षता सुत्रश्र सङ्ग्राः ॥ २७ शासनाद्धर्मराजस्य क्षता सुत्रश्र सङ्ग्राः ॥ २७ शासनाद्धर्मराजस्य क्षता सुत्रश्र सङ्ग्राः ॥ २७ वन्द्वनग्रुकाष्ठानि तथा कालीयकान्युत ॥ २० समाहृत्य महाहोणि दारूणां चेव सञ्चयान ॥ २० समाहृत्य महाहोणि दारूणां चेव सञ्चयान ॥ २० विताः कृत्वा प्रयत्नेन यथा सुख्यान्नराधिपान् ॥ २० विताः कृत्वा प्रयत्नेन यथा सुख्यान्नराधिपान् ॥ ३० विताः कृत्वा प्रयत्नेन याजानमिमान्युं च भारत ॥ ३० व्यव्यां श्रालं च राजानं भिमान्युं च पार्थिवम् ॥ ३० व्यव्यां श्रालं सेमधन्यां च सुख्यां श्राताधिकान् ॥ ३० व्यव्यां स्त्राताधिकान् ॥ ३० व्यव्यां स्त्रात्राचिकान् ॥ ३० व्यव्यां स्त्राचिकान् ॥ ३० व्यव्यां स्त्राचिकान् ॥ ३० वित्राचिकां विराद्ध्यां श्राताधिकान् ॥ ३० वित्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राचिकां ॥ ॥ ३० वित्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राचिकां ॥ ॥ ३० वित्राचां स्त्राच्यां स्त्राचिकां ॥ ॥ ३० वित्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राचिकां । ॥ ३० वित्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राच्यां ॥ ३० वित्राच्यां स्त्राच्यां स्त्राच ॥ ३१ ॥ दौ:बासिन रुक्ष्मणं च भृष्टकेतुं च पार्थिवम् ॥ ३२ ॥ 11 33 (1 11 34 11

और श्रम्नोंकी चिता बनाकर, सावधान होकर, शास्त्रमें लिखी विधिके अनुसार सव राजोंको क्रमसे फूका। सौ भाइयोंके सहित राजा दुर्योधन, श्रव्य, सूरिश्रवा, जयद्रथ, अभिमन्यु, सुदर्शन, लक्ष्मण, राजा धृष्टकेतु, बृहद्दल, स्रोमद्त्त, सैकडॉ सुझय, राजा क्षेमधन्त्रा, विराट, द्रुपद,

कर्ण वैकर्तनं चैव सहयुत्रममर्पणम्। केकयांश्र महेष्वासांस्त्रिगताश्च महारथान 11 38 11 घटोत्कचं राक्षसेन्द्रं वक्षमातरमेव च। अलम्बुषं राक्षसेन्द्रं जलसन्धं च पार्थिवम् 11 89 11 एतांश्चान्यांश्च सुबहून्पार्थवांश्च सहस्रशः। घृतघाराहुतैदींहै। यावकै। समदाहयन् ॥ ई८ () पितृमेघाश्च केषाश्चित्प्रवर्तन्त महात्मनाम्। सामभिश्चाप्यगायनत तेऽन्वशोचन्त चापरैः साम्रामुचां च नादेन स्त्रीणां च रुदितखनः।। कदमलं सर्वभूतानां निशायां समप्यत 118011 ते विधूमाः प्रदीप्ताश्च दीष्यमानाश्च पावकाः। नभसीवान्वदृश्यन्त ग्रहास्तन्वभ्रसंवृताः 1) 88 (1 ये चाष्यनाथास्तत्रासन्नानादेशसमागताः। तांश्र सर्वान्समानाय्य राज्ञीन्कृत्वा सहस्रशः॥ ४२॥ चित्वा दारुभिरव्यग्रैः प्रभूतैः खेहपाचितैः। दाहयामास तान्सर्वान्विदुरो राजशासनात्॥ ४३॥ कारियत्वा कियास्तेषां क्रक्राजो युधिष्ठिरः। घृतराष्ट्रं पुरस्कृत्य गङ्गामभिमुखोऽगमत् ॥ ४४ ॥ [७९५] इति श्रीमद्राभारते० श्राद्धपर्वणि कुरूणामीर्ध्वदेहिके पहुविशोऽध्याय: ॥ २६ ॥

उत्तमौजा,कौश्रल्य,द्रौपदीके पुत्र,शक्तनी, अचल, वृपक, राजा भगदत्त, पुत्रोंके सिहत कर्ण, महाधनुपधारी कैकेय, राक्षसराज घटोत्कच, वकासुरका माई अलम्बुप और जलसिन्धु आदि सहसों राजोंको घीके धारासे जलती हुई आग्नमें फूक दिया, किसी महात्माका पिताके समान कर्म किया, बाह्मण साम और ऋगवेदकी ऋचा पढने लगे। उस रा-त्रीमें सियोंके रोनेके शब्दसे मिला हुआ वेदका शब्द भी मयानक हुआ, वे धूंआरहित जलती हुई चिता आका-शतक दिखाई देने लगी, और जो अनेक देशोंसे आये हुए अनाथ क्षत्री वहां मरे हुए पडे थे, विदुरने राजाकी आजासे उन सकते इकहा करके चिताओं में घी डालकर जला दिया। इस प्रकार राजा सुधिष्ठिर उनको फूककर राजा धृतराष्ट्र-को आगे करके गङ्गाको चले। (२७-४४) श्वामारत। [३ श्रावपर्ष

विश्वम्पायन उवाचने समासाय गङ्गां तु शिवां पुण्यजलोचिताम् ।

हिंदीं च प्रसन्नां च महास्त्यां महावलाम् ॥१॥

भृषणान्युत्तरीयाणि चेष्टनान्यवमुच्य च ॥ २॥

पुत्राणामार्थकाणां च पतीनां च कुरुित्रयः।

उदकं चित्ररे सर्वा रुद्रयो भृशा दुःखिताः ॥ ३॥

सुद्रह्मां चापि घर्मज्ञाः प्रचुकुः सिललिकियाः।

उदके कियमाणे तु वीराणां वीरपिनिभः ॥४॥

सुपतीर्थाभवद्गां भृयो विष्रससार च ॥

तन्महोदधिसङ्गां निरानन्दमनुत्सवम् ॥५॥

वीरपलिभिराक्तीण गंगातीरमञ्चोभतः।

ततः कुन्ती महाराज सहसा चोककिर्तिता ॥६॥

वीरपलिभिराक्तीण गंगातीरमञ्चोभतः।

ततः कुन्ती महाराज सहसा चोककिर्तिता ॥६॥

वीरपलिभिराक्तीण गंगातीरमञ्चोभतः।

यस वीरो महेद्वासो रथयूथपप्रथपः ॥७॥

अर्जुनेन जितः संख्ये वीरलक्षणलितः।

यं स्तपुत्रं मन्यव्वं रोध्यमिति पाण्डवाः ॥८॥

यो च्यराजचम्मध्ये दिवाकर इव प्रभुः।

प्रस्तपुध्यत वः सर्वान्युरा या सपदानुगान् ॥९॥

दुर्योधनवलं सर्व यः प्रकर्पम् व्यरोचता।

किवर्षे सत्ताहत अप्याव।

श्रीवैष्ठण्याच मृति वोले, हे राजन् वनमेवयं । वसमय जोकसे व्याक्त रोतीं हुई कुन्ती धीरे धीरे व्यर्भको अर्जुनने मारहाला, जिसको त्या को गाराधापुत्र जीर सत्तुत्र जानते वेत्रले स्वान वमन्य स्वान्युरा पाराधापुत्र जीर सत्तुत्र जानते वेत्रले सामा वमन्य स्वान्य स्वा

दीखने लगा, वीरींकी स्त्रियोंसे

यस्य नास्ति समो वीर्थे पृथिव्यायपि पार्थिवः ॥१०॥ योऽचुणीत यशः श्ररः प्राणरिष सदा सवि। कर्णस्य सत्यसङ्घस्य संग्रामेष्वपलायिनः क्ररुध्वमुदकं तस्य भ्रातुरक्लिष्टकर्मणः। स हि वः पूर्वजो आता भास्करान्मय्यजायत ॥ १२ ॥ क्रण्डली कवची शूरो दिवाकरसमप्रभः। श्रुत्वा तु पाण्डवाः सर्वे मातुर्वेचनमप्रियम् कर्णमेवात्रशोचन्तो भूयः क्लान्ततराऽभवत्। ततः स पुरुषव्याघः कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः 11 88 11 उवाच मातरं वीरो निःश्वसन्निव पन्नगः। यः शरोर्मिध्वेजावर्ती महासुजमहाग्रहः 11 89 11 तलशब्दानुनदितो महारथमहाहदः। यस्येषुपातमासाच नान्यस्तिष्ठेद्धनञ्जयात कथं पुत्रो भवलाः स देवगर्भः पुराऽभवत् । यस्य बाह्यतापेन तापिताः सर्वतो वयम् तमग्रिमिव वस्त्रेण कथं छादितवस्यसि।

सब पाण्डवेंसि लडता था, जो दुर्योध-नका सेनापति था, जिसके समान जग-तमें कोई राजा बलवान नहीं था, जो कभी युद्धको छोडकर नहीं भागता था, जो जगत्में यशको प्राणोंसे भी अधिक प्यारा मानता था, वह कणे तुम्हारा बढा माई था। पहिले सूर्यके तेजसे वही सूर्य समान तेजस्वी कवच और कुण्डल धारण किये मेरे गर्भसे उत्पन्न हुआ था, इसलिये तुम लोग उसे भी जल दो।(६-१३)

ुअपनी माताके ऐसे कठोर वचन

कुल होगये। तब पुरुषसिंह युधिष्ठिर सांपके समान लम्बा खांस लेकर अपनी मातासे बोले. ये बाणरूपी तरङ्ग ध्वजारूपी वडी वडी तरङ्ग, वडे वडे हाथरूपी ग्राहतालीके शब्दरूपी शब्द और रथ-रूपी भौरसे युक्त कर्णरूपी समुद्र पहिले तम्हारे देवरूपी गर्भसे कैसे उत्पन्न हुए थे, जिसके वाणोंको अर्जुनके सिवाय और कोई नहीं सह सक्ता था, जिसके बाहबलसे हमलोग सदा डरते रहते थे, जिसके बाहुबलसे धृतराष्ट्रके पुत्र राज्य करते थे, उस अग्निरूपी वीर्यको तुमने

यस्य बाहुवलं नित्यं घार्तराष्ट्रैरुपासितम् ॥ १८ ॥ उपासितं यथाऽसाभिर्वलं गाण्डीवधन्वनः। भूमिपानां च सर्वेषां वलं वलवतां वरः 11 99 11 नान्यं ज्ञन्तीसुतात्कर्णादगृहाद्रधिनां रधी। स नः प्रथमजो भ्राता सर्वशस्त्रभृतां वरः 11 30 11 असृत तं भवत्यग्रे कथमद्भतविक्रमम्। अहो भवत्या मंत्रस्य गृहनेन वर्य हताः 11 28 11 निधनेन हि कर्णस्य पीडितास्तु सवान्धवाः। अभिमन्योर्विनाशेन द्रौपदेयवधेन च ॥ २२ ॥ पाश्चालानां विनादोन कुरूणां पतनेन च। ततः शतगुणं दुःखिमदं मामस्प्रशङ्गश्रम् ॥ २३ ॥ कर्णमेवातुशोचामि दह्याम्यग्नाविवाहितः। नेह सा किंचिद्रपाप्यं भवेद्िप दिवि स्थितम् ॥ २४॥ न चेदं वैशसं घोरं कौरवान्तकरं भवेत्। एवं विरुप्य वहुरुं घर्मराजो युधिष्ठिरः 11 29 11 व्यरुद्च्छन्नकै राजंश्रकारास्योदकं प्रभु।। ततो विनेद्दः सहसा श्चियस्ताः खलु सर्वशः॥ २६॥ अभितो या स्थितास्तत्र तसिन्नद्दककर्मणि। तत आनाययामास कर्णस्य सपरिच्छदाः 11 29 11 स्त्रियः कुरूपनिधीमान् भ्रातुः प्रेम्णा युधिष्ठिरः।

बार्णोंको महारथ कर्णके सिवाय और कोई राजा नहीं सह सक्ता था, यह सब शस जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हम लोगोंके वडे भाई थे, उस महा बलवानको तुम-ने पहिले कैसे उत्पन्न किया था, तुमने यह कथा आज तक हम लोगोंसे नहीं कही, इसलिये हमारा नाश होगया। कणें, अभिमन्यु द्रौपदीके पांचों पुत्र

दुःख हुआ है और सब दुःखसे सौ गुना यह दुःख होगया। इस समय हम कर्णके गोकसे ऐसे न्याकुल होगये हैं जैसे कोई अग्निसे जलता है, यदि हम पहिले इस बातको जानते,तो यह कुरुकु-लका नाश न होता। (१३-२५)

धर्मराज युधिष्ठिरने इस प्रकार धीरे धीरे रो। कर कर्णको जल दिया। फिर राजा युधिष्ठिरने कर्णकी सब स्त्रियोंको

श्वान स ताभिः सह धर्मात्मा पेतकृत्यमनन्तरम् ॥ २८॥ चकार विधिवद्धीमान्धर्मराजी युधिष्ठिरः। पापेनासौ मया श्रेष्ठो भ्राता ज्ञातिर्निपातितः ॥ २९॥ अतो मनासि यद्भुद्धं स्त्रीणां तन्न भविष्यति। इत्युक्त्वा स तु गङ्गाया उत्तताराक्कलेन्द्रियः ) भ्रातृभिः सहितः सर्वेर्गङ्गातीरसुपेयिवान् ॥ ३० ॥ [ ८२५ ]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्यां खीपर्वणि स्वीविकापपर्वणि

कर्णगृदुज्ञत्वकथने सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

समास्मिदं छीपर्वे । भतः परं शांतिपर्व भविष्यति ।

तस्यायमाद्यः श्लोकः । वैशम्पायन उवाच-कृतोदकास्ते सुद्धदां सर्वेषां पाण्डुनन्दनाः । विदुरो धृतराष्ट्रश्च सर्वोश्च भरतस्त्रियः

बुलाकर माईके ओरसे उनका सब कर्म किया। फिर बोले कि "इस कुन्तीकी गुप्त-ता के कारण इसने अपने वहे माई कर्ण को मार डाला, इस लिये इम शाप देते हैं कि स्त्रियों के मनमें इसके बाद कोई बात ग्रप्त न रहेगी।"

कहकर सब माईयोंके समेत महाराज युधिष्ठिर व्याकुल होकर गङ्गासे निकले और तटपर बैठे । (२५-३०) [८६५]

खीपर्व समाप्त ।

| ree33333333333333333333333333333333333 | 999999999999999999999                          |
|----------------------------------------|------------------------------------------------|
|                                        |                                                |
|                                        |                                                |
| आदिनः                                  | महाभारत ।  =================================== |
| रेमादीगाड                              | (Mindred)                                      |
| ् जाादेतव                              | 2905                                           |
| र समापव<br>= <u>-</u> -                | २७६२                                           |
| श्वनपव<br>०                            | ११८९२                                          |
| ४ विराटपर्व                            | २२६२                                           |
| ५ उद्योगपर्व                           | ६५००                                           |
| ६ भीष्मपर्वे                           | . ५८७०                                         |
| ७ द्रोणपर्व                            | ९६४२                                           |
| ८ कर्णपर्व                             | ५०१४                                           |
| ९ शल्यपर्व                             | ३७३८                                           |
| १० सौप्तिकपर्व                         | ८०३                                            |
| ११ स्त्रीपर्व                          | ८२५                                            |
| सर्व                                   | योग ५८०९९                                      |
|                                        | 10-11                                          |
|                                        |                                                |
|                                        | ,                                              |
|                                        | ·                                              |
|                                        | •                                              |
|                                        |                                                |
|                                        |                                                |
| <del>}</del>                           | 1999999999999                                  |
|                                        |                                                |

## श्रीपर्वकी विषयसूची।

अध्याय

विषय

वृष्ठ

अध्याय

विषय

पृष्ठ

(१) जलमदानिक पर्व।

१ जनमेजयके पूछनेपर वैश्वम्पाय-नके द्वारा धृतराष्ट्रका विलाप वर्णन और सञ्जयका यथायोग्य वार्ती कहके उन्हें धीरज देना। ३

२ धृतराष्ट्र को विदुरका धीरज देना। ९

३-७ धृतराष्ट्रका विदुरके निकट तत्वकथा सुननेकी इच्छा तथा विदुरके द्वारा तत्त्वज्ञानकी कथाका वर्णन । १६ ◆ ८ धृतराष्ट्रके शोकित होनेपर वेद-च्यास सुनिका दैनोपाष्ट्यान कहके उनका शोक द्र करना।

९ विदुरका फिर धतराष्ट् को धीरज देके उनका शोक दूर करना २७

१० धतराष्ट्रका गान्धारी प्रभृति रोती हुई स्त्रियोंको सङ्ग लेकर भरे हुए पुत्र पौत्रादिके प्रेतकार्य निमानेके लिये बाहन पर चढके नगरसे बाहिर हो-ना। ३७

११ कृपाचार्य, कृतवमी और अश्व-त्थामाको धृतराष्ट्र तथा गान्धारीसे भेंट होनी और रात्रिके संमय शिविरमें सोये हुए पाश्चालादि वीरोंके मारनेका दृता-न्त कहके उनके समीपसे प्रस्थान करना । ३९

१२ युधिष्ठिरादिका धतराष्ट्रके समी-प जाके उनसे मिछना और धतराष्ट्रके द्वारा छोइमय भीमका विनाशादि। ४२

१३ कृष्णके वचनसे धृतराष्ट्रका क्रोष ग्रान्त होना । ४५

१४ गान्घारीको व्यासदेवका उपदेश। ४८

१५ सीमसेनसे गान्धारीकी वार्चा५१ गान्धारीकी कोघदृष्टिसे युधिष्ठिरका कुनख होना, गान्धारीका पाण्डवोंको धीरज देना, द्रौपदी, कुन्ती और गा-न्धारीके मिलन समयमें परस्पर विलाप करना और दिन्यदृष्टिसे गान्धारीका युद्धभूमि देखना

(२) स्त्रीविलापपर्व ।

'n

१६ घृतराष्ट्रका राजरानियोंको सङ्ग लेकर युद्धभूमि देखनेके लिये जाना, राज रानियोंका रोदन तथा मुर्चिछत होना යුට පුරු පුරු පුරු පුරු පුරුව පුර ආ අප පුරුව और श्रीकृष्णको उनकी दुईशा दिखाके गान्धारीका विलाप करना तथा आभि-मन्युको मरा हुआ देखके उत्तराका वि-49 लाप । १७-२५ क्रोधसे आर्च गान्धारीका कृष्णको शाप देना और कृष्णका उसे अनुमोदन करना । ६४ ३ श्राद्धपर्व । २६ कृष्णका गान्धारीकी निन्दा करना, धृतराष्ट्रके पूछनेपर युधिष्टिरका

; ; भरी हुई सेनाकी गिनती बताना और स्वर्भ विशेषमें गये हुए वीरोंका वृत्तान्त कहना तथा युद्धमें मरे हुए पुरुषोंका दाह करना । २७ मरे हुए पृरुषोंका तर्पण, कर्णका तर्पण करनेके निमित्त क्रन्तीके द्वारा पाण्डवोंको कर्णका परिचय मिलना।१०२ युधिष्ठिरका विलाप पूर्वक कर्णका करना, और त्तर्पण स्री समाप्ति । १०२

